"आगरा घराना"

["राग गायन के क्षेत्र में आगरा घरानें की समग्र विशेषताओं का पर्यालोचन"]

अखिल भारतीय संगोष्ठी - 22-23 फरवरी 2001 - गायन विभाग

इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय - खैरागढ़-छत्तीसगढ़-491 881

निर्देशिका एवं संपादिका

डॉ. वीणा विश्वरूप

- संगोष्ठी के विशेषज्ञ -

पं. श्री कृष्ण बबनराव हलदनकर

पं. कुमार मुखर्जी

- हमारे प्रायोजक -

दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर

डॉ. अरूण बांगरे

श्रीमती रश्मि शुक्ला

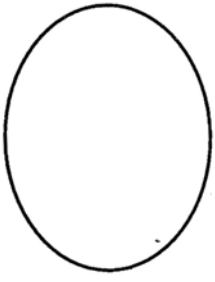

श्रीमती नीलिमा किलाचंद

BVP-1744
15/11/17
5-2897
4/8.

BVP CHECKED
DEC 2017

सुस्वराः संतु सर्वेऽपि सुस्वराः संतु सर्वेऽपि सुस्वराः संतु सर्वेऽपि

"आगरा घराना"

(राग गायन के क्षेत्र में आगरा घराने की समग्र विशेषताओं का पर्यालोचन)

अखिल भारतीय संगोष्ठी :22-23 फरवरी 2001 - गायन विभाग
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,खैरागढ़,छत्तीसगढ़-491881

निर्देशिका एवं संपादिका :
डॉ. सौ. वीणा विश्वरूप
गायन विभाग

सुस्वराः संतु सर्वेऽपि सुस्वराः संतु सर्वेऽपि सुस्वराः संतु सर्वेऽपि

© समस्त अधिकार इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,खैरागढ़ के आधीन
प्रकाशक : गायन विभाग,
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,खैरागढ़ (छ.ग.)

संपादक :
डॉ. वीणा विश्वरूप

मुद्रक :
अनुरूप प्रिंटिंग शॉप,खैरागढ़

प्रथम संस्करण - 2002 (200) प्रतियाँ

मूल्य : 150 रू. (ऑडियो कैसेट सहित)

प्राप्ति स्थान :
कुल सचिव,
इं.क.सं.वि.वि.,खैरागढ़ (छ.ग.)
पिन - 491881

वित्तीय सहयोग : पब्लिकेशन ग्रांट
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग,नई दिल्ली

मुख पृष्ठ (दाहिने से बांये)
प्रो.टी..उन्नीकृष्णन,पं. कुमार मुखर्जी,श्री कृष्ण (बबनराव) हलदनकर,डॉ.प्रो. इंद्राणी चक्रवर्ती, डॉ. वीणा विश्वरूप.
ग्रन्थ का पृष्ठ भाग (ऊपर से नीचे)
प्रो.च.ल.दास,श्री बाला साहब होले,डॉ.अरूण कशालकर,पं. रामनाथ सिंह,श्री नवल किशोर,डॉ. गंगाधर तैलंग,डॉ. अरूण बांगरे,पं. कामता प्रसाद त्रिपाठी,डॉ. ए.सी. चौबे,डॉ. हिमांशु विश्वरूप.

भारत की एकता एवं सौहार्द्र के प्रतीक
संगीत मार्तण्ड **भास्कर बुवा बखले**

आफताब-ए-मौसिकी **उस्ताद फ़ैयाज खाँ**
एवं
आगरा घराने के तपस्वियों को
सादर समर्पित

अनुक्रमणिका :

1.	संपादकीय	5-9
2.	संदेश :	10-14
	महामहिम राज्यपाल महोदय छत्तीसगढ़ प्रदेश, माननीया कुलपति, इं.क.सं.वि.वि., खैरागढ़ संगीत संकाय अध्यक्ष, विभागाध्यक्ष, आदरणीय विधायक, खैरागढ़, आदरणीय अध्यक्ष, नगर पंचायत, खैरागढ़, निर्देशक, दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर	
3.	प्रास्ताविक व्याख्यान	15-20
4.	उद्घाटन सत्र- मुख्य अतिथि उद्बोधन (पं.कुमार मुखर्जी)	21-27
5.	उद्घाटन सत्र- अध्यक्षीय उद्बोधन	27-29
6.	पंडित श्रीकृष्ण बबनराव हलदनकर (राग सौंदर्य ; आगरा घराने के परिप्रेक्ष्य में)	32-57
7.	पंडित कुमार मुखर्जी (आगरा घराने के उस्तादों के संस्मरण एवं गायन के नमूने)	58-65
8.	प्रो. चंद्रकांत लाल दास (आगरा घराने के दो उस्ताद : उ. फैयाज खाँ, उ. शराफत हुसैन खाँ)	66-78
9.	डॉ. गंगाधर तैलंग (आगरा एवं ग्वालियर- अंतर्संबंध)	79-84
10.	डॉ. अरूण कशालकर (उस्ताद विलायत हुसैन खाँ एक संगीतानुभव)	85-87
11.	डॉ. श्रीमती सुमति मुटाटकर (श्रीकृष्ण रातंजनकर)	88-92
12.	डॉ. प्रो. अमरेश चंद्र चौबे (पं.वि.ना.भातखण्डे और आगरा घराना)	93-96
13.	प्रो. वसंत रानडे (बड़ौदा में आगरा घराने का प्रचार, वर्तमान स्थिति)	97-99
14.	डॉ. हिमांशु विश्वरूप ('सजन पिया' उस्ताद खादिम हुसैन खाँ)	100-107
15.	डॉ. भालचंद्र पंचाक्षरी (आगरा घराने के विभिन्न गायक)	108-111
16.	डॉ. वीणा विश्वरूप (आगरा घराने का उद्गम, विकास एवं शिष्य परम्परा)	112-124
17.	श्रीमती अपर्णा चक्रवर्ती (मेरे गुरू- उ.बशीर खाँ)	125-127
18.	पंडित तुलसीराम देवांगन (आगरा घराना-स्वानुभव)	128
19.	पंडित बटुक दिवान (उ. विलायत हुसैन खाँ)	129-130
20.	समापन समारोह मुख्य अतिथि उद्बोधन	131-133
21.	पर्यवेक्षकों का मन्तव्य	
	1. डॉ.प्रो.राधेश्याम जायसवाल	134
	2. श्री बाला साहेब होले	134
	3. प्रो. आचार्य कामता प्रसाद त्रिपाठी	135
	4. डॉ. अनिल बिहारी ब्यौहार	136-137
	5. श्रीमती शैला गोवर्धन	137
	6. पं. रामनाथ सिंह	138
	7. श्री नमन दत्त	138,139
	8. श्री प्रदीप मोघे	139
	9. श्री प्रवीण उद्धव	139
	10. डॉ. महेश मिश्रा	140
	11. श्री उदय सिंह	141
	12. श्री सतीश इंदुरकर	141
22	कुछ महत्वपूर्ण छायाचित्र एवं सूची	142-152

संपादकीय

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग,नई दिल्ली की अन असाईन्ड ग्रांट की योजना के अंतर्गत गायन विभाग के द्वारा दिनांक 21-22 फरवरी 2001 को आगरा घराना राष्ट्रीय विचार संगोष्ठी का सफल आयोजन संपन्न हुआ। विषय था ''राग गायन के क्षेत्र में आगरा घराने की समग्र विशेषताओं का पर्यालोचन''यह संगोष्ठी इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,खैरागढ़, छत्तीसगढ़,एवं दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र,नागपुर महाराष्ट्र के संयुक्त तत्वावधान में संपन्न हुई। उक्त सेमीनार का संपूर्ण विवरण,शोधपत्र,सोदाहरण व्याख्यान एवं चर्चा का शब्दश: लेखन प्रस्तुत ग्रंथ में दिया जा रहा है। उल्लेखनीय है कि इसमें सम्मिलित सोदाहरण व्याख्यानों के प्रायोगिक अंशों को ऑडियो कैसेट के माध्यम सहित ग्रंथ के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रंथ संगीत अथवा घरानों से जुड़े हुए तथा सामान्य रसिक, सभी के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, यह आशा है।

सेमीनार में आगरा घराने के सर्वोच्च प्रतिनिधि दो विषय विशेषज्ञ पं. श्रीकृष्ण बबनराव हलदनकर (मुंबई) एवं पं. कुमार मुखर्जी (कोलकता) मुख्य आकर्षण के केन्द्र थे। संगीत के प्रति विशाल दृष्टि रखने वाले ऐसे विद्वान कलाकारों का एक साथ एक मंच पर आकर दिया गया वक्तव्य उनके लगभग सात दशकों के अनुभवों का मधुर निचोड़ था। जो लोग अपरिहार्य कारणवश उक्त सेमीनार में नहीं आ सके थे, उन्हें यह ग्रंथ सेमीनार में उपस्थित होने का लाभ प्रदान करेगा। इतना ही नहीं इस ग्रंथ में उन आलेखों को भी सम्मिलित किया गया है जिसे पढ़ने हेतु स्वयं लेखक उपस्थित नहीं हो सके थे।

आगरा घराने पर ही सेमीनार के आयोजन के पीछे के कारणों को प्रास्ताविक व्याख्यान में दिया गया है। पं. श्रीकृष्ण हलदनकर ने राग प्रस्तुति का विशिष्ट सौंदर्य उदाहरण सहित प्रतिपादित किया है। आगरा घराने के संबंध में भ्रांत धारणाओं के निराकरण के साथ-साथ वर्तमान एवं भविष्य के विद्यार्थियो के लिए आगरा घराने के अद्वितीय तत्व उन्होने सर्वसम्मुख रखे। पं. कुमार मुखर्जी साहब ने आगरा घराने के उस्तादों के गायन के नमूने सुनाकर इस घराने की श्रुत प्रतिष्ठा को प्रतिस्थापित किया। साथ ही निष्पक्ष भाव से किया गया अन्वेषण सभी के लिए अनुकरणीय रहा।

विषय विशेषज्ञों के आलेख एवं सोदाहरण व्याख्यान के अतिरिक्त प्रो. चंद्रकांत लाल दास (पटना) का आलेख है। फैयाज खाँ एवं शराफत हुसैन खाँ के गायन एवं व्यक्तित्व को नजदीक से अनुभव कर उन्होने दोनों का योगदान रेखांकित किया है। उनके द्वारा प्रदत्त रिकार्ड्स की दीर्घ सूची प्रशंसनीय है। संगीत जगत के लोग दास साहब को टॉकी-वॉकी म्यूज़िकल इनसाइक्लोपीडिया कहते हैं। उनके पिचहत्तर वर्षों के अनुभवों से भरा तिथिवार, क्रमबद्ध डाटा आप कभी भी स्वयं उनसे सुन सकते हैं।

सातवें दशक को पार करने वाले डॉ. गंगाधर राव तैलंग (कानपुर) शैक्षणिक गतिविधियों से दीर्घ समय से जुड़े हुए हैं। अपने पिता श्री नानू भैया तैलंगजी के मार्गदर्शन में प्रॉयोगिक संगीत एवं ठाकुर जयदेव सिंह जी (ज्येष्ठ गुरू बंधु) के मार्गदर्शन में ग्वालियर घराने पर शोधकार्य आपने संपन्न किया है। ग्वालियर व आगरा घराने का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन सेमीनार के अनुरूप है।डॉ. अरूण कशालकर (मुंबई) का विलायत हुसैन खाँ पर लिखा गया आलेख प्रायोगिक पक्ष के प्रदर्शन सहित प्रस्तुत हुआ है। विलायत हुसैन खाँ साहब के शिष्य पं. गजानन राव जोशी आपके गुरू है। इस कारण तथा पं. बबनराव हलदनकर के गहन मार्गदर्शन के कारण आपका आलेख सरस बन पड़ा है।डॉ. अमरेश चंद्र चौबे विश्वविद्यालय शिक्षण पद्धति एवं प्रकारान्तर से पं. विष्णुनारायण भातखण्डे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। आपका आगरा घराने के प्रति आत्मिक लगाव होना स्वाभाविक है। आपका आलेख पं. भातखण्डे, आगरा घराना एवं संगीत संस्था सभी के लिए श्रद्धांजलि स्वरूप है। प्रो. वसंत रानाडे वर्तमान समय में बड़ौदा में निवास कर रहे हैं। बड़ौदा शहर संगीत प्रेमी राजा सयाजी राव गायकवाड़ एवं फैयाज खाँ के कारण सुप्रसिद्ध है। आगरा घराने की वर्तमान स्थिति बड़ौदा के परिपेक्ष्य में चिंतनीय है। फैयाज खाँ को समर्पित उनकी रागदरबारी कानडा की बंदिश ग्रंथ में शोभायमान है।

डॉ. हिमांशु विश्वरूप ने आगरा घराने के स्तंभ गायक उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहब के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को सुंदर रीति से चित्रित किया है। आगरा घराने के पं. हलदनकर जी के शिष्य के रूप में इस गायकी से उनका प्रत्यक्ष संबंध है एवं अनुभव के आधार पर लिखा गखा उनका आलेख ग्रंथ में अनुकूल जान पड़ता है।श्रीमती डॉ. सुमति मुटाटकर (नई दिल्ली) ने पं. श्री कृष्ण रातंजनकर को अपना आलेख समर्पित किया है। वे उनकी शिष्या अर्थात आगरा घराने की

प्रतिनिधि भी हैं। एक सुशिक्षित एवं सुलझी हुई दृष्टि से निष्पक्ष गुरू चरित्र लेखन अपने आप में कठिन काम है। डॉ. सुमतिजी को इसमें पूर्ण सफलता मिली है।

पं. बटुक दिवान (मुंबई) को उस्ताद विलायत हुसैन खाँ के दीर्घ सत्संग का लाभ मिला। उनके 90 वर्षों के अनुभवों को सहज भाव से उनके आलेख उस्तादों के उस्ताद में अनुभव किया जा सकता है। उस्ताद बशीर ख़ाँ की शिष्या श्रीमती अपर्णा चक्रवर्ती ने अपने गुरू एवं आगरा घराने को अनुभवजन्य तथ्यों के आधार पर लेखनीबद्ध किया है। डॉ. बी.सी. पंचाक्षरी आगरा घराने के विभिन्न गायकों से परिचित हैं। इन सभी का संक्षिप्त परिचय ग्रंथ के अनुकुल है। आगरा घराने का उद्गम विकास एवं इसके विभिन्न साधकों का परिचय मेरे द्वारा आलेख में दिया गया है। आलेख के साथ वाग्गेयकारों की, महिला गायिकाओं की, गुरू शिष्य परंपरा की सूची पाठकों को लाभान्वित करेगी ऐसी आशा है। पं. तुलसीराम देवांगन (रायपुर) ने गायन एवं वायलिन की शिक्षा आगरा घराने के गुरूजनों से भी प्राप्त की है। उनका संक्षिप्त वक्तव्य उद्बोधक है एवं उनकी लगभग सात दशकों की संगीत सेवा को हमारी प्रणामांजलि के रूप में है।

सेमीनार का अथ से इति तक तीक्ष्ण दृष्टि से निरीक्षण करने वाले पर्यवेक्षकों की राय को अंत में प्रस्तुत किया गया है। संगीत समालोचक पत्रकार बालासाहेब होले,पं. कामता प्रसाद त्रिपाठी,डॉ. अनिल ब्यौहार,डॉ. महेश मिश्रा,डॉ.आर.एस.जायसवाल इत्यादि के विचार उद्बोधक हैं।

ग्रंथ प्रकाशन कार्य चल ही रहा था कि पाकिस्तानी आतंकवाद के फलस्वरूप घटित दुर्घटना, गोधरा काण्ड की प्रतिक्रिया स्वरूप बड़ौदा में आफताब-ए-मौसिकी उस्ताद फैयाज खाँ साहेब की मूर्ति को नुकसान पहुचाने की दु:खद जानकारी प्राप्त हुई। फैयाज खाँ साहब को न केवल आगरा घराने के न केवल संगीत जगत के बल्कि पूरे देश के संगीत रसिक हार्दिक सम्मान देते हैं। वे हमारे देश के दैदिप्यमान दैवीय नक्षत्र के रूप में धरोहर की तरह थे। अत: आगरा घराना ग्रंथ में इस संबंध में कुछ लिखा जाना प्रासंगिक प्रतीत हो रहा है।

पूरे विश्व में स्वरलय ही एक ऐसी वस्तु है जिसे कोई भाषा,मजहब,भूमि आज तक विभाजित न कर सकी है,न आगे कभी कर सकेगी। संगीत सिद्ध व्यक्ति का सुर से भीगा मीठा बोल हर मजहब के हृदय को आर्द्र

करता है। अत: फैयाज खाँ ही नहीं, समस्त आगरा घराने के कलाकार पूरी दुनिया के हैं। एक महत्वपूर्ण तथ्य उद्घाटित करना भी यहाँ आवश्यक प्रतीत होता है कि आगरा घराने के प्रथम संस्थापक पं. गोपाल नायक तथा उनकी बाद की छ:-सात पीढ़ी के गायक, हिन्दू थे। उन्हीं के वंशज बाद में मुस्लिम दरबार में इस्लाम नामधारी हुए किंतु उनके खानदान में संस्कृत श्लोकों का नियमित पाठ तथा सायंकालीन प्रार्थना इत्यादि आज तक चली आ रही है। स्वयं के हिन्दू पूर्वजों का नाम बताकर आज भी वे सब गौरव का अनुभव करते हैं। आगरा घराने का इतिहास एवं वर्तमान गुरू-शिष्य परम्परा का अवलोकन करने से हम स्पष्ट देखते हैं कि इसमें मुस्लिम गुरू के हिन्दू शिष्य और हिन्दू गुरू के मुस्लिम शिष्य सभी को समान रूप से आदर हैं। अत: बड़ौदा की उक्त दुर्घटना अत्यंत दु:खद है। आगरा घराने के समस्त समर्थक साम्प्रादायिक सौहार्द का प्रतीक मानते हुए फैयाज खाँ साहब की मूर्ति का पुनर्निर्माण करेंगे यह अपील है।

आभार

ग्रंथ प्रकाशन हेतु जिनका सहयोग प्राप्त हुआ उनका स्मरण कृतज्ञतापूर्वक करना मेरा कर्तव्य है। कुलाधिपति महामहिम राज्यपाल महोदय माननीय दिनेश नंदन सहाय के आशीर्वाद, ग्रंथ की शोभा द्विगुणित करते हैं। उन्हें सादर धन्यवाद है। डॉ.प्रो. इंद्राणी चक्रवर्ती कुलपति इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,खैरागढ़ ने मेरी योग्यता पर विश्वास करते हुए मुझे कठिन कार्य सौंपा और पूर्ण सहयोग,मार्गदर्शन और उत्साहवर्धन किया। उन्हें मेरे हार्दिक धन्यवाद। डॉ. अरूण बांगरे जी ने दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र के माध्यम से सेमीनार हेतु पूर्ण सहयोग प्रदान किया। उन्हें भी विश्वविद्यालय की ओर से हार्दिक धन्यवाद समर्पित करते हुए हमें प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। ग्रंथ के साथ प्रायोगिक पक्ष को कैसेट के माध्यम से दे पाने में हम समर्थ हुए क्योंकि आगरा घराने की प्रबल समर्थक एवं उस्ताद खादिम हुसैन खाँ की शिष्या श्रीमती निलिमा किलाचन्द (मुंबई)ने हमें आर्थिक सहयोग प्रदान किया। उन्होंने अपने नाम को गोपनीय रखने का निर्देश दिया था लेकिन हमारे कर्तव्यपालन के कारण उसकी अवहेलना हमारी विवशता है । आशा है वे इस हेतु नाराज नहीं होंगी एवं हमारा धन्यवाद ग्रहण करेंगी। संकाय अध्यक्ष एवं ग्रंथ सलाहकार समिति संयोजक प्रोफेसर आर.के.सोनी जी का संदेश ग्रंथ को उपलब्ध हुआ।

वे भी मेरे धन्यवाद को ग्रहण करें। विभागाध्यक्ष प्रो. टी.उन्नीकृष्णन तथा संगीत शास्त्र विभागाध्यक्ष डॉ. राधेश्याम जायसवाल ने हर समस्या के समाधान के लिए मार्ग सुझाया,उन्हें भी मेरा धन्यवाद। श्री काशीनाथ तिवारी सेमीनार समिति के सदस्य के रूप में सदैव मेरी मदद करते रहे। इन्हें भी मेरे हार्दिक धन्यवाद। ग्रंथ में प्रकाशित आलेखों के लेखकगण मेरे निवेदन को मान देते हुए मेरे सहयोग के लिए प्रस्तुत हुए यह मेरा परम सौभाग्य है एवं पर्यवेक्षकों ने भी पूरा सहयोग देते हुए केवल आलोचना ही नहीं मार्गदर्शन का भी कार्य करके मुझे ऋणी बनाया है। वि.वि. कार्यकारिणी सभा सदस्य एवं मनोनित चिकित्सक , संगीत रसिक डॉ.महेश मिश्रा ने आमंत्रित बुजुर्ग कलाकारों के लिए विशेष रूप से ध्यान रखकर कार्यक्रम हेतु मदद की। उन्हे हार्दिक धन्यवाद। कार्यालयीन प्रक्रिया के लिए ग्रंथपाल श्री रमेश पटेल,श्री रघु गौरमाटी,श्री प्रकाश सिंह, श्री पी.एन.मिश्रा,श्री हेमंत सिंह (श्रवण कक्ष),श्री कमल महोबे इत्यादि सभी का सहयोग भूला पाना संभव नहीं। अनुरुप प्रिंटिंग शॉप के श्री योगेन्द्र कर्महे जी ने ग्रंथ को अधिकाधिक सुंदर बनाने हेतु पूर्ण मनोयोग से कार्य किया। इस कारण समय से ग्रंथ आपके हाथों में है। ताज महल की अनुकृति के लिये छात्र सुजीत प्रियदर्शन एवं आगरा घराने के गायकों के पोट्रेट के लिये हरे राम दास एवं साथियों को आशीर्वाद ।गायन विभाग एवं विश्वविद्यालय के समस्त सदस्यों की मैं आभारी हूँ जिन्होने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुझे सहयोग प्रदान किया।

सभी पाठकों को यह ग्रन्थ लाभप्रद होगा इस विश्वास के साथ ....

[redacted] 2002 **डॉ. वीणा विश्वरूप**

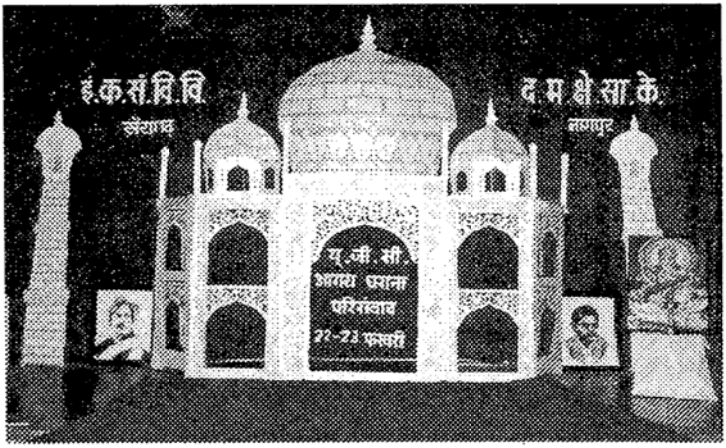

संदेश

प्रसन्नता का विषय है कि इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ द्वारा ''राग गायन के आगरा घराने पर केन्द्रित राष्ट्रीय सेमीनार'' के सफल आयोजन के पश्चात् सेमीनार के आलेखों और अन्य विवरणों का पुस्तक के रूप में प्रकाशन किया जा रहा है।

पुस्तक के प्रकाशन के लिये मेरी शुभकामनाएँ ...

(दिनेश नंदन सहाय)
राज्यपाल छत्तीसगढ़ शासन

आशीर्वाद

डॉ. प्रो. इंद्राणी चक्रवर्ती
कुलपति

अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि गायन विभाग की ओर से पूर्व आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी के शोधपत्रों व आलेखों को पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। संगीत के क्षेत्र में शोध, कार्य शिविर (workshop),संगोष्ठी (seminar),शैक्षणिक गतिविधियाँ अन्य विषयों की तरह ही संभव है एवं आवश्यक है यह जनसामान्य की समझ में अब धीरे-धीरे आ रहा है। सेमीनार में विचारों तथा चिन्तन का आदान-प्रदान होता है। उन्हें एकत्र कर पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने पर प्रतिभागियों के अतिरिक्त संगीत व अन्य विषयों के ज्ञानपिपासुओं का उपकार ही होता है। संगीत के इतिहास में ''आगरा घराना'' बहुत प्रसिद्ध एवं सुपरिचित घराना है। आगरा घराने के गायन का इतिहास तत्कालीन आगरा, फतहपुर सीकरी,दिल्ली, ग्वालियर आदि दरबारों के सामाजिक-राजनैतिक,उत्थान-पतन की दासतां के इतिहास को भी समेटे हुए है। जन-जन में व्याप्त संगीत,राजाओं नवाबों का प्रिय बनकर किस प्रकार अपने विभिन्न रूपों से खिलता रहा,यह एक रोचक विषय है।

आगरा घराने के विभिन्न कलाकारों का योगदान, वर्तमान समय में इस घराने के प्रतिनिधि कलाकार एवं गायकी का प्रत्यक्ष दर्शन इस संगोष्ठी के द्वारा संभव हो सका है। अत: पुस्तक के रूप में शोधपत्रों एवं विचारों का प्रकाशन उन्हें भी अवश्य लाभान्वित करेगा जो सेमीनार में उपस्थित न हो पाए थे।

मेरी ओर से गायन विभाग के सभी सदस्य, विशेषकर डॉ. वीणा विश्वरूप अभिनंदन के पात्र हैं। उनके विशेष लगन से इतने कम समय में यह कार्य पूर्ण हो पाया है। गायन विभाग भविष्य में भी ऐसा प्रयास करता रहे,यह शुभाशंसा है।इति अलम्

(इन्द्राणी चक्रवर्ती)

संदेश

गायन विभाग में आयोजित ''आगरा घराना'' सेमीनार के शोधपत्रों का ग्रन्थरूप में प्रकाशन होना एक सुखद ऐतिहासिक महत्व की घटना है। ख्याल, ध्रुपद, ठुमरी के घराने अपनी शैलीगत विशेषता के लिये तो जाने ही जाते हैं, साथ में इनके विभिन्न प्रतिभा सम्पन्न साधक कलाकारों ने जो साधना की है और घराने एवं संगीत जगत को जो योगदान दिया है, वह जानना समझना भी अपने आप में ज्ञानवर्धक होता है। आगरा घराने के लब्ध-प्रतिष्ठ वर्तमान के प्रतिनिधि स्तंभ गायक पंडित कुमार मुखर्जी एवं पंडित श्रीकृष्ण हलदनकर अपने साथ 75 वर्षों के अनुभवों का जो खजाना लेकर सेमीनार में आए थे, उन्होंने खुले दिल से लुटाया। उन्हीं सच्चे मोतियों को अब ग्रन्थ रूपी माला में पिरोया जा रहा है, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। गायन विभाग तथा सेमीनार में पधारे घराने के कलाकार व विद्वान दोनों ही अभिनंदन के पात्र हैं। संस्थागत शिक्षा व घरानेदार शिक्षा पद्धतियों के गुणों के मेल के लिये ऐसे सेमीनार के अवसर एवं उनका ग्रन्थ रूपान्तरण बड़ा ही लाभदायक होता है। इस ग्रन्थ का उन्हें भी अत्यन्त लाभ मिलेगा जो इस सेमीनार में किसी कारणवश सम्मिलित न हो सके। ग्रन्थ के साथ ऑडियो कैसेट का रिलीज होना भी अपने आप में बड़ा लाभप्रद है। संगीत एक प्रयोग विधा है। लेखन के द्वारा इसका लिपिकरण संभव नहीं। कैसेट इस कमी को पूरा करेगी। आगरा घराने के इतिहास, गायकी, बंदिशें, विशिष्टता तथा अन्य से भेद को इस सेमीनार ने सुंदर रीति से समझाया है। विद्यार्थीगण, शिक्षक, सामान्य रसिक श्रोता आदि सभी इससे लाभान्वित हुए। यूजीसी के उद्देश्य में इसी तरह वि.वि. का प्रत्येक विभाग सफलता के लिए प्रयास करेगा, यह शुभेच्छा है तथा गायन विभाग एवं सम्पादक को बधाई।

(प्रो. रूपकुमार सोनी)
संकाय अध्यक्ष

संदेश

डॉ.अरूण बांगरे

यह अत्यंत हर्ष की बात है कि इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ द्वारा आगरा घराने पर केन्द्रित एक पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है। केन्द्र के सहयोग से दिनांक 22-23 फरवरी 2001 को राग गायन के आगरा घराने पर केन्द्रित राष्ट्रीय सेमीनार में संपूर्ण भारतवर्ष से आमंत्रित जिन विख्यात संगीताचार्यों ने अपने-अपने शोधपूर्ण आलेख पढ़े थे उनका संकलन कर एवं अन्य महत्वपूर्ण विवरणों के आधार पर यह पुस्तक प्रकाशित हो रही है।भारतीय संगीत के विकास एवं प्रचार एवं आगरा घराने ने अपना अद्वितीय योगदान दिया है। आगरा घराने की गायकी अत्यंत शुद्ध स्वरूप की होकर उसमें श्रेष्ठ कलामूल्य का एवं कला कौशल्य का बाहुल्य है। हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक आगरा घराने के उजागर पक्षों के अतिरिक्त कई ऐसे पहलुओं को भी खोलेगा जो अबतक संगीत प्रेमियों की दृष्टि से ओझल रहे हैं। विश्वविद्यालय की रचनात्मक गतिविधियों के अंतर्गत इस पुस्तक का प्रकाशन एक स्तरीय प्रयास सिद्ध होगा। मैं इस पुस्तक की सार्थकता एवं विमोचन समारोह की सफलता के लिये अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

भवदीय

नागपुर
दिनांक : 29.01.2002

डॉ.अरूण बांगरे
उप निदेशक, द.म.क्षे.सां.केन्द्र, नागपुर

संदेश

21-22 फरवरी 2001 को आयोजित आगरा घराना सेमीनार,गायन विभाग की एक बड़ी उपलब्धि मानी जाती रही। पर उसके भी आगे का एक और कदम है , इसके आलेखों का ग्रन्थ प्रकाशन । विश्वविद्यालय की वर्तमान समय की स्थितियाँ देखते हुए ऐसे सार्थक अवसर प्राय: बिरले ही होते हैं। डॉ. वीणा विश्वरूप के निर्देशन एवं सम्पादन में सम्पन्न प्रस्तुत प्रयास, सफलता की ऊँचाईयों को स्पर्श करे,यह मेरी सदिच्छा है।

प्रो. टी.उन्नीकृष्णन
विभागाध्यक्ष,गायन

प्रास्ताविक-व्याख्यान

(आगरा घराने पर आधृत द्विदिवसीय अखिल भारतीय परिसंवाद)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली की योजना के अन्तर्गत जब विश्वविद्यालय प्रशासन द्वारा हमारे विभाग से परिसंवाद हेतु प्रस्ताव माँगे गए, तब अनेक विषय हमारे समक्ष आए। अनेकश: विचार करने के उपरान्त हमने घराने पर परिसंवाद का निर्णय लिया जिसके पीछे अनेक दृढ़ तर्क संगत कारण हमें स्पष्ट दिखाई देते हैं। आज युग का प्रभाव प्रत्येक क्षेत्र में परिलक्षित है। संगीत भी उससे अछूता नहीं रह पाया है। आज की बन्धन रहित स्वतंत्रता की वृत्ति ने राग की प्रवृत्ति को प्रभावित किया है। संगीत का शैलीगत आभामण्डल शनै: शनै: संकीर्ण हो रहा है। ऐसे समय में घरानों पर विचार करना अपरिहार्य हो गया है।

ऐसा कौन सा विशिष्ट तत्व है जिसके कारण परंपरागत घरानों का अस्तित्व अपने पूरे सौन्दर्य के साथ आज तक अक्षुण्ण है, यह एक महत्वपूर्ण विचारणीय बिन्दु है। घरानों की शैलीगत परंपरा को यथावत् बनाए रखना है अथवा पारंपरिक घरानों की अच्छाइयों को समेटकर मिश्रित करना है, इस पर विद्वज्जन विचार पूर्वक निर्णय करेंगे, परंतु घरानों का महत्व तो संगीत जगत के समस्त मनीषियों को निर्विवाद रूप से मान्य रहा है। आज भी प्रसिद्ध गायक स्वयं को किसी घराने से जोड़ने के लिए उत्सुक रहते हैं, अथवा जोड़कर गौरवान्वित अनुभव करते हैं। इससे घरानों की महत्ता व्यक्त होती है।

सम्प्रति संचार माध्यमों की बाढ़ में घरानों के मौलिक सौन्दर्य की सुरक्षा के समक्ष एक जटिल प्रश्न उपस्थित है। किसी परंपरागत शैली को आत्मसात् करने के लिये उसका समुचित शिक्षण, चिन्तन, मनन और श्रवण आदि आवश्यक है। किसी भी घराने की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति चिरकालिक तपस्या की परिणति होती है। सुयोग्य गुरू के अभाव में मीडिया से प्राप्त विविध शैलियों को सुनकर संगीत के विद्यार्थी भ्रमित हो सकते हैं। निरंकुश अनुकरण, लाभ के लोभ को हानि में परिवर्तित कर सकता है। अत: कठोर एवं क्रमिक तपस्या से निर्मित घरानों के दिव्य सौन्दर्य को सुरक्षित रखना हम सभी का कर्त्तव्य है।

हिन्दुस्तानी राग संगीत में ध्रुपद तथा ख्याल के अनेक घराने पुराने समय से चले आ रहे हैं। इनमें से ख्याल के दो-तीन घराने विशेष रूप से पुरानी परंपरा की शैली को अक्षुण्ण रखने में सफल माने जाते हैं। इन पर एवं अन्य सभी घरानों

पर क्रमश: परिसंवाद किये जा सकते हैं एवं कराए भी जाने चाहिये। इस श्रृंखला का आरंभ सम्प्रति आगरा घराने से हो रहा है। छत्तीसगढ़ बनने के बाद प्रथम राष्ट्रीय परिसंवाद, आप सभी के सहयोग से शुभ मंगलमय होगा ऐसी आंशा है।

विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में विभिन्न घरानों के परिचय एवं विशेषताओं का अध्ययन अपेक्षित है। प्रस्तुत परिसंवाद से उन्हें यह प्रत्यक्ष जानने समझने का एवं गुणों का अंगीकार करने का सहज अवसर मिलेगा। विद्यार्थियों के साथ ही शिक्षक वर्ग भी इसका लाभ उठाएंगे एवं विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करने में इसका उपयोग करेंगे। चिरकाल तक घरानों की पृथक पहचान बनी रहे, एतदर्थ इस प्रकार के परिसंवाद आवश्यक है। क्योंकि भारतीय संस्कृति की पहचान ''राग संगीत'' की शैली का अस्तित्व इस पर निर्भर है। वादी, संवादी, अनुवादी एवं विवादी स्वर मिलकर जिस प्रकार से राग की अवतारणा करते हैं, उसी प्रकार चतुर्विध चर्चा से परिसंवाद निष्पन्न होता है। इस वाचिक अनुष्ठान से ''वादे वादे जायते तत्व बोध:'' की उक्ति चरितार्थ होगी। आप सभी सुधिजनों के मार्गदर्शन से संगीत जगत् लाभान्वित होगा ऐसा विश्वास है।

आगरा घरानें पर परिसंवाद किये जाने हेतु अनेकानेक कारण हमारे समक्ष स्वत: ही उपस्थित हुए हैं।

(1) इस घराने की प्राचीनता, सुदृढ़, विशिष्ट परंपरा सर्वविदित है। यह भी सुसंयोग है कि हमारा विश्वविद्यालय उसके प्रारंभ काल से ही आगरा घराने से जुड़ा रहा। हमारे प्रथम उपकुलपति पं. श्रीकृष्ण रातंजनकर आगरा घराने के उस्ताद फैयाज़ खाँ के शिष्य थे। उनके पश्चात् डॉ. प्र. चिंचोरे, डॉ. एम.आर. गौतम भी आगरा घराने के हैं। हमारे विश्वविद्यालय के प्रो. डॉ. ए.सी. चौबे, श्री व. रानाडे आगरा घराने के ही हैं। इस घराने के अनेक कलाकार, विद्वान, अनुसरणकर्ता समय-समय पर विश्वविद्यालय में आमंत्रित हुए है जिससे इस घराने की खूबियों को बहुत सुंदर रीति से समझने का सभी विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को सुअवसर मिला है। इनमें पं. ध्रुवतारा जोशी, पं. गजाननराव जोशी, पं.के.जी.गिंडे, पं. एस.सी.आर.भट्ट, पं. विमल मुखर्जी, पं. बी.आर. देवधर,पं. के.सी.मेहता, श्रीमती दीपाली नाग, डॉ. जयदेवसिंह जी आदि के साथ सबसे प्रमुख रहे हैं-पं.श्रीकृष्ण हलदनकर।

आज हिन्दुस्तानी संगीत के लिये बनी समस्त संगीत शिक्षण संस्थाएँ पं.वि.ना.भातखण्डेजी की चिरऋणी हैं। क्योंकि उनके कारण ही राग संगीत जनजन तक पहुँचा और उसे सीखने का सुअवसर मिला। ऐसे दूरदर्शी विद्वान पं. भातखण्डेजी एर्वाधिक महत्व ''आगरा घराने'' को देते थे। वे चाहते तो अपने शिष्य रातंजनकरजी को किसी भी घराने के उस्ताद के पास एडव्हांस्ड ट्रेनिंग के लिये भेज सकते थे। परंतु उन्होने काफी प्रयत्न पूर्वक उस्ताद फैयाज़ खाँ के पास ही उन्हें सीखने हेतु प्रबन्ध किया। क्योंकि वे आगरा घराने की उच्चस्तरीय सौन्दर्यपूर्ण, वैविध्यपूर्ण एवं सिस्टमेटिक पद्धति को जानते एवं मानते थे। अत: संगीत संस्थाएँ पं. भातखण्डेजी के साथ-साथ प्रकारान्तर से आगरा घराने की भी ऋणी है।

आपको यह जानकर सुखद आश्चर्य होगा कि आगरा घराने के संगीतज्ञों ने 1931 में ही एक संस्था बनाकर तथा उसके लिये विधिवत् पाठ्यक्रम निर्मित करके संगीत शिक्षण देने की योजना बनाई थी। यद्यपि कुछ कठिनाईयों के कारण यह कार्य पूर्ण न हो सका परंतु संस्थागत शिक्षण पद्धति एवं गुरूकुल के मधुर मिश्रण का बीजारोपण उसी समय हुआ था। अत: एक संगीत शिक्षण संस्था होने के नाते यह विश्वविद्यालय इस परिसंवाद के माध्यम से आगरा घराने के सभी मनीषियों के स्तवन का उपक्रम कर रहा है।

आज लगभग सभी शिक्षण संस्थाओं में प्राथमिक स्तर से उच्च कक्षाओं तक एक बंदिश निर्बाध रूप से गाई जाती है - ''सखी एरी आली पिया बिना'' बहुत कम लोग जानते हैं कि यह बंदिश आगरा घराने की है। उस्ताद अब्दुल्ला खाँ जो नत्थन खाँ के पुत्र एवं उस्ताद विलायत हुसैन खाँ के भाई थे, उन्होंने इसे बनाया तो यह बहुत ही प्रचलित हुई। किसी को इसके रचनाकार का नाम पता नहीं चला क्योंकि इसमें मुद्रा अंकित नहीं थी। बाद में उन्होने ''मनहर पिया'' मुद्रा का उपयोग किया। अन्य घराने जैसे जयपुर, ग्वालियर, किराना, सहसवान आदि के कलामर्मज्ञ आगरा घराने को बहुत सम्मान पूर्वक स्मरण करते हैं। अतरौली घराना तो इसमें घुलामिला सा है। उस्ताद अलादियाखाँ, श्रीमती मोगूबाई कुर्डिकर, श्रीमती केसरबाई, पं. राजाभैया पूँछवाले आदि के अतिरिक्त श्रेष्ठ वाद्य वादक भी इसका महत्व समझते रहें हैं। पं. व्ही.जी.जोग, उस्ताद शमीम अहमद इनमें से ही हैं।

भारत रत्न पं. रविशंकरजी आगरा घराने के उ. खादिम हुसैन खाँ से बहुत

प्रभावित रहे हैं। अपने विराम के क्षणों में उनकी ज्ञान सुरभि का आनंद लेते रहे हैं। उ. खादिम हुसैन खाँ की हीरक जयंती समारोह में स्वयं के खर्चे से सम्मिलित होकर उन्होंने सजनमिलाप संस्था में कार्यक्रम प्रस्तुत किया। आगरा के पंडित भास्कर बुवा बखले के निर्देशन में जो संगीत प्रस्तुत हुआ है वह अद्वितीय बन गया है।

लगभग बीस वर्षों पूर्व लिखी गई मराठी पुस्तक ''घरन्दाज गायकी'' नामक पुस्तक के कारण आगरा घराने के बारे में संगीत जगत की युवापीढ़ी कुछ दिग् भ्रमित हुई थी एवं वयोवृद्ध जानकार एवं कलाकार मर्माहत हुए थे। परंतु सटीक, सतर्क, अनुभवजन्य उत्तरों से युक्त पं. हलदनकरजी द्वारा लिखित पुस्तक 'जुळू पाहणारे दोन तंबोरे'-(राजहंस प्रकाशन/पूना) से आगरा घराने के बारे में लोगों की धारणा बदली है। इतना ही नहीं राग संगीत के सौन्दर्य का अनुभव करने की नई दृष्टि मिली है। इस मराठी पुस्तक को महाराष्ट्र शासन का सर्वश्रेष्ठ वांगमय का पुरस्कार मिलने के कारण संगीत जगत का ध्यान आगरा घराने की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ है। इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद विद्यानिधि प्रकाशन नई दिल्ली से हुआ है एवं अंग्रेजी अनुवाद (पापुलर प्रकाशन,मुम्बई)भी आज उपलब्ध है।

आगरा घराने की रसात्मक अनुभूति गहन, उच्चस्तरीय होने के कारण तुलनात्मक दृष्टि से अधिक श्रमसाध्य है। अधिक धैर्य और अधिक परिश्रम के साथ-साथ अधिक सुसंस्कृत प्रतिभा की इसमें स्वाभाविक आवश्यकता है।

आज युग का प्रभाव ऐसा है जिसमें त्वरित व सुगम लाभ की ओर पूरी पीढ़ी अंधी दौड़ लगा रही है। ऐसी स्थिति के कारण यद्यपि अन्य घरानों की अपेक्षा आगरा घराने के समक्ष कठिनता अवश्य उपस्थित हुई, पर इस घराने के सच्चे प्रतिनिधि व प्रशंसक इस घराने का महत्व संगीत जगत के समक्ष पुन: प्रतिष्ठित करने में सफल हुए हैं। इनमें से दो बुजुर्ग गुणी विद्वान गायक यहाँ उपस्थित हैं यह हमारा परम् सौभाग्य है। पं. कुमार मुखर्जी एवं पं. हलदनकर हमारे आयोजन की शोभा द्विगुणित कर रहे हैं और यह विश्वविद्यालय के लिये गरिमामय क्षण है।

संगीत जगत के भावी कर्णधार, विद्यार्थियों के समक्ष आगरा घराने के संपूर्ण वैशिष्ट्य, सप्रमाण, सप्रयोग, प्रस्तुत करने का माध्यम परिसंवाद से अधिक अच्छा क्या हो सकता है। जिज्ञासु जन इससे लाभान्वित होंगे। एक घराने को

समझ लें तो दूसरे को जानने में मदद मिलेगी। तुलनात्मक अध्ययन से बौद्धिक विकास होता है। परिसंवाद को ज्ञानसत्र कहा जाता है। आप सभी के सहयोग से यह ज्ञानसत्र/ज्ञानयज्ञ सुफलदायक होगा। परिसंवाद की ऑडियो-विडियो रिकॉर्डिंग भावी पीढ़ी के लिये सुरक्षित रहेगी।

उपर्युक्त बिंदुओं को दृष्टि में रखते हुए आगरा घराने पर यह परिसंवाद परिकल्पित है। पं. कुमार मुखर्जी, पं. श्रीकृष्ण हलदनकर, पं. चन्द्रकान्त लालदास, पं. गंगाधरराव तैलंग प्रो. डॉ. ए.सी. चौबे, डॉ. अरूण कशालकर, श्री नवलकिशोर इस सप्तक का आगमन आयोजन की सफलता का प्रतीक है। परिसंवाद के विद्वान पर्यवेक्षक डॉ. आर.एस.जायसवाल, पं.कामता प्रसाद त्रिपाठी, डॉ. ए.बी.त्यौहार, श्री आर.के. सोनी, श्री बाला साहब होले, डॉ. प्रकाश महाडिक एवं डॉ.हिमांशु विश्वरूप यह सप्तक भी सतर्क दृष्टि से परिसंवाद का सार्थक विश्लेषण कर इसकी आभा बढ़ायेंगे।

परिसंवाद की संरक्षिका एवं कुलपति प्रो. डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती का गायन विभाग पूरे हृदय से स्वागत करता है।

एक बहुत ही महत्वपूर्ण तथ्य आपके समक्ष विशेष रूप से प्रस्तुत करना मैं अपना परम कर्तव्य समझती हूँ। इस परिसंवाद में पधारे हुए प्रत्येक बुजुर्ग, गुणीगायक कलाकार, विद्वान वक्ता, संगीत के लिये तनमन धन से समर्पित हैं। वे सुरीले फलों से लदे ऐसे वृक्ष हैं जों हरी-भरी छाँव देते हैं और फलों को सहज करने के लिए नत हैं। इनकी सरलता, नम्रता देखकर कोई पहचान ही नहीं सकता कि वे कितने महनीय हैं। परंतु हमारा संगीत विश्वविद्यालय और गायन विभाग ऐसे हीरों को पहचानने में कुशल हैं एवं कहीं कोई संदेह आप विद्वजनों की महानता में हमें नहीं है। आप सभी सुधिजन यहाँ न तो, आर्थिक लाभ के लिये आए हैं, न नाम के लिये , न कार्यक्रम देने की महत्वाकांक्षा से या किसी भी स्वार्थ से। यदि कोई इस बात को स्वार्थ समझता है कि ''संगीत के उनके गुरू एवं घराने के बारे में चर्चा होकर वह भावी पीढ़ी तक पहुँचे'' तो समझता रहे। ईश्वर करे ऐसा स्वार्थ सबके मन में आए। संगीत जगत आगरा घराने के मनीषियों के अनुभव सिद्ध तत्वों को ग्रहण करें, उसे शुष्क न होने दे यहीं एक मात्र पवित्रभाव लेकर ये सभी अपनी धरोहर आपको सौंपने आए हैं। आज 70 वर्षों से भी अधिक आयु के ये संगीत के पुजारी थकानभरी कष्टपूर्ण यात्रा करते हुए, खैरागढ़ की असुविधापूर्ण निवास व्यवस्था में रहकर आज जो यहाँ

पधारे हैं उसमें आपकी धन्यता है। निस्वार्थ भाव है। गायन विभाग, विश्वविद्यालय और मेरे ऊपर व्यक्तिगत भी आपके अनन्त उपकारों को भुलाया जाना असंभव है। सारी तकलीफों को अनदेखा कर आप उत्साहपूर्वक हमारी सफलता के स्तंभ बने हैं इससे बढ़कर हमारा सौभाग्य क्या हो सकता है ? आप सबका पूरे हृदय से, पूरी आत्मा से, पूरे म्न से स्वागत है।

डॉ. अरूण बांगरे दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र-नागपुर द्वारा एवं आगरा घराने की समर्थक व प्रशंसक उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहेब की शिष्या श्रीमती नीलिमा किलाचन्द, मुंबई, द्वारा महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया गया। इनका भी स्वागत करते हुए हमें अत्यन्त आनंद हो रहा है। यद्यपि वे किसी कारणवश यहाँ नहीं आ सके हैं पर हम उन्हें स्मरण कर अपने बीच पा रहे हैं।

डॉ. वीणा विश्वरूप
सेमीनार निर्देशक

उ.नत्थन खाँ

उ. विलायत हुसैन खाँ

- उ.अहमद जान थिरकवा,(तबला)शराफत हुसैन,उ.खादिम हुसैन,युनुस हुसैन,यासिन खाँ (सारंगी)

उद्घाटन सत्र :
मुख्य अतिथि का उद्बोधन

पं. कुमार मुखर्जी
कोलकाता

मैडम वाईस चांसलर इन्द्राणीजी, (सेमीनार डायरेक्टर)वीणा जी,उपस्थित गुणीजन। आप लोगों ने उस्ताद रजबअली का नाम सुना होगा। ये किराने घराने के थे एवं बहुत बड़े तनायात थे और बड़े लड़ाकू किस्म के भी थे। तो वे कहते थे कि वृद्ध ब्राह्मण की बात और वृद्ध उस्ताद का गाना सुनना चाहिए। तो वृद्ध मैं हूँ ही,ब्राह्मण भी हूँ। उस्ताद तो मै हूँ नहीं पर दो घरानों का शागिर्द हूँ। इससे ज्यादा कुछ नहीं। मैं पहले ही माफी चाहता हूँ। मैं चार दिनों से बीमार पड़ा हूँ। मेरी घरवाली कह रही थी कि आपका जाना ठीक नहीं, पर मैंने कहा कि नहीं,मैं वचन दे चुका हूँ। तो वृद्ध ब्राह्मण का बात आप सुनेंगे। आशीर्वाद देने के मैं काबिल नहीं हूँ। आजकल के जगाने में आशीर्वाद के भी कोई मूल्य नहीं है। मैं सिर्फ इतना आप लोगों को बताना चाहता हूँ कि मेरी इस गंजी खोपड़ी पर चार गुरूओं के हाथ हैं। हमारे गुरू नंबर वन हैं-मालविका कानन के पिता डॉक्टर रवीन्द्र लाल रॉय,जो कि श्रीकृष्ण रातंजनकर के शिष्य थे और संगीत विशारद थे जब उस जमाने में मॅरिस कॉलेज स्टार्ट हुआ था। मेरे गुरू नंबर दो हैं - पद्मभूषण उस्ताद मुश्ताक हुसैन खाँ ऑफ रामपुर। मैं उनका गंडाबन्ध शागिर्द हूँ। वो ग्वालियर गाते थे। मगर उनका भी संबंध आगरे घराने के बहुत करीब था क्योंकि पुत्तन खाँ और महबूब खाँ दरसपिया उनके सगे मामू लगते थे। दरसपिया के कुछ गाने जैसे **जोग** राग का ''पीहरवा को बिरमाए'' सारी दुनिया गलत गाती है। उसे मुश्ताक अली खाँ सुनाते थे जैसी उन्होंने पाई थी। मैं इस वक्त सुना नहीं पा रहा हूँ, बाद में कोशिश करूंगा।इसमें दो निषाद लगते हैं। आगरे घराने में डायरेक्ट तालीम लेने मैं तभी गया,जब मैंने उस्ताद फ़ैयाजखाँ का गाना सुना। उस्ताद फ़ैयाजखाँ का गाना सुनने के बाद उस वक्त जो फीलिंग हुई,वह ये हुई कि यह इस दुनिया की चीज नहीं। फ़ैयाजखाँ के रेकार्ड सुनने से कुछ पता नहीं चलता। वो रिकार्ड्स प्रीइलेक्ट्रॉनिक समय के हैं। उसमें उनकी आवाज ही नहीं मिलती। मैं आपको बताता हूँ; गुलाम रसूल खाँ का किस्सा। वे फ़ैयाज खाँ के भांजे थे। उन्होने सारी जिंदगी उनके साथ पेटी बजाई। फ़ैयाजखाँ भी उनकी बहुत इज्जत करते थे। वे कादरी बेगम यानी उनकी मौसी के लड़के थे और कालेखाँ सरसपिया के बेटे थे। वे उस जमाने के मैट्रिक थे,अंग्रेजी जानते थे।

तो गुलाम रसूल खाँ को मैंने बुढ़ापे के फ़ैयाजखाँ का रेकार्ड सुनाया। तो सुनकर वे खूब हँसने लगे,बोले कि ये फ़ैयाजखाँ का गाना है? जिंदगी भर मैंने उनके साथ बजाया ,क्या तुम मुझे समझाओगे कि ये किसका गाना है ? तो मैं क्या बताऊँ ? इस पीढ़ी (जनरेशन) के लोगों को पता ही नहीं चला कि फ़ैयाजखाँ क्या थे ? अब्दुल करीम खाँ के बारे मैं मालूम पड़ा क्योंकि उनके लगभग 30 रेकार्ड्स हैं। चूंकि उनकी आवाज पतली थी, हाई फ्रिक्वेंसी थी इस कारण उनका रिकार्ड ठीक से करेक्ट रिप्रेजेंट हुआ है। फ़ैयाजखाँ जब पहले मर्तबे रिकार्ड करने एच.एम.वी. के पास गए तो पुराने जमाने का 1934 का प्रिमिटिव गेज का माइक था। उसके सामने फ़ैयाजखाँ ने जब परज राग के तार सप्तक से ''मनमोहन ब्रिज को रसिया'' जैसे ही शुरू किया तो माइक बोल गया। तो फिर दूसरा माइक दिया। तो जब वे तान गाने लगे तो वो भी बोल गया। तब ढाई फुट दूर बैठकर रिकार्डिंग किया गया।यह किस्सा मुझे पहाड़ी सान्याल ने सुनाया। वे उस समय वहाँ मौजूद थे। उनकी (फ़ैयाजखाँ की)आवाज माइक के लिए थी ही नहीं। पर हमारी पूरी जिंदगी में ऐसा चौमुखा गायक हमने न देखा न सुना। ऐसे गायन की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। दिलीपचंद बेदीजी कहते थे कि फ़ैयाजखाँ ख्याल के बादशाह थे। जब भी हम सिद्धेश्वरी देवी के साथ बैठते थे तो वो हमसे कहती थी जरा वो कहो ''केवड़िया खोलो'', फ़ैयाजखाँ कैसे गाते थे ? यानि ठुमरी दादरे जब वे गाते थे तो सिद्धेश्वरी बाई भी प्रभावित हो जाती थी। जब ध्रुपद धमार गाते थे तो लगता था मानो यही काम जिंदगी भर उन्होंने किया। आलाप गाते थे,तो लगता था इनके गले में तान है भी या नहीं और जब तान गाते थे तो लगता था मानो तोप के गोले छूट रहे हों।

जब हम फ़ैयाजखाँ साहब के पास गए तो सोलह-सत्रह बरस की उम्र के थे। उस जमाने में लखनऊ क्रिश्चियन कालेज में एक लेक्चरर थे एस.के.चौबे। वे फ़ैयाजखाँ के शिष्य थे और खुद को महताब-ए-मौसिकी कहते थे। वे हमें लेकर उनके पास गए थे। वे कहने लगे खाँ साहब,ये प्रोफेसर मुखर्जी का लड़का है। यह आपकी खूब नकल करता है। खाँ साहब ने बिना हँसे गंभीर रूप से कहा - 'तो फिर कुछ सुनाइये आप'। उस जमाने में हमें कोई डर तो था नहीं। षड्ज पंचम लगाके खाँ साहब की ही स्केल में 'मोरे मंदर अब लो नहीं आये' यह जयजयवंती राग ए टू जेड पूरा रिकार्ड गा के सुना दिया। मय, तान-वान, सब कुछ, बगैर तबले के। उस जमाने में तबले के साथ गाने की आदत नहीं थी। सब लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए। फ़ैयाजखाँ साहब ने वहीं पर उसी स्केल से गाना शुरू किया .और मुझे गर्व है यह कहते हुए कि

हिन्दुस्तान के बादशाह ने मुझे साथ लेकर जयजयवंती डेढ़ घंटे तक गवाया। बरसों बाद मेरा पहला प्रोग्राम ही नेशनल रेडियो प्रोग्राम था। इसमें मैंने जयजयवंती ही गाया था। हर एक फ्रेज,हर एक न्यूअन्स मुझे याद था और अभी भी याद है। आप सोच सकते हैं कि किस कदर असर हुआ होगा हम पर। वे रहते थे बड़ौदा में और हम रहते थे लखनऊमें। गाने को पेशा करने का विचार नहीं था क्योंकि उस जमाने में पेशा बनाने से सिर्फ ट्यूशनें करके सौ-डेढ़सौ रूपए कमाए जा सकते थे। हम पढ़े लिखे घर में पैदा हुए हैं। इसलिए उसी के अनुसार नौकरी-पेशा का काम किया। गाना मेरे लिए पेशा नहीं, नशा है। बरसों बाद फ़ैयाजखाँ साहब के प्रधान शिष्य और उनके साले अताहहुसैन खाँ से हम सीखे। तीन पंडित हमारे घराने में पैदा हुए : एक- विलायत हुसैन खाँ, दो- खादिम हुसैन खाँ,तीन- अता हुसैन खाँ। मैं आपको क्या बताऊँ? एक बार अता हुसैन खाँ ने जिलफ़ की सात आठ बंदिशें खड़े-खड़े गा दी। कहने लगे ये सब मेरे मरने के बाद चला जाएगा। उस समय में हमने सिरियसली नहीं लिया अब अफ़सोस होता है ,कुछ तो याद करके रखते। बाद में खादिम हुसैन खाँ के छोटे भाई लताफत हुसैन खाँ से मैंने कुछ सिखा। मगर आगरा घराने की तरफ मेरी जो लॉयल्टी है, इट दैट्स बैक टू दैट एक्सपिरियेंस व्हिच आई हैड एट द एज ऑफ सिक्सटीन। हमने बहुत जगह कान्फिडेंस में गाया मगर हमारी जिंदगी में सबसे बड़ा हाईलाइट है जब बड़ौदा दरबार में जिस जगह फ़ैयाजखाँ साहब बैठ कर गाते थे उस जगह पर बैठकर लताफत हुसैन,शराफत हुसैन और मेरा गाना हुआ। फ़ैयाजखाँ साहब के शिष्य फतेह सिंह राव द्वारा यह आर्गेनाइज़्ड हुआ।

तो आगरा घराने के बाबत् आपको बहुत सारे लोग बतायेंगे। **आज श्रीकृष्ण हलदनकर साहब यहाँ उपस्थित हैं जिनको सुनने के बाद मेरी आज इस उम्र में भी यह इच्छा होती है कि मैं इनसे तालीम हासिल करूँ।** (तालियों की गड़गड़ाहट से इनका स्वागत किया गया)बीस बरस खादिम हुसैन खाँ के पास इनकी शिक्षा हुई। इसके पूर्व पाँच बरस मोगुबाई से आपकी तालीम हुई। हम लोग तो बंदिशें कलेक्ट करते रहे। गाना गाते रहे। पर वो तो सेकण्डरी ओक्युपेशन था। इनका भी सेकण्डरी ओक्युपेशन था पर उसे इन्होने बहुत अच्छी तरह निभाया। तो आज इस सेमीनार में बहुत अच्छे-अच्छे लोग यहाँ हैं। ये बहुत महत्वपूर्ण कर्म आप लोग कर रहे हैं। मैं सिर्फ एक ही चीज और कहना चाहूँगा, वो ये कि घराने की डेफिनेशन क्या है ? पं. देवधरजी कहते हैं कि कम से कम चार पीढ़ी होनी चाहिए घराने के लिए। मैं समझता हूँ कि ये डेफिनेशन बहुत इनएडिक्वेट है। तीन चार पीढ़ी से कोई मतलब नहीं। सहसवान घराने को

देखिए। इनायत हुसैन साहब क्या गाते थे,मुश्ताक हुसैन साहब क्या गाते थे, निसार हुसैन क्या गाते थे और आज रशीद क्या गा रहा है। आसमान जमीन का फर्क है। तो एक शैली को फॉलो करना घराना है। घराने में कुछ बड़े बड़े लोग पैदा होते हैं जो कि कान्ट्रीब्यूट करते जाते हैं। दिस इज रिसपांसिबल फार द डायनेमिक ग्रोथ ऑफ दैट घराना। घराने की गतिशीलता हमेशा डिपेंड करती है शैली के अनुसरण पर। जैसे किराना घराना। अब्दुल करीम खाँ या सुरेश बाबू माने जो गाकर गए हैं वो गाना अब्दुल वहीद खाँ,अमीर खाँ,सवाई गंधर्व हूबहू नहीं गाए। भीमसेन जोशी भी वही गाना नहीं गाते। मगर इन्होंने घराने को कायम रखा। अफसोस है कि आगरा घराना मर गया दो कारणों से। एक तो यह कि हर शख्स फ़ैयाजखाँ के आवाज की कॉपी करना चाहता था। इस चक्कर में कितने उस्ताद बर्बाद हुए कह नहीं सकता। असदअली खाँ जो पाकिस्तान में जाकर बस गए। वहाँ जाकर खुद को आफताब-ए-मौसिकी सेल्फ इम्पोज्ड टाइटल उन्होंने डिक्लियर किया। फ़ैयाजखाँ ने कहा था कि असदअली ने मेरा दिल दुखा दिया है। असद अली दो साल के अंदर खतम हो गया। लताफत भाई इतना रंगीला गाते थे, वे भी खतम हो गए। अन्य भी बहुत सारे लोग मैं कह सकता हूं कि मेंढक होकर हाथी बनना चाहते थे। आवाज की नकल करने की क्या जरूरत है ? घराने का पैटर्न या मेथड फॉलो करना जरूरी है। फ़ैयाजखाँ के पहले नत्थनखाँ क्या गाते थे। अब्दुल्ला खाँ क्या गाते थे। भास्कर बुवा क्या गाए हैं। इनका तो रिकार्ड नहीं है इसलिए फ़ैयाजखाँ को बाकी लोगों ने फॉलो किया।

मेरी बारी आने पर मैं बताने की कोशिश करूंगा कि ख्याल के अष्टांग क्या है। शरदचंद्र आरोलकर जी ने कहा - धुरन मुरन कंपन आंदोलन ये सब इसमें आते हैं। मैंने कहा ये सब गवैये के गले में होने चाहिए। दिस आर द टूल्स ऑफ ट्रेड। ये तो मिस्त्री के औजार हैं। अष्टांग कैसे होगे और वो भी गायकी के ? तो इसमें काफी गवेषणा और विश्लेषण करने के बाद मैं इस तह तक आया हूँ कि बंदिश की 1.नायिकी 2.गायिकी 3.विस्तार 4. बहलावा 5.बोलबाट 6 . लयकारी 7. बोलतान 8. तान, ये आठ अंग हैं।

1. नायिकी - यानि गुरू से जैसी मिली वैसी तालीम हूबहू बंदिश सहित गाना।
2. गायिकी - यानि अपनी कल्पना से उस बंदिश से खेलना,उसको बढ़ाना।
3. विस्तार - शुरू से आखिर तक क्रमश: एक शैली लेकर एक उद्देश्य लेकर बढ़ना और राग को अधिकाधिक विस्तृत करना।
4. बहलावा - यानि कुछ लरजदार तान और मिंड के साथ स्वर समूह लेकर उसके साथ आँख मिचौली खेलना। ग्वालियर में यह बहुत है। बड़े गुलाम अली खाँ के गाने में यह बहुत था।

5. **बोलबाट** - यानि बनठन। यानि कुछ आप लीजिए कुछ मैं लूँ।

6. **लयकारी** - यह अंग आज ख्याल से गायब होता जा रहा है। ये धमार से आया है। आगरे में यह था। शराफत इसमें माहिर थे। अब प्राय: कोई नहीं करता। हम बुढ़ापे में कर रहे हैं। अभी रिसेंटली राज्य संगीत सम्मेलन में हम जब लयकारी कर रहे थे, तो लोग इससे बहुत खुश हुए। क्लेपिंग भी मिला। जैसा कि इंस्ट्रूमेंट्स में होता है। साथ संगत भी अच्छे थे। तो मैंने स्ट्राइक किया इन आल माई इनोसेंस कि यंग जनरेशन और आम लोगों को भी लयकारी अपील करती है। महाराष्ट्र के लोग लयताल को बहुत पसंद करते हैं। लेकिन सिर्फ महाराष्ट्र के लोग ही नहीं बाकी लोग भी करते हैं। खादिमहुसैन खाँ और विलायत हुसैन खाँ की जुगलबंदीजब होती थी तो एक तरफ तबला दूसरी तरफ पखावज लेकर रात रात भर का धमार और ख्याल का प्रोग्राम और लयकारी महाराष्ट्र में चलती थी। सभी लोगों को एक सेंस ऑफ रिदम होता ही है। इस कारण लयकारी अपील करती है। ये चीज आगरा घराने में बहुत है।

7. **बोलतान** - यह चीज केवल आगरा घराने की देन है। क्योंकि शुरू शुरू के ग्वालियर में मैंने इसे नहीं पाया। और किसी भी घराने में मैंने इसे नहीं पाया। बाकी घराने के लोग बाद में आगरा को सुनकर इसकी कॉपी करने लगे। पर यह आगरा घराने की देन बोलतान है।

8. **तान** - यह सबसे अंत में आती थी। (आजकल तो शुरू में आती है।) क्योंकि हम तो समझते हैं कि राग की स्थापना करना ,प्रतिष्ठा करना वह असली काम है। बाद में उसका अलंकरण करना, विभिन्न रूप से सजाना इसमें एक तान भी है। पर आज अलंकरण पहले करते हैं मूर्ति बाद में गढ़ते हैं। पंजाब के नजाकत सलामत और कुछ हद तक बड़े गुलाम अली खाँ का जो असर हुआ है वह दिख रहा है। हमारे कलकत्ते में अमीर खाँ और बड़े गुलाम अ ली खाँ का बहुत असर हुआ है। एक गायिकी वहाँ ऐसी बनी है जिसमें विलंबित हिस्सा अमीर खाँ साहबं का है और द्रुत हिस्सा बड़े गुलामअली खाँ का है । इन्हीं दोनों का एक बहुत ही इनएफेक्स्चुअल इमिटेशन बना है। मगर है ये कि भातखण्डे की किताब देखकर राग का आरोह अवरोह कर लिया फिर मीर खण्ड से विस्तार कर लिया। अब गौड सारंग जैसे संकीर्ण राग में मीरखण्ड कैसे होगा, आप ही बताइये। ऐसे ही छायानट,नंद जैसे अनेक राग हैं। (इसलिए वे ऐसे रागों को छोड़ देते हैं और गाते क्या हैं मालकौंस,हंसध्वनि,बसंतमुखारी जैसे राग)तो मीरखण्ड से सोते-सोते इन्होने आलाप किया फिर सरगम, फिर दे मार तान। ये

तीन अंग लेकर सब चल रहे हैं हमारी तरफ के लोग। कहाँ का अष्टांग और कहाँ का क्या। वो तो हम बस जिक्र कर रहे हैं।

आप लोग यह बहुत ही महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं। मेरा कहना है कि आगरे के बाद आप इसे छोड़ मत दीजिए। ख्याल का सबसे प्राचीन घराना ग्वालियर है। ग्वालियर पहले कैसा था व बाद में कैसा हुआ। ग्वालियर से ही बाद में ख्याल आगरा आया। उन्नीसवीं सदी के शुरू में घघ्घे खुदाबक्ष आगरे से ग्वालियर गए थे। उनकी तालीम बहुत ही अच्छी हुई लेकिन उनकी आवाज इतनी खराब थी कि लोग उन्हें घघ्घे कहते थे। लोगों के द्वारा मजाक उड़ाये जाने पर वे पोटली बांधकर घर से निकल गए। बीहड़ जंगल और चंबल पारकर वे ग्वालियर पहुँचे। वहाँ नत्थन पीरबक्ष से उन्होने 14 वर्षों तक ख्याल के साथ-साथ स्वर प्रयोग की तालीम ली। जब लौटकर आए तो लोग कहने लगे कि यह क्या वही शख्स है ? उनके मधुर और सुरीले गायन के कारण लोग उन्हें शादी-ब्याह में गायन हेतु आमंत्रित **नहीं** करते थे क्योंकि उनका गाना सुनकर सभी रोने लग जाते थे। यह मेजबान को पसंद नहीं आता था। इस प्रकार घघ्घे खुदाबक्ष ने ही आगरा घराने में ख्याल इम्पोर्ट किया। उन्होंने अपने भतीजे शेरखाँ को,अपने बेटे गुलाम अब्बास और कल्लन खाँ को तालीम दी। गुलाम अब्बास खाँ ही फ़ैयाज खाँ के नाना और गुरू थे। इस कारण फ़ैयाजखाँ के गाने में आप जितना ग्वालियर पाएंगे उतना और किसी के गाने में नहीं। इसलिए ग्वालियर का स्टडी करना भी बहुत जरुरी है। मैं आपसे एक और अर्ज करना चाहता हूँ कि अन्य घरानों की भी स्टडी होनी चाहिए मसलन जयपुर,किराना वगैरह। मैं इस बात पर कान्फिडेंट हूँ कि जैसे सब धर्मों का मूल तत्व एक ही है वैसे ही सब घरानों के मूल तत्व एक ही है। ये तो हम लोग डिफरेन्ट काम्पलेक्शन देते हैं बिकॉज ऑफ स्टाइलिस्टिक रिफरेंस। मगर असली बात सभी जगह एक है। मैं स्वयं इस बात के लिए अपने को कान्ग्रेचुलेट करता हूँ कि मुझमें यह बात कभी भी पैदा नहीं हुई कि मैं आगरा घराने का हूँ तो अन्य घराने का कुछ सुनुंगा नहीं। मैं सबका गाना, बशर्ते वह अच्छा हो, सुनता हूँ। बचपने में मैने किराना गाना खूब सुना। अब्दुल करीम खाँ, सुरेश बाबू माने सबको खूब सुना। मुझे याद है अब्दुल करीम खाँ साहेब मुँह खोले बैठे हुए हैं। उनके गले से कोई आवाज नहीं निकल रही थी। बाद में पता चला कि वे तारसप्तक का सा इतना एक्यूरेट गा रहे थे और वह साज में इतना मिल रहा था कि सुनाई ही नहीं दे रहा था। वे तानपुरा ऐसा बांधते थे कि तानपुरा,श्रुति हारमोनियम और सब कुछ एक हो गया। इस तरह से वो बसंत जिसे उस जमाने में परज बसंत कहते थे,गा रहे थे। तो उसे सुनने के बाद हम कैसे

कहें कि वो आगरे के सामने कुछ नहीं हैं। अलादिया खाँ जो कि महान सिस्टम बिल्डर थे। एक घराना,एक शैली को बनाने वाले ऐसे उस्ताद जिन्होंने अपने ही जीवन में गायिकी बनाई सिखाई और उसे फलते फूलते देखकर गए। दसियो बड़े-बड़े कलाकार बनाकर गए। हम कैसे कहें कि उन्हें न सुने। तो आप यह इम्पोर्टेन्ट काम जारी रखिए। मैंने फोर्ड फाउंडेशन प्रोजेक्ट के लिए अभी तक छः प्रोजेक्ट लिए हैं। इसमें 270 मिनट का कैसेट है। उसमें आगरा,ग्वालियर,जयपुर,किराना,पटियाला,सहसवान घराने हैं। अभी वह कैसेट एस.आर.ए. की प्रापर्टी है। अगर वे उसे रिलीज करेंगे तो विद्यार्थियों का बहुत लाभ होगा। अब मैं विदा लेता हूँ ताकि आप बबनजी जैसे उस्ताद का भाषण और गाना सुन सकें। उन्हें मैं लयकारी गाने के लिए आग्रह करता हूँ। आप सभी ने मुझ बूढ़े ब्राह्मण की लंबी बात ध्यान से सुनी इसलिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

कुमार मुखर्जी 8,शॉर्ट स्ट्रीट,कोलकता।

उद्घाटन सत्र-
: अध्यक्षीय उद्बोधन :

डॉ.प्रो. इन्द्राणी चक्रवर्ती

परम आदरणीय पं. कुमार मुखर्जी, पं. श्रीकृष्ण हलदनकर, पं. गंगाधर तैलंग, डॉ. कशालकर एवं समस्त उपस्थित सम्माननीय गुणिजन। विश्वविद्यालय के समस्त विद्यार्थियों, संगीत रसिक, संगीत पिपासु।आगरा घराने पर पं. मुखर्जी साहब द्वारा चर्चा प्रारंभ की गई। चर्चा कल तक और भी चलेगी। इतना जरूर कहना चाहती हूँ कि जैसे एक इन्सान सर ढांकने के लिये एक छोटी सी कुटिया बनाता है। धीरे-धीरे उसकी चाहत बढ़ती है और वह कई मंजिलों का मकान बनाता है। उसके परिवार की सदस्य संख्या भी बढ़ती जाती है। घर के मुखिया होने के नाते परिवार के सभी सदस्यों को वह अपनी संस्कृति में ढालता है। क्रमशः एक मकान से कई मकान बनते हैं। मकानों से ग्राम बनता है। गाँव का मुखिया अपनी संस्कृति में सबको संस्कृत करता है। लोग उनकी तरफ उंगली उठा कर कहते है कि ये घरानेदार है। लोग उन्हें घर से नहीं घराने से जानते हैं। वहाँ घर से नहीं घर से जुड़ी संस्कृति से लोग उन्हें पहचानते हैं। घर से जुड़े उनके अदब कायदा नियम बनते हैं। संगीत में भी उसी प्रकार घराना है। घराना केवल संगीत की शैली ही नहीं, उनकी अदब है। संगीत में अदब बहुत बड़ी चीज है। आज हम कहते कि यदि घराना नष्ट हो गया है, इसका अर्थ है हमने अपने एक

अदब को समाप्त कर दिया है। घराना आज ही नहीं ग्राम राग पद्धति के समय भी यह शैली प्रचलित थी,जिसे गीति (यानि शैली) कहते थे। एक ही ग्रामराग कई-कई शैलियों में गाए जाते थे। जैसे शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, वेसरा और साधारणी। ये पाँच तरह की गीतियाँ मानी गई हैं। धीरे-धीरे उनमें कई परिवर्तन आते गए। ग्राम राग के पश्चात् देशीराग सामने आए।देशी रागों में भी नई गायन शैलियां बनी उसमें ध्रुपद धमार आदि शैलियाँ प्रचलित हुई,वह कहलाई वाणी। चार वाणियाँ सामने आई। गौड़हार,नौहार-डागुर-खण्डार। यहाँ वाणी का अर्थ है शैली या घराना। ख्याल शैली जब सामने आई तो टेक्नीकल टर्म अर्थात् पारिभाषिक शब्द के रूप में घराना शब्द आया, जो परंपरा, शैली, वाणी, शिष्य परंपरा सभी को बताता है। पं. कुमार मुखर्जी साहब से मैं जानना चाहूँगी कि वे आगरा घराने के जानकार हैं, अत: मेरी एक शंका को उनके सामने रखती हूँ। मेरा मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन पर्यन्त एक विद्यार्थी ही होता है। मैं भी एक विद्यार्थी हूँ। तो मेरा प्रश्न है कि दिल्ली घराने में या दरबार में सदारंग अदारंग मौजूद थे। उन्होंने ध्रुपद गाए और अपने शिष्यों को ख्याल सिखाए। तो ख्याल का ओरिजिन दिल्ली न मानकर ग्वालियर क्यों माना जाता है ? विश्वविद्यालय में अध्ययनरत् आप विद्यार्थीगण अलग-अलग घरानों की कैसेट्स जब सुनेंगे, तब आपको इनकी खासियत, भेद आदि पता चल पाएगा। अभी यहाँ घराने के मूर्तिमान विद्वान सब आए हैं। उनसे प्रश्न पूछ-पूछ कर आप इतना परेशान कर दें कि उन्हें लगे कि यहाँ (उत्तर लेकर)दुबारा आना है। और आप गुणीजन यहाँ आते रहेंगे, ऐसी मेरी आशा है। तो घराने में केवल संगीत या शैली ही नहीं एक अदब की भी शिक्षा दी जाती थी। आज उसकी कमी हो गई है। संस्थाओं में अदब है,पर उतना नहीं जितना घरानों में निहित है। हमारी संस्था में(इं.क.सं.वि.वि.) कुछ हद तक तो यह है। ऐसी अदब अन्य संगीत संस्थाओं में भी होनी चाहिये। हम जब अपने दादा गुरू उस्ताद मुश्ताक अली के पास गए तब पता चला कि संस्थागत एवं घरानेदार शैली में और उनके अदब कायदे में क्या अंतर होता है? मेरे गुरू पं. देबू चौधरी जी से सीखने के बाद पता चला कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में सीखने के बाद भी कौन सी ऐसी कमी सीखने में रह गई है, कौन सा पॉइन्ट है जो हमें प्रोफेशनलिज्म से दूर रखता है। मेरा विचार है कि किसी गुरू, घरानेदार उस्ताद से सीखना आवश्यक है यदि पूर्णता पानी है, प्रोफेशनलिज्म पाना है। संस्था में सीखना भी उतना ही आवश्यक है, क्योंकि उससे विद्यार्थी की आँखें खुलती हैं। घरानों में भी आँखें खुलती हैं। पर वहाँ एक प्रकार की बंदिश हैं। बंदिश यानि एक(विशिष्ट) अनुशासन। एक ही विशिष्ट रीति। आज के वातावरण में उनका मिलाप कैसे हो यह देखना है। आज कुछ कम उम्र के लड़के तैयार

होकर घराने से निकल रहे हैं। पर आज बाहर की पढ़ाई भी करनी जरूरी हो गई है। बाहरी दुनिया के परिवर्तन को भी जानना जरूरी है, तो इसीलिये हमारे बच्चों और शिक्षकों को परेशानियाँ होती है। इसलिये संस्थागत एवं घरानेदार दोनों शिक्षणों को लेते रहना चाहिये ताकि घरानें व संस्थाओं की संगीत शैली नदी की धारा की तरह बह पाएँ। इस तरह के परिसंवाद हम करते रहेंगे। इस वर्ष आगरा घराना लिया है अगले वर्ष कोई नया घराना लेंगे। घराने की पुरानी शैली सीखें बुजुर्ग शिक्षक व संगीतकार विद्यार्थियों के समक्ष अपनी विद्या रखकर उनका ज्ञान बढ़ाएँ और हमारी संगीत की गति को नया आयाम मिले। गायन विभाग ने जैसे यह सेमिनार किया है वैसी और हिम्मत करके एक सिरीज बनाकर अन्य घरानों पर भी सेमिनार करें।आगरा घराने के सेमिनार से जुड़ा आगरा का ताजमहल जो यहाँ स्टेज पर बनाया गया है यह अत्यन्त सुन्दर बनाया गया है। मैं इसके लिये सुजीत और अन्य विद्यार्थियों को आशीर्वाद देती हूँ। इस संगोष्ठी की निर्देशिका डॉ. वीणा विश्वरूप एवं समस्त सदस्यों को इसकी परिकल्पना हेतु बधाई देती हूँ।

इंद्राणी चक्रवर्ती

-पं. कुमार मुखर्जी द्वारा प्रश्न का समाधान-

सही बात है कि दिल्ली जब पहले था, वहाँ सदारंग अदारंग ने ख्याल बनाए तो ख्याल का ओरिजिन दिल्ली को ही माना जाना चाहिये। परंतु ग्वालियर को क्यूं माना जाता है ? इस प्रश्न पर मैने बहुत सोचा। काफी छानबीन के बाद जैसा मुझे समझ में आया-18 वीं सेंचुरी के शुरू में मुहम्मदशाह रंगीले के जमाने के नियामत खाँ सदारंग और फिरोज खाँ अदारंग ने शाह आजम से संस्कृत सीखा और कवाल बच्चे तानतार से जाकर के कव्वाली सीखा। नटुवा के बोल लेकर ध्रुपद को तोड़-तोड़ कर ख्याल बनाए। मजे की बात ये है कि सदारंग की गायकी कैसी थी ? यह किसी को पता नहीं। दिल्ली घराने में जैसे तानरस खाँ एवं उनके भतीजे शब्बू खाँ थे, उनकी गायकी तो ग्वालियर की गायकी थी। उनके साथ दिल्ली घराने की गायकी क्या थी ? सभी ग्वालियर गायकी गाते थे। और कोई घराना ख्याल में था ही नहीं। बल्कि आगरे में भी जब घघ्घे खुदा बख्श गायकी लेकर के आए तो उन्होने इतना चेंज किया कि वो जो ध्रुपद धमार की उनकी गायकी थी, उसे उन्होने ख्याल में ड्राफ्ट कर दिया। फैयाज खाँ ने नोम्-तोम् आलाप को जबरदस्ती ख्याल के साथ जोड़ दिया। लखनऊ में करीब-करीब एक पेरलल स्ट्रीम नवाब

असुजुद्दोला के जमाने में थी। गुलाम रसूल के दो दामाद थे, एक दामाद और उनके भाई। शकर खाँ,मक्खन खाँ। ये कवाल बच्चे कहलाते थे। कव्वाली गाते थे। उनको उन्होंने ख्याल सिखलाए। उसी मक्खन खाँ का बेटा पीरबख्श ग्वालियर में ख्याल लेकर गया।उनके तमाम शागिर्द स्टॉलवर्ड थे। उनके तीन नाती हद्दू ,हस्सु, नत्थू , जिन्होंने ग्वालियर को रोशन किया, घघ्घे खुदाबख्श भी उनके शागिर्द थे। तो शुरू में ग्वालियर और आगरा ही घराना था। बाकी घराने तो बाद में पैदा हुए। एक बात और है बेसिकली एण्ड क्रोनोजिकली ''आगरा'' इज इव्हन ओल्डर देन ग्वालियर। व्हाय ? बिकौज़ ग्वालियर का पहला जिकर आ रहा है मानसिंह तोमर के 15 वीं सदी में ध्रुपद के लिए। जबकि आगरे वाले क्लेम करते हैं कि अमीर खुसरू के जमाने में गोपाल नायक से आगरा घराना चला। दिल्ली घराना कोई था ही नहीं। उस जमाने में अमीर खुसरू एक बहुत ही कॉन्ट्रोवार्शियल सब्जेक्ट है। इसमें मैं जाना नहीं चाहता मगर बहुत सारे लोगों ने बहुत कुछ लिखा। प्रो. मुहम्मद हबीब, जिनके पिता इरफान हबीब है, आजकल मुगल हिस्ट्री के बहुत बड़े ऍथारिटी हैं। इन्होंने यहाँ तक लिखा है कि अमीर खुसरू एक बहुत बड़े शायर के रूप में तो थे, पर वो गाना गाते थे, इसका कोई सबूत हमारे पास नहीं है। उन्होंने खुद लिखा है- हमारी शायरी तीन पुस्तकों में पब्लिश हो सकती है। बाकी अमीर खुसरू के बारे में तो यहाँ तक भी कहा गया है कि वो हिन्दुस्तानी संगीत को डाऊन करने के लिये पर्शियन इन्फ्ल्युएन्स को जबरदस्ती लाना चाहते थे। इसके लिए वे समूह को बुलाकर, परशियन इन्फ्ल्युएन्स को डाऊन राईट इम्पोज करना चाहते थे। ये कॉन्ट्रोवर्शियल क्रुएशियल सब्जेक्ट है। इसमें मैं जाना नहीं चाहता। मगर इतना ही कहना चाहता हूँ कि अगर यह है भी, तो पैरलल स्ट्रीम है। जिस वक्त ये कवाल बच्चे गुलाम रसूल ग्वालियर में गए तब वहाँ सदारंग,अदारंग का गाना ग्वालियर में सभी लोगों द्वारा गाया जाता था। मगर सदारंग अदारंग के पहले दिल्ली में ख्याल गायन जो आया,वो आया शाहजहाँ के दरबार में ऐसा मैं देखता हूँ। औरंगजेब के जमाने के फकीरुल्ला खाँ नामक लेखक का संगीत दर्पण पुस्तक आया है। उन्होंने लिखा है कि अकबर के जमाने में (उन्होंने तानसेन के लिये अताई शब्द इस्तेमाल किया है,जो सुन्नी शागिर्द हैं। दो नंबर गायक थे)हाजी सुजान खाँ जो कि आगरा घराना के प्रवर्तक थे। इनका ध्रुपद 'प्रथम मान अल्ला जिन रचो नूर-ए-पाक नबीजी पे रख इमान

सुजान' जोग राग में बहुत दिनों तक आगरा घराने के उस्तादों ने गाया। मगर इट वाज ए कांग्रेजिएशन ऑफ वेरियस आर्टिस्ट। जैसे मीया तानसेन का कोई घराना नहीं। लोग कहते हैं कि हम मियाँ तानसेन के डिसेन्डेन्ट्स है। जो भी सितार,सरोद, बीन बजाया सभी कहते हैं कि हम मियाँ तानसेन के घराने के हैं और वजीरखाँ कहते थे कि हम तानसेन की लड़कियों के वंश के हैं और हमारी बीबी उनके लड़के की है। तो हमारा पोइन्ट यह है कि, यदि हमें कोई डेफिनेट सबूत मिले तो ठीक, पर नहीं मिलता है तो आई ऑटोमेटिकली प्रिज़्युम्स देट ये दोनों पैरलल स्ट्रीम्स थे। पर जो गायकी ये लाए, कव्वाल बच्चों की गायकी, तो उसमें से कुछ गाना हमको भी याद है। बहार में-''आए दमनवा आज सोंधे सुबन'' बड़ी पुरानी चीज है। बड़े मुबारक अली खाँ साहब गाते थे। तो इस तरह की वह कव्वाली थी, ख्याल नहीं। तो कव्वाली को तोड़कर जो ख्याल बना वो मेझिमम इन्हीं का, गुलाम रसूल का कान्ट्रीब्यूशन है और दूसरी बात यह कि ग्वालियर में उन्होंने साथ-साथ टप्पा भी भेजा। क्योंकि गुलाम रसूल के बेटे थे गुलाम नबी जो कि शोरीमियाँ के नाम से भी प्रसिद्ध हुए तो ग्वालियर में ही इस समय टप्पा है, टपख्याल है और ख्याल में भी टप्पे का मार पेच है। जैसे ''बनरे बलैया''। वो तो टप्पे का ही मुखड़ा है। तो हमारा पॉइन्ट यह है कि हम क्रोनोलोजिकली इसे एक्सेप्ट नहीं करते, तो कम से कम कल्चरली हमें इसे मानना पड़ेगा कि ग्वालियर पेरेंट है, पहले की गायकी है। घराना न हो पर गायकी है। एग्जिस्टेड इन एनी पार्ट ऑफ टाईम।

कुमार मुखर्जी

मैंने पं.हलदनकर जी का गायन पूना में श्री सत्यशील के घर पर सुना था। सुनकर मुझे अतीव आनन्द हुआ क्योंकि आज की पीढ़ी को पुराना गाना शुद्ध रूप में सुनने का अवसर उन्ही के द्वारा प्राप्त हुआ है। आगरा घराना प्राचीन घराना है।उसके प्रतिनिधि बबन राव जी आज एकमात्र गायक मुझे दिखे हैं। ईश्वर उन्हे दीर्घायु, सुस्वास्थ्य एवं सुपात्र शिष्य प्रदान करे , ऐसी मेरी प्रार्थना है।

रामाश्रय झा,रामरंग-इलाहाबाद

AESTHETICS OF INDIAN MUSIC
-AGRA GHARANA ASPIRATIONS-

Pt. S.S. Haldankar (Baban Rao)
Mumbai

Today, Khayal is the most popular form of Hindustani Classical Vocal Music- my entire discussion is centred on this form of music, the reason being that nowhere else I have experienced ecstatic moments with a touch of divinity. There have been moments when the Mehfils of Khayal have taken the listener out of this world-a unique experience indescribable, unforgettable.

Soon after this frenzy is over, however, the human analytical mind takes upon itself the task of analysing this divine experience, making a search for the factors that have contributed to shape this experience. To me, a Mehfil that leaves behind unforgettable memories, appears to create an impression of an undeletable form in the mind, which otherwise is absent in a normal mehfil. If so, what is it that helps shapes or create this form ? To me, it is the basic human impulse of the artist to perpetuate the memory of that which is already created. This impulse establishes the fabric of continuity in the process of creation. And it is the fabric of continuity that weaves the form.

Continuity, however, cannot make its appearance unless the fabric of consistency is woven in the process of creation. It is this consistancy that confers continuity on the creative process. The path to the creation of Form, therefore, begins with the creation of consistency and goes via continuity. In short, the sequence may be illustrated as :-
Consistency---Continuity---Form.

It may be noted, however, that a performance adhering to these norms may not necessarily be unforgettable. There are many other factors that are responsible for this phenomenon. Mainly, it is the creativity of the artist, his/ her emotional involvement in the Raga, backed by his/her in-depth training and grooming, coupled with the impressions of the Mehfils heard and lastly, the potential to create challenging moments at the intellectual level. My assertion is that, the mehfil would <u>not</u> be unforgattable albeit all these factors that

mentioned above, unless the path outlined above is followed by the artist i.e. consistency and continuity to weave a form.

Again there are strata of aesthetic appeal that is created in the mind of the listener. Though a Mehfil in which all the norms mentioned above are revealed by the artist is unforgattable it is that mehfil in which the aesthetics of high order is experienced, has the potential to be unforgattable for a long period- popularly, "forever". If this is the case, it is worth while exploring the factors that raise the aesthetic expression to a high level. To me, the following factors contribute to render a high-order aesthetic expression :

(1) Dignity,
(2) Compactness and precision of phrases,
(3) Ease and Abandon in expression,
(4) Presentation of a Raga as per its emotive content,
(5) Potential to be oriented to the Abstract.

While the reader may expect me to elaborate each of these factors, I would prefer to do so in the context of the Agra Gharana, which is under discussion. Before turning to the discussion, however, I feel imperative to determine the modus operandi of its treatment.

In a discussion of this nature, where occasional, if not frequent, recourse has to be taken to some Mehfils of some artists for illustration, it is ethical if only those artists are referred to who have raised the status of their Gharana to a great height. It will be agreed that it is only such artists that reveal the inner secrets and maximum number of facets of the gayaki of their Gharana. I am carefully using the word "maximum" since they do not necessarily reveal "all" the facets of the Gayaki which their Gurus might have taught to them. Yet their presentation sufficiently reveals the potential of their Gayaki which enables us to make their aesthetic evaluation. With this approach, I would prefer to hold Late Ustad Faiyaz Khan as the epitome of Agra Gayaki of this century. The reason is obvious. Not only he possessed the legendary creativity, coupled with a weighty sonorous voice which was further cultivated to create a moving atmosphere, but also received an indepth training from his maternal grandfather- late Gulam Abbas Khan . The later was the elder and worthy son of the late Ghagge Khuda Bakhsh, who is regarded as the pioneer of the present day Agra Gayaki. Thus, Ustad Faiyaz Khan us

was the distinctly singular artist of his generation who received a comprehensive and indepth training at home for years, who also did painstaking reyaz on what he received and with these, raised the heights of his musical expression fully exploiting his creative faculty, thus leaving unforgettable memories of some of his concerts. He was equally dexterous in all forms of the classical music-Dhrupad, Dhamer, Khyal, Thumri, Ghazzal, Invariably he was held as "Choumukha Gavaiyya" (An all round musician).

I Hope, therefore, I may be justified if I should the Ustad's music as the standard of Agra Gayaki and make occasional reference to him wherever I find it necessary to do so.

At the same time, I also hold my Guru Late Ustad Khadim Hussain Khan in high esteem, as far as knowledge and intricacies of Agra Gayaki are concerned. The reason is that he also received similar indepth training from the late Ustad Kallan Khan (younger brother of Ustad Gulam abbas Khan) who was great grandfather of my ustad. I may venture to say that he revealed to me many more facets of Agra Gayaki, which I rarely found even in the concerts of Ustad Faiyaz Khan. In the lines that follow, it is quite possible that the reader, who is acquainted with Agra Gayaki, may find some of my assertions and claims to be exaggered, perhaps imaginary. Yet, I may assure him, that this not at all the case. He may rest assured that all my statement, apparently controversial are fully sustained by my experience, and are demonstrable in most of the cases.

Take for example, the practice of cultivating a long breath. Unfortunately, this faculty appears to be almost lost in the present day musicians of Agra Gharana, Why, even the legendary Ustad Faiyaz Khan was not seen to be possessing this faculty in his later career. Yet my Ustad fully possessed this capacity. I fully realised this when he put me on test for long breath. At first I ridiculed his stance in my mind, since, being previously groomed in Jaipur_Atrauli Gayaki, I was proud of my long breath. Yet, when put to test, my "long" breath came out to be three times shorter than that of my Ustad who was twenty years older than me and was in his fifties. I also remember him to have held his breath for one complete Tala-cycle in Thai Laya (slow tempo), all the while steadying on "Sa" only. I this rare experience teaches

importance in maintaining the dignity of presentation. My Ustad would always inculcate in me the cultivation of long breath, saying "Gana yah saas ka Kaam Hai". (It is the long breath that is the religion of music). Now, If I make a statement-"Agra Gharana upholds cultivation and application of long breath in music". I am sure, I would have entered into a controversy, had I not cited the above instances, which may, perhaps be treated as anecdotes now.

To cut it short, most of my statements on Agra Gharana are based on actual experience and I would appeal to the reader to rely on these. My basic concepts on aesthetic evaluation are of course open to debate.

Let us now assess the standing of Agra Gayaki, on the basis of the factors that contribute to keep a Gayaki on a high pedestal.

(1) Dignity :-

Agra Gayaki upholds Dignity in music as the foremost element in expression. Grandeur, majesty are the words that could express the manifestation of the Gayaks. Dignity has two facets and both the facets are combined in the Gayaki to give the total added affect of Grandeur. The two facets are : (a) Dignity produced by a properly cultivated voice. There are four essential ingredients that confer dignity, as far as voice in concerned: (i) Weightiness, (ii) Sharpness, (iii) Resonance (iv) Cultivation of Kharja (Sa of lower post octave).

The need for weightiness in voice need hardly be stressed. The role and importance of weightiness is emphasised by most of the Gharanas. Cultivation of weightiness has been stressed by these gharanas. Yet hardly any importance is attached by these to the other three virtues of voice that need to be developed, whereas the Agra Gayaki does give importance to them. For example howsoever weighty a voice may be, it fails to impact if it lacks sharpness. Illustration may be given of a Tanpura, the strings of which are barely heard, if the sharpness (called Javari) is absent in them. So also is the case of human voice, Cultivation of resonance (technical word "Ghumar") is equally important. Cultivation of this virtue arouses a feeling of warmth in the listener. Resonance adds third dimension to the voice. In absence of resonance, a voice, howsoever weighty and sharp it may be, appears to be flat, and fails to arouse affection in the listener.

Cultivation of Kharaj imparts grandeur and breadth to the voice. This practice has been in vogue in other Gharanas also. Yet the specific feature of Agra Gayaki is that is fully exploits this virtue of the voice by taking notes from lower-most-octave (Mandra Saptak) and stretching them to the middle or even upper octave. (Technically called "Khench") This practice has its origin in the Dhrupad Form, and since the Area Gayaki has its roots in the Dhrupad tradition, this way of developing and exploiting Kharaj has been in the veins of Agra Gayaki. I may say, of the many factors that keep the Dhrupad form on high pedestals as for as dignity is concerned, it is the "Khench" from lower middle octaves that is the most important one; which owes its existence to the exploitation of Kharaj. Hence, I may stress that among the Gharanas in Khayal form it is commonly agreed that Agra Gharana is the only one which has retained the Dhrupad tradition and also the only one in which Dhrupad teaching and singing is still in vogue. Logically, it may be safely inferred that this is the only Gharana in which the dignity imparted by the use of "Khench" is to be experienced.

Thus, the cultivation of all these four virtues makes the voice so impressive that it invariably touches the heart of the listener. Ustad Faiyaz Khan would invariably move the listener to tears by applying his sonorous voice with all the inner urge (technically called Laag Daat), In Ragas like Todi, Ramkali, Asawari prone to pathos. He would also achieve this facet in Ragas like Desi, Barwa, which are usually not pathetic. Such pathetic affects have been created by other Ustads of this Gharana also, like Anwar Hussain Khan (younger brother of my Ustad) Basir Ahmed Khan (son of Mohammed Khan) and my Ustad. It is, ofcourse, to be borne in mind that it is the weightiness in voice that is mainly responsible for dignity.

(b) Dignity of Presentation :-

It is rather difficult to put into words this aspect of dignity, since this is to be experienced-and that too by a well initiated listener. Yet, it may briefly be explained that a musical expression which involves the maximum use of Aas and meend (slur) and Gamak and minimum of light forms like Murki, Khatka and Harkat has a tendency to assume dignity. Secondly, the dignity also demands the employment of lengthy phrases to be produced in one long breath. This practice was in vouge in this Gayaki till last generation but has unfortunately

these Ustads were trained for cultivating long breath, fully realising its disappeared now. Yet it is to be noted that goal to cultivate long breath has been cherished in this Gayaki for generations, and was not an invention by my Ustad. The great late Gulam Abbas Khan, grandfather and Guru of Ustad Faiyaz Khan is reported to possess a fantastically long breath to last for 18 Tala-cycles (Avartanas).

Yet another aspect of the dignity of presentation is to adhere to the Laya in Bada Khayal, that would give justice to the Lays of the Tala. In order to maintain this relation, the Laya of the Tala is fixed at that region where the musician can easily take Aas between two, if not more, beats of the Tala. Also the Lays of the presentation is not more than twice the Laya of the Tala. If it is faster, it does not five justice to the Laya of the Tala and appears to have lost the dignity. The great Ustads like Faiyaz Khan, have on the contrary, sung in half or even quarter Laya of the Laya of the Tala in mid-tempo (Dheemi Laya) so as to give the impression that he was singing in slow tempo (Thai Laya) of the Tala. To testify to this observation, the reader is advised to listen to his cassette on the Rag Bhankar (ए करतार)On listening to it the reader will find, I am sure, the word grandeur of 'majesty' which I have used for this Gayaki is the most befitting one.

(2) Compactness and Precision of Phrases :-

Agra Gayaki is known for its compactness and precision, which starts from the Bandish. The Gayaki owes this origin to its Dhrupad tradition. The process of Nom Tom in Dhrupad involves the use of Choicest phrases and strict adherence to the Laya. Both these attributes help the Gayaki to present khayal with choicest phrases resulting in compactness. The mastery over Tala helps the musician to catch the "Sam" (the first beat of the Tala) with precision. The presentation of Khayal with compact choicest phrases and catching the "sam" with precision, raises the Gayaki to a great height.

Both these virtues have been held in high esteem in literary and find arts also. A writer who conveys his/her thoughts in precise words in a compact manner is considered to be one of high order: so also his piece of work. Likewise, a painter who creates maximum affect with minimum touches of his brush is considered to be painter of a high grade. The same norms apply to music.

In Agra Gayaki, equal importance in given to "Amad".

In this the musician, while approaching the Mukhda of the Bandish in Vilambit, takes such phrases as suggestive of the approach of the Mukhda. For example, in the Bandish in Nat Bihag, the Mukhda Kaisa Kaise Bolata (कैसे कैसे बोलत) the Notation of which is Ma Ni Dha Pa Pa (म नि ध प प) is preceded by the phrase: Dha Ma Pa Ga Ma Ga Re Ga (ध म प ग म ग रे ग) which logically leads to the Mukhda (म नि ध प प). As will be seen, this establishes the principle of continuity which is essential for the creation of the form. Thus "Amad" has its own aesthetic contribution to the creation of the form, and is given prime importance in Agra Gayaki.

Apart from all these norms that are observed in Agra Gayaki, there is one more dimension that is added to the presentation. The phrases in Vilambit are taken in a certain proportion of a rhythm (not Laya or Tala). This is technically termed as "Vajan". The feature of this Gayaki is that once a particular "Vajan" is adopted for phrases, the same is maintained through out the Tala- cycle till mukhda is reached. The Gayaki is very particular in maintaining this "Vajan". If at all any change in the "Vajan" is to be made, it has to be logical continuity of the proceeding "Vajan". This is strictly observed in the field of Laya Bol (लय बोल). This has its own aesthetic appeal, and is fully in keeping with the principle of consistancy-continuity.

(3) Ease and Abandon in expression:

This may be considered as the zenith in the musical expression,this mode of expression makes the listener feel that he is experiencing a gay wandering in the unfathomable sea of the Raga with no ties of restrictions to bind him / we. While most of the musicians of this Gayaki would reveal this effect to a lesser or a greater extent, it was most distinct in the music of Ustad Faiyaz Khan. The Abandon would reach climax in his music, so much so, that the listener would feel that it was Tala that was conferring to his musical design and was as if, bringing the "Sam" where Khan Sahib wanted it to and not the Khan Sahib reaching the "Sam". This fact would only demonstrate that he had a thorough mastery over the Tala. Any student of music knows vary well that this is not at all an easy task. The achievement of this mastery needs years of painstaking practice. Again, it is not necessary that one would be able to reach the stage of Abandon inspite of these tremendous effects, unless one is gifted with the keen sense

of Laya. The Ustad was very well so and thus could reach the stage of Abandon. A more or less same stage of Abandon was achieved by my Ustad and also times revealed in the music of Late Ustad Vilayat Hussain Khan.

(4) Presentation of a Rag in accordance with its emotive content :

This is one of the distinct features of Agra Gayaki. The Gayaki does not treat all the Ragas in the same manner, but treats it as per the emotive content of the Raga-also called "Raga Prakriti"

For this, training is given to the disciple to master eighteen various facets of music (called "ang"); some of these are known to the average reader-like maand, Ghaseet (also called soont) ' Murak (popularly called Murki), Khatka, there are many other "Angs" like Maand, Lahak, Dagar, Sarpa, which are less known to the reader. These are employed with choice as per the emotive needs of the Ragas. In Ragas like Todi, Asawari, Jogia, Lalit, Ramkali, which express pathos, the Notes are taken with "Laag-Daat", which if effectively taken, have the capacity to move the listener to tears. In Ragas like Maru Behag or Desi, which are prone to the expression of fondness, are effectively presented with the use of "Behalava" Ang and also "Murak" in the case of Maru Behag. In the case of lightvein Ragas like Gara Kanada, the "Murak" Ang is predominant, while in the case of varieties of "Nat" (like Saar Nat, Shudha Nat etc.) they are effectively expressed with the "Dagar" Ang. These are just a few examples. The point is, the Gayaki is keen on presenting a Raga as per its emotive content and a competent musician, after assimilating the 18 angs feels quite confident of giving full justice to the "Raga-Prakriti" so much so, that he can present different Ragas in a Mehfil with different "Raga Prakriti" and create variety in expression without allowing any monotony to creep in, and without having to resort to Thumari.

Again, in every Raga, it there are a number of Bandishes (Compositions) with different tonal structures, each Bandish is treated differently, depending on its tonal structure. This way of rendering in called "Sthai ke Ang se Gana" (Singing as per the sthai pattern). Thus, if a Raga has various facets, and if a Bandish in that Raga reveals only certain facets of the Raga, these facets of the Raga are adhered to faithfully, by remaining faithful to depiction of the tonal

(1) There being no segregation of the Bandish from the entire presentation, the entire expression is extremely cohesive, which is an aesthetic expression of high order.
(2) Different Bandishes with different tonal structural in the same Raga are sung as per their different tonal structuras, thus creating a broad spectrum of the Raga.

The routine method of rendering a Raga is to the start the exposition from the middle "Sa" and reach the upper "Sa" step by step, irrespective of the tonal structure of a Bandish. This method is called "Ragalap". Since this is the set pattern of treatment, all the Bandishes in a Raga are treated in the same routine manner. The drawbacks of this method are obvious.

Firstly, it fails to retain cohesiveness due to segregation of the Bandish from the entire presentation. This is felt strikingly if the Mukhda of the Bandish is in the upper octave. If vilambit is started from middle "Sa" after reciting such Bandish, the fabric of continuity is lost. Thus, this methodology brings in an artificial element in the entire exposition of the Raga. Further, if each and every note is elaborated in the octave, a method called "Meru Khand" a "Khand Meru" system, there is every possibility of the Raga getting distorted, many times losing its identity.

Agra Gayaki, on the other hand, gives prime importance to the maintaining of the purity of a Raga. The purity, grammatically, not only involves the preservation of the purity of the tonal structure, but also, more important, the specific way of application of important and sensitive notes of the Raga- called "Sur Ke Lagao". The same Note- and also the same phrase, common to many Ragas is taken differently specific to the Raga in question. For example, the phrase "Ma Re Pa" (मा रे पा) appears in Miya Malhar, Goud Malhar, Kamod and Durga. Yet the specific mode of application of notes in this phrase is different for each raga, illustrating the identity of the Raga. This can better be appreciated by demonstration.

Agra Gayaki, however, does not stop at the point of this grammatical purity. What is important to the Gayaki is to faithfully depict the emotive content of the Raga called "Raga Prakriti". In fact, it would be more proper to state that the norma of grammatical purity have evolved out of the urge to depict and preserve the emotive purity of the Raga faithfully and religiously- as the Agra Gharana sees it. According to this

Gayaki, therefore, the grammatical purity and emotive purity are inseparable and form organic whole of the Raga personality. If one of the components is distorted, the whole Raga personality is distorted. The purity of grammatical norms helps maintain the emotive purity of the Raga. Further, singing as per "Sthai Ke Ang Se Gana" intensified the atmosphere created by the emotive purity.

One thing that obviously follows from the method of "Sthai Ke Ang se Gaana" is that the Vilambit and practically the entire presentation is made in "Bole"(i.e. spelling the words of the text of the Bandish) and not in pure "Aakar" as is done in many other Gayakis. Thus, there are a variety of regions for skilfully using he Bols-"Bol Alap" (in Vilambit), Bol-Banav, Laya Bol, Bol-Baant and Bol-Tana. In all these regions Agra Gayaki shows its own elegant personality. It has its own style (called "Dhang") in presenting the "Bols", in some regions of which it owes its origin to the Gwalior Gayaki. Firstly, the Gayaki insists on pronouncing the total word as far as possible. This gives shape to the meaning of the word, and also gives a pleasant sonal effect (नादमधुरता). It is the stylish way of pronouncing the bol that creates this effect. I may give an illustration of the Bandish कैसे कैसे बोलत in Raga Nat-Bihag. The words are stylishly pronounced as कएसे कएसे बॉलॅ तॅ further मोसे लोगवा is pronounced as मॉ सॅ लॉ गॅ वा. Note that वा becomes व्वा here.The reason is that the Agra Gayaki holds that the fabric of Note-singing should be maintained throughout the pronounciation, and secondly, the pronounciation of individual letters should not be prose-oriented but every letter should appear to have evolved from the previous letter.

The pronounciation वा as व्वा after ग in लोगवा, will convince the reader that the letter वा has evolved in a very soft manner as व्वा.

Lively as it is, the use of Bols in Khayal in all these regions, it is equally difficult to make a proper placement of the Bole in the Bols in the Tala-cycle. It in not possible to master this skill without a through and indepth training under a competent Guru. If the Bole are not properly and skilfully used, they become ineffective (technically called "Gir gaya" i.e. fallen down). The most skilful use of Bols is in the field of "Bol Banav", in which the Bols of the Bandish are completely covered in the Tala-cycle without "Layakari". The words are spelled in toto without spreading their letters. Their spell has their own Laya,

not directly related to the Laya of the Tala and pronounced gracefully (called "Nazakat"), and the Mukhada is reached with "Aamad". The combined effect is quite exhilarating Again if the literary meaning of the text is in conformity with the Raga-Prakriti, the play of Bols is quite effective. For Example, the Bada Khyal in the Raga Bihag, "Kaise Samazaoo"(कैसे समझाऊँ) depicts truthfully the smoothing mood of the Raga and my Ustad would fully exploit these Bols invariable ways to make the mood vary effective and lively.

Layakari ofcourse, is the forte of Agra Gharana and this is acknowledge by the adherents of all other Gharanas. In this the Bols are appealed in a Laya having a direct and definite relation to the Laya of Tala. The Laya may be straight being four times or eight times the Laya of the Tala, it may be three or six times the Laya; many a time, the Bole spell would be off beat, thus creating a sort of quiz, yet with grace. All these varieties are skilfully handled by a competent musician, to the enchantment of the listener. There was a period of 1930 to 1960, when the listeners were almost mesmerised by the Layakari of the Ustads of Agra Gharana and concerts of Ustad Vilayat Hussain Khan with Ahmed Jan Thirakwa and of my Ustad with the Wizard Kamurao Mangeshkar would be held just to enjoy the Layakari of both the Ustads. Their Layakari would inspire the Tabla accompanist to play hide and seek game with the musician and in this process, if stretched to extremity, would assume the form of "Sawaal Jawaab" (Question and Answer). The play would amply demonstrate the mastery of the musician over the Tala. The main aim of achieving this mastery is, of course, to create composition with choicest phrases, full of compactness, yet to sing with Abandon . Obviously, the mastery over the Tala, if used this way, definitely raises the performance to great heights.

There appears to be two currents in this Gayaki, as far as Layakari is concerned. That of Ustad Vilayat Hussain Khan was very graceful in relation to Tala, while that of Ustad Faiyaz Khan was graceful mainly on account of the elegant pronounciation of Bols. Both had their own merits, while the Layakari of my Ustad tended to be intricate. Once he had an occasion to sing before the Maharaja of Mysore. On listening to his Layakari the Maharaja exclaimed. "Oh, very difficult, very difficult" (विकट गवय्या, विकट गवय्या).

In fact, the phenomenon of true Abandon, yet in a

compact manner, cannot be achieved without the mastery over Tala. Though all the Ustads of this Gharana used to sing with Abandon, this faculty was seen to be at its zenith in the music of Ustad Faiyaz Khan. The spirit of Abandon could be observed even in his presentation of Bandish. In contrast to some performances, which appear to be tied down to the Laya of Tala, though compact, that of the Ustad used to be experienced as a play with full freedom, with no ties to bind him. A similar spirit of Abandon was found in the performance of my Ustad also. In fact, he would inculcate in us this spirit.

The Abandon with which these Ustads used to sing was "True Abandon" since, due to mastery over Laya and Tala, they would easily catch the "Same" with complete accuracy and compactness. In absence of this mastery, let it be noted, this "Abandon" becomes deceitful.

(5) Potential for going Abstract :-

The roots of this potential are in the capacity of the musicians of this Gayaki to sing with Abandon. It is this capacity that helps them go abstract. Firstly, in the process of singing with Abandon, the musician apparently, as if, severs connection with the Laya of the Tala. This way he drifts the listener from the attention to Laya of the Tala. If singing in conjunction with the Laya of the Tala is to be called a "Concrete" way of presentation, singing with Abandon, where there is no such relation, can logically be termed as "Abstract" though every phrase in such a presentation is concrete and compact.

There is a very thin line between the Abstract and the vague. The "Abstract" which has no inner core of "concrete" is vague. The apparent vague which has the inner core of the "Concrete" is Abstract. The Jaipur-Atrauli Gayaki of Lata Ustad Alladiya Khan was Abstract, though it appeared ass "Vague". The Abstract was by virtue of the Gayaki being concrete at the inner core. This Agra Gayaki, on the other hand, is Abstract by virtue of its capacity to sing with Abandon, apparently severing connection with the "concrete" i.e. the Laya of the Tala. This severing is quite distinct, since the pronounciation of Bols in Bol-Alaap is in a Laya that has apparently no connection with the Laya of the Tala. To give a concrete example, a renowned Tabaliya (Tabla accompanist) while accompanying Ustan Faiyaz Khan, lost control over his Laya even in the mid-tempo (Madhya Laya) of Teen Tala when

Faiyaz Khan pronounced the Bols of the Bandish in Tilak Kamod (बमना एक सगुन बिचारूँ)' in a Laya that had apparently no connection with the Laya of the Tala. This instance amply proves that his "severing" of the connection was not only quite distinct, but had also the potential of disturbing the Laya of the Tala so much so as to force the Tabaliya to lost control over the Laya. If the Laya of the Tala is to be termed "concrete" the Ustad's disturbing of this Laya has to be accepted as an instance of the "Abstract", since the phenomenon was not vague, but concrete at the inner core.

Other Factors that heighten the aesthetic impact of presentation:-

(a) Grace or style of the Gayaki- also called "Dhang"

(b) Momentum of presentation.

(a) Grace or "Dhang" :-

Every traditional Gharana with its characteristic Gayaki, has its Characteristic style or "Dhang" by which the Gayaki is identified. So also Agra Gayaki has its peculiar "Dhang". It is rather difficult to put into words this "Dhang" since it can be appreciated only by experience. Again, for those experienced listeners, the "Dhang" of Agra Gayaki is so distinct from that of others, that they can identify the Gayaki instantly, although it may come from an unknown mouth.

so far as "Dhang" is concerned, the Gayaki has a dual personality:-

(i) "Dhang" is artistic placement of the letters or words in a phrase. For illustration, we may consider the phrase 'जाऽनत नाऽऽऽही ' the normal placement of words, Notationwise, is, as follows : जाऽऽनत नाऽऽऽही (पऽऽमपगऽरेगरेसा)while the placement in Agra Gayaki will be: जाऽऽनत नाऽऽही (मऽऽपम मपगरेगरेसा)The elegant Twist of the Notes from पमपगऽऽ to पममपग gives a different flavour to the pronounciation of the phrase . Similarly, in the Raga Goud Sarang- say, the ending phrase आऽवनऽ कीऽऽऽनो is normally spelled as: आऽवनऽकी ऽऽऽऽनो(मग गरे मगपऽऽरे) whereas the same phrase will be spelled stylishly in Agra Gayaki as:आऽवनऽकी ऽऽऽऽ कीनो ऽऽ (मगम रेऽमगऽऽपऽऽरे)

Note that in the normal mode, the last letter नो in कीनो is pronounced last on रे with the meend पऽरे whereas, in this Gayaki, नो is spelled on ए, just before taking the meend पऽरे. Again there is a Khatka on ए, before spelling the letter नो(also on प), which cannot be put notationwise. Both this placement of नो and Khatka, put together, create a scintillating effect, which is peculiar to this Gayaki only. Quite a few illustrations like these can be cited, but these can be better appreciated on actually

experiencing them only while listening.

(ii) "Dhang" is pronounciation of words of Bols :-

I have already dealt with this aspect of the "Dhang" of this Gayaki. In general, the guidelines in pronounciation can be given. The letter अ is generally spelled as अँ, with little suppression e.g. कर पकरत is spelled as कँरपँकँरतँ, but if it is end-letter, it is half spelled e.g. बात becomes बात्, also जब से becomes जब्से, सपने में becomes सपने में or सुप्ने में, the letter अै is generally spelled अे, e.g. कैसे becomes कअेसे ; if end-letter is ये, it becomes अे;धरिये becomes धरिअे. The approach of this Gayaki is to soften the pronounciation; but the letters like स and ग ,appearing at the beginning, are pronounced with all the stress, e.g.. सनन becomes स्सनन ; झनन्न becomes झ्झनन.

Again, the pronounciation of these words in Khayal are different from those in Thumari. In general, pronounciation in Khayal are softer, sometimes less clear; while in Thumri they are bold and clear in general. The difference can be better appreciated by demonstration.

Thus, the Gayaki has its peculiar "Dhang" with the dual personality. It was last seen in the music of Ustad Faiyaz Khan, who, it is said, would be "wounding" the hearts of the listeners with the graceful pronounciation of the Boles-called "Nazakat".

In Layakari, the Boles express a different grace, specially when spelled off beat. Here, the letters between the beats are not pronounced discreetly, but with the fabric of Note continuously woven in between the letters.

This style is experienced to be attractive and the pleasant sonal effect (नाद मधुरता) to maintained throughout.

(b) Momentum in the presentation :-

Since the Gayaki keeps intimate relation with the Tala throughout the exposition, and since Tala is nothing but crystallisation of Laya pattern the entire exposition assumes a momentum, similar momentum is observed in Gwalior Gayaki also, and since the present form of Agra Gayaki has much to owe its origin and inspiration from Gwalior Gayaki, this similarity appears to be natural and logical. Yet, there is a difference in the kind of momentum observed in the two Gayakis. Firstly, the tempo of the Tala in Gwalior Gayaki is faster than that in Agra Gayaki even in Vilambit Laya. Secondly, the present form of Gwalior Gayaki appears to be less steady than the Agra Gayaki (Probably due to the faster tempo of the Tala). The Agra Gayaki lays stress on blossoming of the

phrases and highlighting sensitive notes in a Raga, (e.g. Re, Ga, Dha in Todi) and in this process, there is every possibility of the Gayaki losing or lacking momentum. In fact, the Gayaki appears to suffer from this drawback when one listens to the cassettes of some of the stalwarts of this Gayaki of the later generation, like late ustad Sharafat Hussain Khan, which are sung in Ati Vilambit Laya (too slow a tempo) . This way of rendering is against the spirit of the Gayaki, I am pained to observe. The momentum was very well observed in the concerts of Ustad Faiyaz Khan and Vilayat Hussain Khan.

One of the major factors that contributed to create momentum is the placement of the Bols in relation to rhythm. In general it may be said that the placement of the letter of a word in between the two beats of the Tala helps create momentum. This can be better appreciated by a demonstration. The entire composition, is of prime importance. It should not be repetitive and monotonous. This makes demands on the creativity of the artist. Though this faculty is purely individual, guidance are given by a competent Guru to maintain momentum in the presentation.

I suppose, I have touched most of the important facets of Agra Gayaki that help to achieve an aesthetic experience of a high order. Thus, the Agra Gayaki, being one of the oldest, is multifaceted, possessing all the requisites essential to maintain dignity and grandeur of Khayal , full of compact and precise phrases, which are fully exploited, with complete command over Laya and Tala, yet, the Gayaki gives full freedom-nay, lays stress on it to sing with Abandon, without sacrificing any of the rich norms. Further, as shown above, it has a rich potential to go to the abstract, springing from the Abandon. It has also an attractive "Dhang" peculiar to itself. The most important fact according to me, is its capacity to present a Raga as per its emotive content, thus opening a broad spectrum to treat various Ragas to give full justice to their emotive content. The teaching of 18 Angs in this respect is considered very important. It is to be hoped that torch bearers of this Gayaki groom their disciples in at least preserving the rich values of this Gayaki, if not enriching these.

S.S.Haladankar
Samarth Nagar,A.H.S.C.No.-5,
Shivom,205, Andheri (W),Mumbai-58
Ph.(022)-6330774

पं.श्रीकृष्ण हलदनकर : सोदाहरण व्याख्यान

कुमार मुखर्जी साहब ने आगरा घराने की बाते बताई वह बहुत ज्ञानवर्धक थी। हमसे वे बुजुर्ग हैं। विद्या में भी उम्र में भी उसके बावजूद वे कहते हैं कि वे हमसे कुछ सीखना चाहते हैं,तो मैं उसे उनका बड़प्पन मानता हूँ और मेरे प्रति उनका अपार स्नेह साबित करता हूँ। इतना उदार मन मैंने अपने किसी गुरूबन्धु का नहीं देखा। **वे ''प्रतिफैयाज खाँ'' हैं। फैयाज खाँ को उन्होंने अन्धानुकरण से नहीं बल्कि खुली आँखों से सौन्दर्य दृष्टि से उठाया है।** वे गाते हैं तो लगता है फैयाज खाँ गा रहे हैं। मैं उन्हें बहुत मानता हूँ उनके खुलेमन, उदार स्वभाव और आगरा गायकी को उच्चस्तर के रूप में देख पाने की उनकी बौद्धिक क्षमता को देखकर। वे इस घराने का हित जितना साध रहे हैं शायद बयान न कर सकूँ।

मुझे फैयाज खाँ ने अत्यन्त प्रभावित किया है। मेरे गाने पर उनका असर है। साथ ही उस्ताद खादिम हुसैन खाँ से 15 वर्षों तक लगन की तालीम का मुझे सौभाग्य मिला। तालीम देने वाले बहुत गुरू हैं पर लगन की तालीम मिलना बड़ी बात है। इस कारण आगरा घराने की आत्मा तक मुझे पहुँचने का सुअवसर मिला। उनसे उस जमाने के अन्य शागिर्द भी तालीम पाते थे, पर अन्तरंग तालीम अपने पुत्र या पोते को ही मिलती थी। मुझे पुत्र के रूप में मानकर खाँ साहब ने सिखाया इस कारण से इस गायकी की अंतरात्मा का दर्शन हो सका। गुरू अन्य को राग चीजें बहुत बताएँगे, ये मिल सकती है। पर अन्तरंग में प्रवेश कड़ी खड़ी तालीम गंडाबन्ध शागिर्दों को ही मिलती है। मुझे यह सौभाग्य मिला, यह ईश्वर की मुझ पर कृपा है।

आगरा की तालीम हासिल करने से पहले मेरी धारणा थी कि आगरा घराने में लयकारी, ठोसगाना, बोल वगैरह ही हैं बाकी कुछ नहीं। पर एक दिन जब खाँ साहब ने मुझे मारूबिहाग जैसा मुलायम राग सिखाना शुरू किया तो मैंने मन में कहा, कि क्यों इस राग के पीछे ये पड़े हैं, मेघ दरबारी जैसे राग आगरा वालों को गाना चाहिये। मैंने कुछ नहीं कहा,गाता रहा। पर क्या कहूँ ? खाँ साहब ने जैसे ही बहलावा का लौचदार आवाज में लगाव शुरू किया तो मैं दंग रह गया। मेरे जयपुर से तालीम हासिल किये गए मेरे गले से वह निकलता ही नहीं था। नमूना मैं गाकर सुनाता हूँ-(कैसेट में - मारूबिहाग)-खाँ साहब हँसने लगे। बोले

सारे राग एक ही नमूने से नहीं गाये जाते। राग की तबीयत पहचानों। मेघ-दरबारी मारूबिहाग सब अलग-अलग है। मारूबिहाग बहलावा अंग से गाते हैं। मैने बहलावा के बारे में पूछा तो खाँ साहब बोले-जैसे माँ अपने बच्चे को पुचकार कर बहलाती है, सुलाती है - उसे बहलाना कहते हैं। इसलिये हमारे घराने में राग बढ़त के अठारह अंग हैं। उसे जानने से राग बढ़त में कोई कठिनाई नहीं होती। उन्होंने मुझे रागों के साथ इन 18 अंगों की भी शिक्षा दी। जैसे नट व उसके प्रकार गाते समय मैने गाया-(कैसेट)-। वे बोले ऐसा नहीं -''(कैसेट में)''- ऐसा होना चाहिये। ये अंग मैने मोगूबाई से सीखा था। तो मैंने कहा यह तो जयपुर गायकी है। तो वे बड़ी-बड़ी आँखे करके बोले, कौन बोला ? यह 18 अंगों में से एक है। ऐसे ही एक बार वे एक राग में एक स्वर जोर से गाने लगे। जैसे-तिलककामोद-(कैसेट में)जयपुर में किसी भी स्वर को जोर से गाना मना होता है सारे स्वर एक इन्टेन्सीटी में गाना होता है। मैं आँखें फाड़कर देखने लगा कि खाँ साहब समथिंग आब्जेक्शनेबल गा रहे हैं। वे बोले अरे भाई यह 18 अंगो में से एक अंग मांड है। हम लोग मींड और मांड एक ही समझते हैं। जैसे हम कहते हैं न-ट्रेन-वेन घर-वर। पर ऐसा नहीं है। मलुहाकेदार में भी मांड अंग का प्रयोग होता है-(कैसेट में)-इससे राग में लाइफ आता है। आगरा घराने में विशेष यह जो है अन्यत्र शायद दुर्लभ है- वह है राग की तबीयत के अनुसार गाना। मैं कहूँगा कि आगरा में यह है क्योंकि मेरे उस्ताद मे मुझे इसकी शिक्षा दी है। यह बहुत बड़ी बात है। इसे सीखने के बाद जब मैं अन्य घराने का गाना सुनता हूँ तो मुझे लगता है कि उनके गुरू ने यह नजर उन्हें नहीं दी है। सारे राग एक ही नमूने से सुनाई देते हैं। कागज पर एक डिजाईन परमानेंट है। उसी का स्टेम्प निकलता जाता है। अस्तु। राग श्री की रूपक ताल की बंदिश-खाँ साहब की ही बंदिश है,सुनाता हूँ -

(कैसेट)- गरीब निवाज हो ख्वाजा दुखियन के दुख दूर करो तुम...

अभी पंडित मुखर्जी साहब ने लयकारी के बारे में आपको बताया ,यह सच है कि आगरा की लयकारी बहुत प्रसिद्ध है लेकिन हमारे गुरू कहते हैं कि लयकारी वहीं तक करनी चाहिए जहाँ तक उसमें सुर का काम बना रहे और कानों को प्रिय लगे। इसके साथ ही आगरा घराना सुरीलेपन के लिए अधिक जाना जाता है। दुर्भाग्य से बीच का एक समय ऐसा आया कि आगरे को एकांतिक लय और ताल का घराना कहा गया पर यह सच नहीं है। कल के व्याख्यान में मैं इस पर कुछ कहूँगा। अभी इस घराने की गायिकी को मैं प्रस्तुत कर रहा हूँ।

(कैसेट लयकारी, गोंडमल्हार-ख्याल एवं तराने-अल्हेया बिहाग)

पं. श्रीकृष्ण हलदणकर जी
का पं. कामता प्रसाद त्रिपाठी द्वारा परिचय

परमादरणीय आज के सत्र के अध्यक्ष पं. हलदणकरजी तथा भवन में अपनी पूरी गरिमा से उपस्थित हमारे श्रद्धेय पं. कुमार मुखर्जी इं.क.सं.वि.वि. के समस्त शिक्षकगण, नाद ब्रह्म के साधक एवं तत्व तक पहुँचने के लिये अहर्निश प्रयासरत विद्यार्थीगण। यह तृतीय सत्र प्रारंभ होने जा रहा है। यज्ञ की तरह यह सत्र है। यज्ञ यानि यज्ञः कर्मसु कौशलम्- अपने कर्म में अधिक कौशल आ जाए यही यज्ञ है। कार्ययज्ञ। सत्र यानि सत्+र जो सत्य है उसका जिसके परित्राण हो वह है सत्र। जो वास्तविकता है उसके परित्राण के लिये यह जो अनुष्ठान आयोजित है, उनके चरम सत्र के पूर्व का सत्र यह है। प्रत्यक्ष मंच पर आने में मुझे संकोच है। क्योंकि संगीत सेमिनार है। मैं रसिक हूँ- म्यूज्येकोलॉजी पर जानता बोलता सिखाता हूँ। पर यह प्रयोग की वेदी है। इस पर किस नाते चढ़ने की धृष्ठता करूँ ? सोच रहा हूँ। सत्र के संचालन की जहाँ तक बात है कर्तव्य निभाना हमारा धर्म है। उसी का निर्वाह कर रहा हूँ। पं. हलदनकरजी के बारे में क्या कहूँ ? क्योंकि जब दिन होता है। मार्तंडमंडल दृष्टि सापेक्ष होता है,सूर्योदय हो जाता है तो दिन के परिचय की आवश्यकता नहीं रह जाती। कस्तूरी के गन्ध की कोई अलग से एडवरटाईजमेंट नहीं करनी पड़ती। आप आगरा घराने के मूर्धन्य कलाकार विद्वान हैं। आगरा घराने पर आपने महान ग्रन्थ लिखा है। जिसे सर्वश्रेष्ठ वांगमय का पुरस्कार मिला है। आगरा घराने का सेमिनार है। आप पर कुछ कहना यानि मान लीजिये कि आगरा घराने पर ही कहना है। आपके ग्रन्थ का शुरू से अंत तक मैने पठन मनन अध्ययन किया है। मेरा अनुभव आपके ग्रन्थ के बारे में कहना प्रासंगिक होगा- ग्रन्थ का नाम संगमोत्सुक या मिलनोत्सुक दो तानपुरे हैं। दो तानपुरे दो घरानों आगरा व जयपुर के प्रतीक हैं। ग्रन्थ पढ़कर और आपसे मिलने के बाद सच कहूँ जो कुछ अनुभव हुआ, वह ईमानदारी से मैं कह रहा हूँ- कि- जिस अनुभूति को वाणी नहीं दी जा सकती उसे आपने मुखर कर दिया। संगीत कला के माध्यम से सौन्दर्य के जिस स्तर पर हम पहुँचते हैं,जहाँ वाणी मौन हो जाती है, जिसको रसात्मक दशा पर पहुँचना कहते हैं, उस रसात्मक दशा पर यदि कोई संगीत पहुँचा रहा है, तो लोग कहेंगे कि हमें संगीत बहुत अच्छा लगा। हम भाव विभोर हे गए, अत्यन्त या परम आनंदित हो गए वगैरा-वगैरा। इतनी समीक्षा तो सभी कर लेंगे परंतु संगीत के द्वारा इस दशा में क्यों पहुँच रहे हैं ? कैसे पहुँच रहे हैं ? क्या तत्व उसमें है ? क्या करने से संगीत बिगड़ जाता है और क्या करने से उसकी खूबसूरती लालित्य सौन्दर्य बढ़ जाता है

? ये वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है जो इस ग्रन्थ में है। दीर्घ अनुभव के आधार पर, सुनी हुई महफिलों के भाव पक्ष के द्वारा बंदिशों का उदाहरण देकर, जैसा समझाया गया है वैसा अद्वितीय है। रसानुभूति को यदि वाणी दी जा सके तो जो कुछ हो वह प्रस्तुत ग्रन्थ में है। राग प्रस्तुति के लिए अनुकूल कौन से बिन्दु हैं, घराने में कौन से ऐसे तत्व हैं जो अन्य से उसे पृथक करते हैं, कौन से ऐसे सौन्दर्य के निकष हैं जिस पारस पर कसे जाने पर खरा उतरने वाला आगरा घराना इतना महिमा मंडित हुआ है, और अनेकानेक झंझावातों में भी चल रहा है, इस दृष्टि से, व्यवहार पक्ष से, प्रायोगिक पक्ष से जब इस ग्रन्थ ''मिलनोत्सुक दो तानपुरे'' को हम देखते हैं, और इसकी बातों को प्रयोग से भी करके दिखाया जाता है तो एक उत्कृष्ट कृति का पूर्ण आनंद इसमें हम पाते हैं। इसमें सुन्दर-सुन्दर नए-नए नाम भी दिये गए हैं समीक्षा के नए-नए ढंग को, वस्तुस्थिति को, रेखांकित करने वाले, सटीक नाम भी हैं। सौन्दर्य की तह तक भावकों को पहुँचने में वह मदतगार है। अमुक राग, या अमुक गायक का गाना मुझे अच्छा लगा इतना कह देना भर पर्याप्त नहीं। उस प्रस्तुति में कौन से तत्व थे ? उसमें किस घराने की क्या विशेषता थी? अमुक सही क्यों? अमुक गलत क्यों ? क्या करने से लालित्य की अनुभूति सामान्य होती है व किससे द्विगुणित ? इन सबको सप्रमाण कण्ठ से सिद्ध करना यह एक पूर्ण तपस्या का कार्य है जो पं. श्रीकृष्ण हलदणकर जैसे सौभाग्यशाली व्यक्ति के द्वारा सम्पन्न हुआ है। इनका व्याख्यान शिक्षकों को लाभ देगा। वे शिक्षित होकर अपने शिष्यों को यह समझाएँगे, ऐसी एक धरोहर निरंतर रहेगी। जब तक मनुष्य का जीवन है तब तक सौन्दर्य की कामना है। जब तक सौन्दर्य की कामना है तब तक संगीत है। जब तक संगीत है उसके लिये घराने बनते रहेंगे। आते रहेंगे हमारे बीच हरिदास, बैजू, तानसेन। पं. श्रीकृष्ण वाग्गेयकार भी हैं। 'रसपिया' की मुद्रा सहित आपकी मधुर रस की बौछार करने वाली बंदिशें संगीत जगत में बड़े ही श्रद्धा व प्रेम सहित गायी जाती है। इन बंदिशों में जैसी की आपने कल के व्याख्यान में 18 अंगों की चर्चा की थी ,वैसे18 अंगों से युक्त ये बंदिशें भी है। कल उनके द्वारा रचित एक तराने का आनंद हमने लिया ही था। पं. हलदनकर जी के 75 वर्षों के दीर्घ अनुभवों में अध्यापन, सोदाहरण व्याख्यान, कार्यक्रम, सेमिनार आयोजन, शिष्य तैयार करना एवं इनके साथ केमिकल एडव्हाईजर के रूप में कार्य करना भी शामिल है। आप तबला एवं हार्मोनियम उत्तम बजाते हैं। नाटकों में भी स्मरणीय भूमिका निभाने का आपने कार्य किया है। ऐसे ये अष्टकोणों से परिपूर्ण श्रीकृष्णजी आपको अपना सारगर्भित व्याख्यान दें ऐसी मैं उनसे नम्र प्रार्थना करता हूँ।

(आचार्य कामता प्रसाद त्रिपाठी)

पं.श्रीकृष्ण हलदनकर जी का सोदाहरण व्याख्यान

(22 फरवरी)

पं. कामताप्रसाद त्रिपाठी जी ने मेरे बारे में बहुत कुछ कहा। इससे मेरे बारे में आप लोग बहुत आशान्वित होंगे, कि मैं आपको बहुत ज्यादा कुछ दे सकूँगा। पर आपकी अपेक्षा मैं पूरी कर पाऊँगा या नहीं पता नहीं, पर जो कुछ मेरे सांगीतिक जीवन के अनुभव हैं उसको आपके साथ बाँटना चाहता हूँ। सेमिनार में पिछले सत्रों में बहुत सुंदर चर्चायें हुई, अनेक बिन्दु भी उभरकर आए हैं। सेमिनार से भावी पीढ़ी के विद्यार्थियों को निश्चित रूप से कुछ मिले इस ओर मेरा प्रयास रहेगा। विश्वविद्यालयों के संगीत शास्त्र पाठ्यक्रमों में घराने का टॉपिक भी रहता है। बच्चे इसके लिये कई किताबें पढ़ते हैं। पर कुछ किताबों में ऐसी जानकारी लिख दी जाती है जिससे मन पर प्रतिकूल या असत्य या तथ्य से परे का परिणाम बैठ जाता है। ऐसी पुस्तकों में एक है वा.ह.देशपाण्डे की पुस्तक- मराठी में घरंदाज गायकी। हिन्दी में शायद-घरानेदार गायकी और अंग्रेजी में इन्डीयन म्यूजिक ट्रेडिशन है। इस ग्रन्थ में विभिन्न घरानों के सौन्दर्य पक्ष की चर्चा करते हुए उनका स्तर या स्थान या ग्रेडेशन किया गया है। इसके लिये उन्होने सेमी सर्कल थियरी का सहाय्य लिया है। एक अर्धचन्द्राकार के एक बिन्दु पर अत्यधिक लय का आगरा घराना और दूसरे अंतिम बिन्दु पर अत्यधिक सुर का किराना घराना रखा है। अर्धचन्द्राकार के ठीक सेंटर में सुवर्ण मध्य है। उन्होने ही यह नाम दिया है, उस पर जयपुर घराना रखा है। उसे श्रेष्ठ साबित करने का प्रयास किया है। क्योंकि उसमें सुर और लय दोनों बराबर बताए गए हैं। मैने इस थियरी को डिस्पूट किया है। संगीत कला विहार के अंक में मैने इसका खण्डन सर्वप्रथम किया। आपने शायद पढ़ा हो। इस लेख के प्रकाशन के बाद जब-जब मैने भारत के लगभग सभी यूनिवर्सिटीज में व्हिजिट दी, तो मैने पाया कि विद्यार्थियों के मन में आगरा घराने के बारे में इतनी गलत फहमी इस पुस्तक के कारण भर गई थी जिसे मेरे लेख से निराकरण का अवसर मिला। इसलिये मैने आगरा घराने का इतिहास अपने ग्रन्थ ''मिलनोत्सुक दो तानपुरे'' में किया है। इसमें आगरा घाराने के प्रवर्तक घघ्घे खुदाबख्श के सुरीले पक्ष को सर्वप्रथम रखा है। घघ्घे खुदाबक्ष ग्वालियर से सीखकर जब आगरा लौटे तो उनका सुरीला, सधा हुआ और भावपूर्ण आवाज और राग का प्रस्तुतीकरण सुनकर श्रोता मन्त्रमुग्ध से हो जाते थे। उनका सुर का असर ऐसा था कि उनके टोपी बदलभाई बहरामखाँ भी रोने लग गए। घघ्घेजी ने पूछा कि क्यों रो रहे हैं ? तो मजाक में बहरामखाँ

बोले - तुझे अभी तक गाना नही आया इसलिये मैं रो रहा हूँ। दोनो टोपी बदल भाई थे। घघ्घेजी का ऐसा सुरीला गाना था इसलिये लोग रोते थे। लयकारी से थोड़े ही यह बात बनती ? तो वह सुर की परंपरा गुलाम अब्बास खाँ, कल्लन खाँ, फैयाज खाँ और मेरे गुरूजी पद्मभूषण उस्ताद खादिम हुसैन खाँ, अनवर हुसैन खाँ तक आई है और उन्होने मुझे भी पूरी तालीम देकर दी है। इसलिये मैं जी तोड़कर कहता हूँ कि आगरा घराना केवल लयकारी का नहीं सुर की तासीर और मार का घराना है। एक बार मैने विलायत हुसैन खाँ से पूछा कि आप तो पूरे हिन्दुस्तान में घूमे हैं। आपने सुरीले गव्वैये कौन-कौन से सुने ? वे बोले - ''मैने दो ही सुरीले गवैये सुने एक अब्दुल करीम खाँ और दूसरे हमारे गुलाम अब्बास खाँ।'' इससे क्या साबित होता है ? कि आगरा घराने में सुर की परंपरा किराना घराने से भी पहले की है। तब तक हमने तो गुलाम अब्बास खाँ का नाम भी नहीं सुना था। पूछने पर उन्होने हमें बताया कि वे फैयाजखाँ के गुरू और नानाजी थे। इतने सुरीले थे वे कि वे बागेश्री गाते थे, तो हम रोते थे। गुलाम अब्बास की आयु 100 से ऊपर हुई। उनके पास आने का सौभाग्य खादिम हुसैन को मिला। वे कई किस्से हमें कभी सुनाते थे। एक बार खादिम हुसैन खाँ को गुलाम अब्बास खाँ ने पूछा कि '' अरे खादिम कल फैयाज कैसे गाया ?'' खादिम बोले ''क्या कहूँ उन्होंने तो मेहेफिल को रुला दिया'' इस पर गुलाम अब्बास बोले हाँ ''अभी तो उसे इत्तासा सुर आया है।'' सोंचिये गुलाम अब्बास कितना सुरीला गाते होंगे। एक बार फैयाज खाँ रियाज कर रहे थे। उनका इत्तासा सुर कम लगा। बस बाहर से सुन रहे गुलाम अब्बास ने हाथ का सरौता फेंककर मारा जो सीधे फैयाजखाँ के माथे पर लगा। खून की धार बहने लगी। पर सुरीला गाने की, सुर पर से जरा सा भी ध्यान न हटाने की शिक्षा मिली। महफिल में कोई सुर की तारीफ करते तो फैयाज खाँ अपने माथे की चोंट का निशान दिखाते थे। ऐसी अनेक घटनाएँ आगरा घराने के सुरीलेपन की हैं। हमें भी सुर की तालीम दी गई थी- केवल लयकारी की नहीं।

एक दिन सुबह जौनपुरी गा रहा था। तानपुरे उस दिन बड़े ही सुर में लगे थे। मैंने नोमूतोम् शुरू की। तार सप्तक के गंधार ऋषभ पर जब मैं लागडाट से गाने लगा तो सत्यशील देशपाण्डे रोने लगा। मैने देखा कि वह रो रहा है पर मैंने नोम् तोम् जारी रखी। चीज शुरू करने जा रहा था कि उसने ही मुझे रोका। बोले- क्या कहूँ ? फैयाज खाँ के बारे में सुना था कि वे गाते थे तो श्रोतागण रोने लग जाते थे। पर उनकी रेकॉर्ड सुनकर यकीन नहीं होता था पर आज यकीन हो गया। वे ऐसा ही गाते होंगे। वह परंपरा आज मुखर्जी साहब के पास है। सौभाग्य से हमें मिली है। तो ऐसा कैसे हो सकता है कि आगरे में सुर नहीं। एक बार मेरी गुरू बहन किशोरी आमेणकर ने अपने घर में अनवर हुसैन खाँ साहब का गाना रखा। वे

खादिम हुसैन खाँ के छोटे भाई हैं। उन्होंने जौनपुरी राग ही गाना शुरू किया। जब उन्होंने तार सप्तक के रें को (नोम् तोम्) आलापी में गाया तो सब कोई वाह-वाह क्या बात है, बहुत अच्छे...ऐसा कहने लगे। उतने में उन्होंने दोनों तानपुरों पर हाथ रखकर बन्द कर दिया और बोले ''जनाब आप सब लोगों ने जो अभी मुझे दाद दी है वह मेरे सुर को दाद दी है लय को तो दाद नहीं दी है ना? लोग कहते हैं आगरा घराने में सुर नहीं है। ये क्या बात है ?'' सारे जयपुर वाले चुप। कोई कुछ बोल न सका। उस समय वहाँ वामनराव भी बैठे थे। वामन राव यह समझकर भी ग्रन्थ में अपने सुवर्ण मध्य को बदलना नहीं चाहते, यह कैसी दुःख की बात है। तात्पर्य यह है कि आगरा में सुर के असर की तालीम और परफारमेंस अभी तक चालू है। इस सुर के अलावा लयकारी की विशेषता भी इस घराने में है। विलायत खाँ, उ. खादिम हुसैन खाँ, फैयाज़ खाँ इन सबकी लयकारी मुंबई में इतनी लोकप्रिय हुई कि लोग उसे ही सुनने प्रोग्राम में आने लगे। तबले पर सामता प्रसाद, गुदई महाराज जैसे वादकों के साथ द्वंद्व करने की हिम्मत और किसी गवैये में नहीं थी। तो ये तबला गायन की जुगलबंदी मुंबई में खूब हुई। इससे आगरा घराने का नाम बदनाम हुआ कि इसमें खाली लयकारी ही है। इसमें लोगों का दोष नहीं। आगरा घराने के गायकों ने लोगों की डिमांड पर वैसा ही दिया और इस कारण उनके कारण पूरे घराने पर लयकारी की सील लग गई। ये नहीं होना चाहिये था। जिन लोगों की धारणा बनी उन्हें ये इतिहास मालूम नहीं था। विलायत खाँ की भी जब तबीयत लगती थी, तो उनके सुर के असर को मैं क्या कहूँ, एक किस्सा मैं सुनाता हूँ। जबकि वे लयकारी के लिये मशहूर थे। संगीत भास्कर पंडित भास्कर बुवा बखले जब स्वर्गवासी हुए तो उनके परम् शिष्य मास्टर कृष्णजी ने कहा ''बस अब सूर का गाना चला गया उनके साथ।'' विलायत खाँ ने सुना तो वे बोले कुछ नहीं चुप रहे। पर कुछ महीनों बाद जब मारवाड़ी विद्यालय में उनका गाना आयोजित हुआ तो श्रोताओं में सामने ही मास्टर कृष्णराव जी बैठे थे। बस फिर क्या ? उसं दिन विलायत खाँ ने तबीयत से ऐसा सुर में गाया कि सब वाह-वाह कर उठे। कार्यक्रम के बाद कृष्णराव मास्टरजी खड़े होकर बोले-''वाह, वाह खाँ साहब, क्या सुरीला गाया।'' इस पर खाँ साहब ने तपाक से जवाब दिया, ''हम क्या सुर का काम करेंगे ? सुर तो भास्कर बुवा के साथ चला गया न ?'' तो सब उस्तादों के पास ऐसा सुरीला काम था। विलायत खाँ के बड़े भाई महमद खाँ के पुत्र बशीर खाँ थे। बड़े विद्वान थे। वे मेरे बड़े भाई को सिखाने के लिये रोज घर पर आते थे। उनके गाने में ऐसा सुर का असर था कि रामकली के केवल म प ध नि ध प को आधे घंटों तक इतने ढंग से, रंग से गाते थे कि बान्धकर रख देते थे। उस जमाने मे मैं कॉलेज में पढ़ता था। कॉलेज जाने के लिये किताबें उठाकर निकलता था,

पर उनके सुर मुझे ऐसा बान्ध देते थे कि मैं किताब-विताब फेंककर वही सुनने बैठ जाता था। तबला बजाता। बशीर खाँ का एक और किस्सा मैंने सुना है कि बशीर खाँ की शादी में सब उस्ताद एकत्रित हुए थे। रात दिन गाना चला। एक बार सुबह फैयाज खाँ बोले बशीर तुम महफिल शुरू करो हम बाद में गाएँगे। बशीर खाँ ने देसी राग शुरू किया। उसमें धैवत का काम ऐसा कुछ वे करने लगे कि फैयाज खाँ खुद रोने लगे, बोले- "बशीर ये क्या चल रहा है वाह-वाह। आज की महफिल तुम ही गावो हम नहीं गाएँगे।" ऐसे हर उस्ताद के पास सुर का काम था। ...आपकी जानकारी के लिये बता दूँ आगरा घराने में देसी राग का धैवत सुर एक विशेष दर्जे का लगता है जिसे सकारी भी कहते हैं। वह न शुद्ध है न कोमल।

आगरा घराने के साथ संयोगवश यह हुआ कि फैयाजखाँ के अलावा अन्य किसी का गाना उतना लोगों के सामने नहीं आया। खैर आप सबको तो आगरा के सुर का काम समझ में आ गया होगा। गलतफहमी दूर हुई होगी। एक बात और है। घरानों का स्थान निर्धारण। कौन सा घराना सबके ऊपर है, यह कैसे कोई तय करे ? उसके लिये किन मापदण्डों को लेना चाहिये इस पर कुछ विचार होना चाहिये। मेरी पुस्तक में मैंने एक निकष रखा है। गायकी के दर्जे को तय करने के लिये उसमें निम्नलिखित बातें होनी चाहिये-

(1) डिग्निटी- वजनदारी- गरिमा-ग्रेसफुलनेस

(2) प्रमाणबद्धता - प्रिसीजन- परिमितता- सिलेक्टिव चॉइस-कम शब्दों में अधिक भाव-मिनीमम फ्रेज में मेग्जिमम एक्सप्रेशन

(3) अमूर्त की ओर झुकाव-एब्स्ट्रेक्ट की ओर जाने की क्षमता।

यह अमूर्तता क्या है ? इन जनरल इसे समझाना हो तो मैं उदाहरण दूँ कि जैसे फिल्मी गाने बच्चे-बच्चे गाते हैं, सुनते हैं, गुनगुनाते हैं। इससे हायर है ठुमरी ग़ज़ल। उसे बच्चे-बच्चे तो नहीं गाते क्योंकि उसके लिये हायर अन्डर स्टेंडिंग होना चाहिये। फिल्मी संगीत से अधिक। क्योंकि फिल्मी संगीत ठोस है। ठुमरी उससे कम ठोस है। यानि एब्स्ट्रेक्ट की तरफ झुकती है। इसके आगे ख्याल, इससे भी एब्स्ट्रेक्ट होता है। ख्याल एप्रिशियेट करने वाले लोग इससे भी कम होते हैं। जिसका स्तर ऊँचा होता है वह ख्याल एप्रिशिएट कर सकता है। अर्थात् जैसे जैसे संगीत विधा अमूर्त की ओर झुकती जाती है- वैसे वैसे उसका स्तर ऊँचा होता जाता है। ऐसे ही ख्याल गायन के जिस घराने का झुकाव अमूर्त की ओर अधिकाधिक रहता है वह घराना ऊँचा माना जाता है।

(4) सहजता-(ईज) कोई भी कला हो, साहित्य चित्र संगीत, जिस कला में प्रावीण्य करने के लिये बरसों संघर्ष करना पड़ता है। दसियों वर्षों की तपश्चर्या

के बाद सहजता आती है। देट ईस एट द टीप ऑफ एचिव्हमेंट। वो सहजता गायकी में आने पर वह परमोच्च बिन्दु हासिल करती है। ऐसे 4-5 फैक्टर्स जिस गायकी में हो वह ऊँची या फर्स्ट या टॉप बन सकती है। इन चार पाँच निकषों को आप अपने मन में रखकर किसी गायक का गाना सुनिये। तब मूल्यमापन करने के लिये ये मार्गदर्शक सिद्ध होंगे। अब आगरा गायकी में ये किस प्रकार विद्यमान है, इसे हम देखेंगे।

वजनदारी (अ) आवाज की (ब) पेशकारी की। फैयाज खाँ इसके लिये आदर्श गायक थे। मैंने सोचा कि उनके गायन व आवाज में इतना वजन व प्रभाव कैसे आया ? जिस सुर पर उनकी आवाज जाती थी, वह जीवित हो उठता था। रोमांच कारी होता था। मैने एनलाईज किया तो पाया कि उनकी आवाज में एक घुमार, दो जवारी, तीन गमक, चौथा वजन और पांचवा अनुरणन था। इन गुणों के बिना आवाज बेअसर होती है। (कैसेट) आवाज में रोशनी, प्रेम, सुर में भारीपन, घुमार, वजन, जवारी का प्रयोग। पेशकारी के वजन के लिए भी मींड आस गमक, श्वास जरूरी है।

(3) लय :- आजकल हम सुनते हैं ति-र-कि-ट अतिविलम्बित लय में गाढ़ देते हैं जब की गाते हैं दृतकाम-ये तो मैं कहूँगा अतिशय विलंबित लय में लाईट म्यूजिक गा रहे हैं। ख्याल नहीं है। ताल की लय और ख्याल व काम की लय परस्पर संबद्ध हो। पृथक नहीं। जैसे आप एक राग सुनिए इसमें लय को देखिए- खम्बावती - आलीरी मैं जागी सगरी रैन पिया नाही आए (एक खास लय में गाने का महत्व-) डिग्निटी के लिये जरूरी है।

मोगुबाई एक बार सीख रही थी। अलादिया खाँ साहब के सिखाते-सिखाते अचानक आँसू टपकते देख मोगूबाई घबरा गई। पूछा-"क्या मुझसे कोई गलती हुई ?" तो अलादिया खाँ बोले-"नहीं बेटी तुम्हारी कोई गलती नहीं-गलती मेरी है। ये जो सुरावट मैं बता रहा हूँ इसे एक साँस में लेना चाहिये। पर बुढ़ापे में मेरी साँस टिकती नहीं, इसलिये दो टुकड़े में लेता हूँ। इस पर रोना आ रहा है।" पहले के गायक कितने ईमानदार थे। आजकल का जमाना ये आया है कि गुरू बोलते हैं मैं दो साँस में गा रहा हूँ (तुम एक में मत गाओ) तुम भी दो ही बार साँस लो। लंबी सांस का एक एग्जामपल मैं और दूं- केसर बाई एक बार धीमा झप ताल में गा रही थी-तान में जब फिरत की जलद में शुरू हुई तो एक तान सबको लगा कि मुखड़े तक फिनिश नहीं होगी। सब सोंचने लगे अब ये क्या करेंगी। या तो तान बीच में छोड़ेगी या साँस लेंगी। पर उन्होने ऐसा कुछ न किया। तान उसी साँस में कंटिन्यू रखकर दूसरा आवर्तन भरकर सम पकड़ी। ऐसी दम साँस थी। सुनने वालों की साँस अटकाने वाली साँस थी उनकी।

गुलाम अब्बास खाँ का साँस 18-18 त्रिताल अवर्तन चलता था। ऐसा कहते हैं। यह आज अविश्वसनीय है पर 8 आवर्तन भी हम गा लें तो यह क्या कम है ? यह परंपरा-घघ्घेजी-गुलाम अब्बास, कल्लन खाँ और हमारे गुरू खादिम हुसैन खाँ तक चली आ रही थी । एक बार खाँ साहब ने मेरे साँस की परीक्षा(टेस्ट) लेने के लिये एक बार गाने को कहा ।मैं हंसने लगा सोचा मेरी तो जयपुर की तालीम है। खाँ साहब क्या साँस की टेस्ट लेंगे। उन्होंने सां लगाया। मैने आवाज मिलाई। मेरी साँस खतम। उन्होंने इशारा किया फिर सुर लगाने... इस प्रकार मेरी तीन बार साँस लगाने पर खाँ साहब का पहला साँस समाप्त हुआ। उस समय खाँ साहब 50 के थे, मैं 30 का था। सोंचिये उनके पूर्वज कैसे होंगे। वे हमेशा कहते भाई गाना बजाना साँस का काम है। साँस बढ़ाने के लिये एक साँस में ज्यादा सुर गाना रखना चाहिये। जैसे(कैसेट में) साईकोलॉजिस्ट कॉपरेशन फ्रॉम द माईंड- इसमें होता है। योग के प्रकार से भी साँस बढ़ती है। बीच के दो बचे हुए फेक्टर्स हैं।

(1) **ताल पर प्रभुत्व :-** केवल सम पर आना पर्याप्त नहीं। ताल भूमि है। उस पर कमांड जरूरी है। प्रभुत्व यानि लयकारी नहीं। खाँ साहब ने हमें हर ख्याल बिना लयकारी के पेश करने की शिक्षा दी। हम जो चाहें वे फ्रेजेज बाहुकूम गा आए। इसमें टुकड़ा नहीं जोड़ें। पेटर्न बिल्डिंग करने के लिये ताल पर हुकूमत जरूरी है। ए कंपोजिशन इज द हार्ट ऑफ ऍनी म्यूजिक प्रोडक्शन। हार्ट नहीं तो सब टाईम पास है। तबले पर ताल क्यों है ? इससे गाने में सहजता आती थी। फैयाज़ खाँ में ऐसी सहजता थी। ताल तो उनके लिये लगता था मानो सेवा में हाजिर है। वे ताल के पीछे नहीं, ऐसा लगता था, मानो वे जहाँ कहेंगे वहाँ सम आने को हाजिर है, इतना सहज उनका गाना और ताल पर प्रभुत्व था।

(2) **राग की शुद्धता :-** ताल का एस्थेटिकलसेंस तो हम जान गए पर लयकारी से वह अलग है। उसी तरह राग शुद्धता भी सौन्दर्य वर्धन हेतु है। वह साधन है उच्च स्तर प्राप्त करने का। राग शुद्धता व्याकरण नहीं, साधन है सुन्दरता है। हर राग का अपना-अपना भाव होता है। नॉट ऑन्ली राग स्केसेटन। स्वर संगति व राग के खास लगाव ये महत्वपूर्ण हैं। उनपर ध्यान दिया जाना जरूरी है। आगरा में दोनों पर ध्यान देकर राग स्वरूप व राग भाव शुद्ध रखा जाता है। उदाहरणार्थ यमन-खेम कल्याण। स्वर दोनों में समान हैं पर स्वर संगति, उच्चारण लगाव भिन्न होने से दोनों का टेंपरामेंट बदल जाता है। स्वर संगति लें, पर लगाव ना लें तो काम नहीं चलेगा। जैसे (कैसेट में) तो

राग प्रकृति सबसे महत्वपूर्ण है । उसे हमेशा जतन किया जाता है । आगरा में बरवा-सिन्दूरा, बसन्त -परज, गारा - जैजैवंती, भूप-देशकार। यह देखिये कि बहार-बागेश्री गोरखकल्याण एक ही फ्रेज में अलग हो जाते हैं। ध नि ध म सबका अलग-अलग। केवल म से बहार बागेश्री-मालकौंस भीमपलास को अलग पहचान देने तक सूक्ष्म विचार हुआ है आगरा घराने में । एक निषाद से यमन बिहाग शंकरा स्पष्ट करते थे फैयाज खाँ । इसके पीछे व्याकरण नहीं राग शुद्धता-भावपूर्णता व सौन्दर्य दृष्टि है । आज तो सब लाईट ट्रीटमेंट से गाते हैं । रेप, संगति कई रागों में कई तरह से कैसे लगती है यह हमें बताया गया ।

(3) **स्थाई के अंग से गाना-** घघ्घे जी को जैतराग क्या राग है मालूम नहीं था, परंतु उनमें 12-15 बंदिशें मुखड़े के शब्द के आधार पर से मालूम थी। वे राग को आरोह या वादी वगैरा से नहीं स्थाई के अंग से गाते थे । इसके पीछे क्या कारण है? वह सौन्दर्य दृष्टि+कन्टीन्युईटी । सातवाँ निरंतराता । कोई भी रचना बिना कन्टीन्युईटी की प्रेरणा के सुंदर नहीं बन सकती । स्थाई जहाँ पूरी हुई वहीं से काम करना टेक्नीक नहीं एस्थेटिक्स है ।

(4) षड्जभरना बीच-बीच में सा स्थापित करने से मुख्य स्वर आधार स्वर लुप्त नहीं होता । वातावरण की कंटिन्यूइटी बनी रहती है एस्थेटिक्स के लिये । सारी बातें उसी के लिय है । टेक्नीक तो उसे बाद में बनाया गया ।

(5) आगरा गायकी में पेश करने का एक निजी ढंग है, शैली है । बोलों का खास उच्चारण है । बोलों में आ अँ होता है । (कैसेट) ...कैसे-कैसे बोलत मोसे लेगवा । ढंगदार उच्चारण,नोजल आवाज, शैलीदार, लाडलेपन से प्रेम आता है । देखो सैंया तेरे बोलन बिन पूछो नाहि सास ननद को बात । लोगवा-व्वा-सुर मेंअटूट धागा होना चाहिये । सुर अखण्ड रहना चाहिये । आगरा घराने में ठुमरी की परंपरा नहीं है । फैयाज खाँ ने शुरू कराई । ध्रुपद धमार नोम-तोम है -(सिन्दूरा का धमार कैसेट पर) जैसा कि सुबह मुखर्जी साहब ने बताया, दरसपिया ने अनेक ठुमरियों की रचना की थी । वे अतरौली के थे पर आगरा से संबंधित थे । ये बड़ी इन्ट्रेस्टींग न्यूज है । इस पर रिसर्च वर्क होना चाहिये । दरसपिया आगरे के नत्थन खाँ के ससुर थे । गुरू भी थे और इनकी दोनों पुत्रियाँ आगरे के दो उस्ताद फैयाज खाँ और अब्दुलळा खाँ को ब्याही गई । इससे गायकी बंदिशें आदि का आदान प्रदान होता रहता था ।

सोदाहरण व्याख्यान

पं. कुमार मुखर्जी –

आगरा घराने के दो बड़े-बड़े सूरमा उस्ताद पूर्वजों के गाने का नमूना मैं पेश करना चाहता हूँ। क्योंकि हमारे उस्ताद , उनके उस्ताद सभी का उसमें योगदान होता हैं ।अपने उस्ताद का नाम लेना ही चाहिए और उस्ताद से ही हमारा अस्तित्व हैं । यह हमारा एक सांगीतिक कर्तव्य है । कुछ बाते आगरा घराने के बारे में बबनजी ने बड़ी महत्वपूर्ण कही है। उन्हीं को मै आगे बढाऊंगा। उन्होंने हमारे बारे में जो कहा हमारे लिये बडे इज्जत की,गर्व की, नाज़ की बात है। सारा श्रेय, मुझे **प्रति फैयाज खाँ** पदवी देने की उनकी कोशिश उनका बड़प्पन है। पर साथ-साथ यह भी मैं कबूल करता हूँ कि जैसा मैंने कहा कि - **बबनजी का गाना सुनने के बाद और उनकी तालीम देने की पद्धति देखने के बाद मेरी तबियत होती है कि आज इस उम्र में भी मैं उनसे तालीम लूं यह कोई अतिरंजित बात नहीं है।** इसकी वजह यह है कि हमने जो गाना गाया है। उसके बारे में आपको सुनकर के ताज्जुब होगा कि एक तो हमारा अपना तानपूरा था ही नहीं। हम हमेशा गवैय्यों से मिलने जाते रहते थे। आदान-प्रदान करते थे। घर से बाहर निकल के थोड़ा बहुत रियाज कर लिया करते थे। मेरा अपना खुद का तानपूरा तब हुआ जब मेरी उम्र 29 वर्ष की हुई। तब तो मैं स्टडी, केंरियर बिल्डिंग इत्यादि में इतना लगा हुआ था कि क्या कहूं। और जब मैं बाकायदा सारे ग म प ध नि सा करने लगा तो मेरी बीबी घर से निकल जाती थी। वो बड़ी सुरीली औरत है। गाना उन्होंने किया नहीं इस वजह से कि मेरी तरफ उनका ध्यान टूटेगा। पर सुरदार हैं। करीब एक साल बाद वो किसी से कह रही थी कि अब इनके गले में कुछ-कुछ सुर आने लगा है। श्री कृष्ण जी (बबनजी) ने भी बाहरी फिल्ड का कैरियर बनाया था,पर उन्हें सही तालिम, वो भी बीस बरस तक और वो भी खादिम हुसैन खाँ से सही तरीके से मिली। वो मामूली तालीम नहीं है। पुराने जमाने के उस्ताद तीन अलग-अलग तरह की तालीम देते थे। एक घर के बच्चे बेटे दामाद समधि और भांजों की तालीम। दूसरे तवायफों की तालीम, तीसरे बाहरी शागीर्दों की तालीम। तो लड़के,दामाद को खुलकर सिखाते थे। तवायफों को उतना ही सिखाते थे जिनसे उनका जरूरत के मुताबिक काम चल जाय। और बाहरी शागिर्द तो बैठे-बैठे सुने और सीखे। तो जब मैं बुढापे में याने कि एडव्हांस स्टेज में उस्ताद अता हुसैन खाँ के पास गया तो उन्होने यही कहा कि - ''बहुत देर हो गई है मास्टर साहब आपको हमारे पास आने में ''। तो फिर उन्होने हमें सिर्फ स्थायी अन्तरे देना शुरू किया।

एक दिन उन्होने जब हमें गाराकान्हडा की स्थाई बताई तो हमने कहा उस्ताद जी हमें जरा रास्ता भी तो बतला दीजिए। तो कहने लगे कि अरे भई आपको स्थाई अन्तरा दिया है, इसी को लेकर चलिये। इसी में तो रास्ता दिया हुआ है। क्या परेशानी है ?आप तो गाते भी हैं...। तो सबसे इम्पोर्टेट पाइन्ट जो आगरे घराने में है वह क्या है ? इसी घराने में क्यों ग्वालियर,जयपुर, में भी बंदिश का ये ही महत्वपूर्ण स्थान है। हमने पं. शरदचन्द्र अरोलकर जी से पूछा तो वे बोले कि ग्वालियर में हम बंदिश को अष्ट दिशा से देखते है। अष्ट दिशा क्या है ? ये तो बताया नहीं उन्होने। आठ दिशा हो या ना हो पर इससे यह पता चलता है कि बंदिश कितनी इम्पोर्टेन्ट चीज है। यह बताया उन्होंने। इस समय हमारे उस्ताद कहते थे कि बंदिश को चिपककर गाओ। यानी आपकी इनिंग्स जो हैं क्रिकेटिंग टर्मस में उन इनिंग्स को बिल्ड-अप कीजिये। बंदिश के चारों तरफ से, तब राग खुलेगा। यह बहुत बडी बात है जो आगरा घराने में पाई जाती हैं। यह आगरा घराने में पाई जाने वाली बहुत बडी चीज हैं। बबनजी ने सभी बाते कही है उसी को मैं दुहरा रहा हूं या उसमें एकाद पॉईन्ट जोड़ रहा हूं इसके बाद मैं आगरा घराने के उस्तादों के गानों के नमूनों का कैसेट सुनाऊंगा। दूसरी बात जो खासकर फ़ैयाज खाँ के गाने में थी, जैसे- सारंग है पर नि,प,स, नि, रे - से मल्हार हो जाता है। ये स्वरोच्चार ग्रेट आगरे घराने में कान्शसली सिखाते हैं। बहुत से उस्ताद कान्शसली नहीं सिखा पाते थे क्योंकि वे तालीम मे उसे एनालाईज नहीं कर पाते थे। मगर इसे वे बंदिश के जरिये बताते थे। तीसरी बात जो खासकर विद्यार्थियों से कहना चाहूंगा, कि हर राग की एक पर्सनालिटि हैं। राग की पर्सनालिटि को मद्देनजर रखते हुए गाया जाना चाहिए। एक भारी भरकम राग है,जिसमें मुरकी वुरकी इस्तेमाल करना ठीक नहीं। भैरव, कालिंगडा, रामकली तीनों नजदीक के राग हैं। भैरव मे तान लेना जायज नहीं है। ये शास्त्र में कहा गया है। भैरव शान्त गंभीर राग है। रामकली में एक स्वर का फर्क है। तान लेना हो तो रामकली में लो। कालिंगडा तो और भी हल्काफुल्का है। उसमे ऐसा ही हल्कारंग पेश करना है। हमारी निगाह में आगरे घराने में फ़ैयाज खाँ जैसा उस्ताद हुआ नहीं है। उसके पहले घघ्घे खुदाबख्श का नाम लिया गया है। जो की लोगों को (गाना सुनाकर) रूलाते थे। गुलाम अब्बास खाँ भी थे ऐसे ही। एक बार जब फ़ैयाज खाँ महिषादल गये थे तो महिषादल के राजगुरू देवप्रसाद गर्ग ने उन्हें गाने के लिये कहा। सुनने के लिये उनकी माता राजमाता भी थी। उन्होंने अपने बेटे को बुलाया और कहा कि जाकर फ़ैयाज खाँ को कह दो कि- गमक की तान उनके गले में गुलाब अब्बास खाँ के चार आना है। फ़ैयाज खाँ सुनके यह मुस्कुरा के

तस्लीम उन्होने की। वे चिक के पीछे बैठी हुई थी। तो हम कैसे कहें कि फ़ैयाजखाँ से बड़े उनके पहले कोई नहीं थे । फ़ैयाज खाँ एक बार सान्ताक्रुज में गा रहे थे।लाचारी तोड़ी 'ऐ लंगर बटमार'। और शुद्ध गंधार में पहुंच करके एक अपूर्व उनका फिरत था जिससे वे वापस आते थे और गाते-गाते उनके आंख में आंसू भर आये। हाय इस राग को भाई अब्दूला खाँ क्या गाते थे। मैं तो उनके एक जर्रा भी नहीं हूं। पीछे के तानपूरे पर लताफत हुसैन खाँ बैठे थे उन्होंने यह किस्सा मुझे बताया। तो यह बात नहीं है आगरा घराना फ़ैयाज खाँ से शुरू ही हुआ और फ़ैयाज खाँ पर ही खत्म हुआ। मगर हमारे अनुभव में उनसे बडा गायक कोई हुआ नहीं।ये और बात है कि उनका असर मेरे ऊपर इतना पड़ा कि मैंने कुल पांच छः बार उनके सामने बैठकर सुना और एक राग जैजैवंती की तालीम मेरी हुई। उनसे प्रत्यक्ष रूप से। तब मैं 16-17 बरस का था।एक जमाने मे दिनकर कैकिनी हमारे जुगलबंदी के पार्टनर थे। वे हमें कहते थे मजाक-मजाक में तुम हो एकलव्य शिष्य। बाद में जब हम लताफत हुसैन खाँ और अताहुसैन खाँ के पास गए तब हमारी बाकी की सही तालीम हुई। पर जिस तरह की तालीम बबनजी को मिली है वो तालीम मुझे नहीं मिली । शुरू में तो हम परफार्मर थे। तो हम एक राग में दो बंदिशें गा लेते थे। फिर बाद में हमें समझ में आया और विद्यार्थियों को भी समझ लेना चाहिए कि एक राग आने के लिये उसमें ध्रुपद धमार बड़ा ख्याल छोटा ख्याल तराना सब कुछ क्यों सीखना और गाना चाहिए। पुराने जमाने में ऐसा ही होता था । क्योंकि राग के रास्ते बंदिश में ही पैक कर दिये जाते थे। वो राग की कुंजी होती है । तो जितनी बंदिशे आप इकट्ठा कीजियेगा उतने ही राग रूप आपके खुलेंगे। फ़ैयाज खाँ की एक बात और भी है। उसे काकु प्रयोग कहते थे । ये नाट्यशास्त्र है। इसमें ड्रेमिटकल एलिमेट है। मेलोड्रामिटिकल। जैसा पं. ओंकारनाथ ठाकुर ने गाया, जैसे कुमार गन्धर्व 1948 के बाद दिखाना शुरू किये, जैसे ..... अब दिखा रही है, खासकर द्रुत गाने में। जब बालीवुड का भूत इन पर सवार हो जाता है तो वो ऐसी ही गाना गाती हैं। वैसे वो गाती तो अच्छा हैं और ऐसी टैलेन्टेड है। पर सही रास्ते पर चलती तो उसके मुकाबले में हिन्दुस्तान के मर्दों और औरतों में कोई नहीं था। मगर वो लड़की बहक गई। अब क्या किया जाय ? कहने का मतलब ये है कि मेलोड्रेमेटिकल इफेक्ट हमारे संगीत में नहीं है । इसमें ड्रामा का एलिमेंट हैं। ये फ़ैयाज खाँ साहब ने जैसा समझा वैसा मैंने किसी गायक के गाने में पाया नहीं है। और उनका सुर मैं क्या कहूं। खादिम हुसैन खाँ एक बार संगीत रिसर्च एकेडमी में गा रहे थे तो वी.जी. जोग साहब जिन्हे आप सब बहुत अच्छी तरह जानते हैं, श्रीकृष्ण रातंजनकर जी के साथ इतने दिन रहकर

दिया कि आगरा घराने में लय की तरफ ज्यादा तवज्जो करते हैं सुर की तरफ नहीं । तो खादिम हुसैन खाँ ने उन्हें पूछा कि - ''अब तक मैं गा रहा था इससे आप बेचैन होके उठे जा रहे थे क्या ? आपको परेशानी हो रही थी ? तो क्या मैं सुर में नहीं गा रहा था ? क्या मतलब है ? सुर तो सबसे पहले है।'' पर ये सुर क्या चीज है ? बेशक हर शख़्स सुर में गाता है पर वह कौन सी चीज है कि जिससे सुर में रोशनी पैदा होती है । मारे उस्ताद मुश्ताक हुसैन खाँ साहब कहते थे कि भई निगेटिव पॉजिटिव दो कान्ट्रॉस्ट इकट्ठा होने से रोशनी पैदा होती हैं । ये सुर का लगाव जैसा कि अभी बबनजी ने कहा कि फ़ैयाज खाँ 'सा' लगाते थे तो पता चल जाता था कि वे किस राग को गाने जा रहे हैं । तो सुर का लगाव बडा इम्पोंटेन्ट है । कोई सुर स्टेटिक नहीं, फिक्स नहीं । हरेक सुर डायनेमिक है । दूसरे स्वर के कण स्वर के सहायता से हमेशा लगता है । इससे राग के रूप को स्पष्ट करने के लिये इस तरह के कण स्वरों की बहुत आवश्यकता है । ये फ़ैयाज खाँ साहब की गायकी का ही नहीं आगरे घराने का सिलसिला है । ध्रुपद का सिलसिला है । किस स्वर की सहायता से कण स्वर से राग गाया जाय यह देखना है । अब राग बिहाग में आरोह में रे स्वर वर्ज है पर ग--रेग,नि--धनि यह कण स्वर लगते है । इसको अगर निकाल दिया तो मान मान लीजिए बिहाग को इस्तरी कर दिया । तो आजकल के बच्चों को हम कैसे बताएँ, ये तो प्रायोगिक विधा है । गा के बताना है। ये चर्चा तो हम इसलिये कर रहे हैं कि आपने हमे बिठा दिया है कि भई कुछ बोलो । बोले क्या ? हमारा गला इत्तफ़ाकन चल नहीं रहा है । मगर बबनजी ने जो कुछ कहा है उसी को मैं 'दुहरिया' रहा हूं । एक बार फ़ैयाज खाँ साहब का बगैर माइक्रोफोन का मैंने गाना सुना इतना ही बड़ा हाल था, बारादरिया का हाल लखनऊ का- (लगभग 40x100 फुट)वहां बैठकर वे काफी नीचे सुर से गा रहे थे । यह नहीं कि चिल्ला रहे थे । पर वे जो कुछ गा रहे थे, काम कर रहे थे, वह हाल के पीछे बैठे हर एक शख़्स को सुनाई दे रहा था । उन्हें सुनने के लिये किसी को कोशिश नहीं करनी पड़ रही थी । उनका हर काम भीगी हुई आवाज में हो रहा था । ये बात नहीं थी कि उस जमाने में माइक्रोफोन नहीं था । था पर पालीटिशियन को चिल्लाने के लिए था,गाने के काम का वह नहीं था,पर बहुत पापुलर भी नहीं था । अक्सर खाँ साहब कहते थे- अरे भई इसको हटाओ । तो एक मजेदार किस्सा और सुनाऊं । हमारे आगरे घराने में एक तो फ़ैयाज खाँ नेचरल सी स्केल के नीचे गाते थे । तानपुरा मिलाना रहता था तो काली एक, सफेद दो, के पतले तार उतार के बदलने पड़ते थे । वर्ना मिलाने में दिक्कत पड़ती थी । तो दिनकर जी कहने लगे कि आगरे घराने वालों से तानपुरा नहीं मिलता ।

मैंने कहा कि इसलिए नहीं मिलता कि तुम लोग मैरिस कालेज से काली दो के लाते हो और खाँ साहब सफेद दो में गाते हैं।या उससे भी नीचे के सुर में। मिलाने में दिक्कत पड़ती थी। फ़ैयाज खाँ प्रोग्राम के लिये आते,तो आते ही गिण्डे जी और दिनकरजी को कहते-बेटा तानपुरा मिला कर रखो। मैंने दिनकर से कहा कि तानपूरा मिला या नहीं कोई कुछ पूछता कहता नहीं था ? तो दिनकर बोले-खाँ साहब जब गाते थे तो क्या कोई तानपुरा सुनता था ? एक किस्सा और याद है। खाँ साहब झिंझोटी में गा रहे थे 'होरी खेलत नंदलाल'। दूसरे दिन सिन्दूरा में भी गाने लगे 'होरी खेलत नंदलाल'। मैंने सुना, पर पूछने की हिम्मत नहीं हुई। दिनकर ने पूछा- खाँ साहब ये ही चीज हमने झिंझोटी में सुनी थी। बोले हाँ बेटा। खाँ साहब यह बरवा में भी आपने सुनाई। हाँ बेटा। तो सिन्दूरा में सुनी। तो बोले बड़े हो जाओगे ना तो कोई चीज ऐसी हाथ में रख लेना। कुछ याद नहीं आए तो गा देना। इतना मैं आपको बता सकता हूँ कि विद्या का, इल्म का, जहाँ तक सवाल हैं फ़ैयाज खाँ को कोई मामूली तालीम नहीं थी। गुलाम अब्बास खाँ से वे शुरू से आखिर तक सीखे और गुलाम अब्बास खाँ घघ्घे खुदाबख्श के बेटा और शिष्य थे। उनके चाचा फिदाहुसैन खाँ थे। इनके पूर्वज रमजान खाँ रंगीले घराने के थे।इनके कई चीजें आप भी जानते होंगे।

नैना नहीं माने ----------नायकी कानडा

कैसे-कैसे बोलत----------नटबिहाग

लंगर तुकर जीन छुओ--------तोड़ी आदि ।

ज्यादातर विलंबित है। ध्रुपद तोड़कर ख्याल बनाया गया। सदारंग, अदारंग, जिनका इन्द्राणीजी जिक्र कर रही थी बहुत से राग प्रक्षिप्त हैं। बाद में इनमें तकल्लुस डाले गए। ये कोई ताज्जूब बात नहीं हैं। इसलिए क्योंकि जैसे मैं कोई काम्पोजिशन बनाना जानता हूँ पर मेरे कम्पोजीशन को ऑथेंटिक कब मानेंगे जब उसमें कोई तकल्लुस हो। --- आजकल कुछ राग लड़के गा रहे हैं जैसे पूरिया कल्याण। ये हमारे घराने का राग नहीं हैं। ये अभी रीसेन्टली बना है। अब इसमें पुराने कम्पोजीशन कहाँ से मिलेंगे ? रविशंकरजी कहते हैं ये राग उनकी बनाई है। खैर अब इसमें कोई एक दो काम्पोजिशन बना के देते हैं तो उसमें प्रेमपिया प्राणपिया वगैरा डालकर देते है। ये तो पुराने जमाने में होता था। महाभारत में एक लाख श्लोक है। तो कुछ की शैली डिफरेन्ट हैं। तो प्रक्षिप्त तो वे हुए ही।

फ़ैयाज खाँ के गुजरने के बाद श्रीकृष्ण रातांजनकर ने कहा था कि - अगर कोई म्यूजिशियन परमनेन्टली है तो वे हैं फ़ैयाज खाँ। इस प्रकार से विद्या,एस्थेटिकल सेंस, कम्पलिट राग कमांड,लय ,सब ऐसा एक

ही गवैय्या में मिलता नहीं। सबसे बड़ी चीज जो बबनजी ने कहा सेन्स आफ प्रपोर्शन। गाना इन्टीरियर डेकोरेशन की तरह है। एक ही दीवार पर दस तस्वीरें लगा दे तो अटेंशन अट्रेक्ट नहीं करेगा आपका। पूरी दीवार पर एक पेटिंग लगाये, तो खिलेगा। गाने में भी ये है । एक फ्रेज गाये तो खिलेगा। हमारे संगीत में राग में सा रे ग म प ध नि स्वर नहीं, फ्रेज इम्पोरट्रेंट हैं । अत: राग की फ्रेजेज हाईलाईट होनी चाहिए। बबनजी जैसा की कह रहे थे प्रोनांसिएशन (कहन)की ओर ध्यान देना चाहिए। यू पी के आदमी होने से मराठी या बंगाली उच्चारण कानों को बहुत खटकता है। मुख्य है सांगीतिक उच्चारण। किस तरह से किस चीज को कहा जाय ये है 'कहन'। यह आगरा घराने की स्पेशलिटि है। ठुमरी में एक तरह का कहन है, खयाल में दूसरे तरह का और ध्रुपद में तीसरे तरीके का। अगर ख्याल में ठुमरीनुमा कुछ कहें तो लगता है मर्द को साड़ी पहना के स्टेज पे बिठाया गया हो। आज से 70-80 बरस पहले अगर कोई ख्याल में मुरकी वगैरा गाता था तो उसे कान पकड़कर भगा दिया जाता था। ऐसे हमने बुजुर्गों के साथ रहकर देखा है। हमने एक घटना देखी नहीं पर सुनी है। एक थे वाडीलाल शिवराम। बड़े संगीतज्ञ और समझदार थे। हर साल परीक्षा लेने आते थे। उन्होंने भातखण्डे के सामने खड़े होकर एक बार केसर बाई की महफिल में उन्हें कहा- ''ए बाई क्या गा रही है।'' वे बोली -'' जी कुकुभ बिलावल गा रही हूं। अल्लादिया खाँ साहब से सीखी हूँ।'' तो बोले ऐसा कुकुभ बिलावल होता हैं ? फिर से जाकर सीख ले कुकुभ बिलावल। तो केसर बाई ने बंद कर दूसरा गाना गाया। तो ऐसे समझदारों के सामने गाना पड़ता था। कोई उस्ताद गाते थे तो दूसरे सब सामने बैठककर उन्हे ध्यान से सुनते थे। इससे गाने वाले को उत्साह मिलता है और गाना खिलता था। आजकल के गायक तो अपना हवाई टिकिट लेकर स्टेज पर चढ़ते हैं। अपना गाना किया और पीछे दरवाजे से चले गए। बाकी गाने वाले को न मिलते है,न सुनते हैं। इतनी भी कर्ट्सी नहीं दिखाते कि जाकर बताए कि कोई इम्पॉर्टेंट अपॉइन्टमेंट हैं, बच्चा बीमार है या और कुछ। यदि हम सब एक दूसरे का गाना नहीं सुनेंगे तो गाना आगे कैसे बढ़ेगा ? पता कैसे चलेगा कहां कौन क्या खूब काम कर रहा है। श्रोताओं को मान देना चाहिए । श्रोताओं के मान पर गायक का मान है और आर्गनाईजर की समझ पर गायक का स्टेंडर्ड इफेक्ट करता है ।आजकल तो वनडे क्रिकेट आर्गनाईजर और कान्फ्रेन्स (संगीत समारोह)आर्गनाईजर बिल्कुल एक श्रेणी के हो गए हैं। अस्तु।

यहां आज हम बैठकर जो आगरा,ग्वालियर, जयपुर

की चर्चा कर रहे हैं ये सब विद्यार्थियों के लिये है ।अन्य जगह कहीं होता तो पूछा जाता कि यह सारा प्रोग्राम क्यों? पर यहां विद्यार्थीगण हैं, उन्हें बुजुर्गों के तजुर्बों को समझना चाहिए। गुणिजनों का इतना लंबे अर्से का जो तजुर्बा है मुझे भी कुछ मिला । मैं आपके साथ शेयर करना चाहता हूं। सारी जिंदगी के अनुभव हैं ये । इन्सान जब कभी गाना गाता है, उसमें उसके सारी जिंदगी के एक्सप्रेशन होते हैं । गायक की पर्सनालिटि,थॉट्स, उसका नेचर, उसकी तालीम सभी कुछ एक्सपीरियन्स के मुताबिक प्रेजेन्ट होते जाते हैं। हमारा म्युजिक,चेम्बर म्युजिक है । (गाने वाला)बड़े बुजुर्गों को सामने देख रहा है । वे बैठे हैं ।हम उन्हें देखते हैं ,वे हमें देखते है । ऐसा माहौल, ऐसे एट्मॉसफियर में गाना होता हैं । बबनजी ने आगरे घराने के बारे में जो कहा उसी सिलसिले में कुछ पॉईन्ट मैं जोड़कर कुछ कह पाया। बबनजी आपने लय के प्रभुत्व पर बड़ा जोर दिया । लय का मतलब है कि दिमाग में एक लय का स्पेसिंग होता है (एक अंदाज का स्थान होता है) । आपको सुनकर के ताज्जुब होगा कि अमीर खाँ साहब एक बार कलकत्ता में आए थे । हम उनसे मिले । इत्तफाकन उन्होंने मेरे और विजय के कंधों पर हाथ रखा । उन्होंने मुझसे पूछा कौन सा ताल बज रहा है मेरी उंगली से ? मुझे वह त्रिताल लगा । तो मैंने त्रिताल कहा । विजय से पूछा क्या बज रहा है? तो वे बोले दादरा । इसका क्या मतलब हैं ? के वे बड़े लयदार थे । (एक साथ एक हाथ से त्रिताल और दादरा ताल दे सकते थे)पर उनके सभी शागिर्द एक भी लयदार नहीं हैं । लय एक तरफ,विस्तार एक तरफ । उसमें तालमेल नहीं । (चले जा रहे हैं)कभी इत्तफाकन मुलाकात हुई (राजनांदगांव में सम से)तो ठीक । वर्ना ताल,लय,मात्रा,आलाप सब अलग-अलग । तो ये गाना नहीं है । ये न आगरे का, न जयपुर का,न ग्वालियर का गाना है । जयपुर में गायक ताल नहीं मात्रा गाते हैं। उसमें एक ध्रुपद अंग का (मात्रा,वजन,बीट,स्ट्रोक)होता है । उसका एम्फसिस लय है,ताल नहीं । लय पे कमांड तो होना ही चाहिए । लय पर प्रभुत्व जितना होगा उतना ही गाना (स्तरीय)होगा । ये बात सिर्फ आगरा घराने पर लागू नहीं है । सब घरानों पर लागू है । दरअसल अब्दुल करीम खाँ जब स्वर का विस्तार करते थे तब शमसुद्दीन तबलिये को उन्होंने पहले से कह रखा था कि भंई जो हम गाना गाते है तो जिस लय में बजाते हो उसकी आधी लय मे बजाओ। तो तब से ये कम लय का काम शुरू हुआ । फिर अब्दुल वहीद खाँ के जमाने तक जाते-जाते तो ये मीरखंड आलाप के जरिये एक कदम और आगे बढ़ा । अमीर खाँ के जमाने में तो धिन----ति---र---कि---ट - शुरू हो गया । झूमरा में तो चार तिरकिट लगता था मानो समुद्र हो । अमीर खाँ साहब तो खुद लयदार थे ।

पर उनके सारे सुन्नी शागिर्द इस ति--र--कि--ट में फंसकर खत्म हो गए। तो ये पुरानी गायकी के किसी भी घराने में ये मिलेगा नहीं। मैं आपके लिये कैसेट लाया हूँ जिनमें पुराने गायकों का गाना है। इसे शुरू किया गया है जोहराबाई से । जोहरा बाई एक ऐसी गायिका थी जिनके बारे में फ़ैयाज खाँ और गुलाम अली खाँ साहब दोनों से मुझे तारीफ सुनने को मिली। बड़े गुलाम अली खाँ साहब कभी अपने घराने के बहार के गवैय्यो की तारीफ नहीं करते थे। मगर जोहरा बाई की वे तारीफ करते थे। कहते थे-वाह क्या बात है। मैं क्या बताऊं बहुत ही अच्छा गाती है। पं. दिलीपचन्द्र बेदी जी रोज जोहरा बाई का जिक्र करते थे। कहते थे ऐसा गाना तो मैंने सुना ही नहीं किसी और से। ये देखिये कि सारे गवैय्यों का किसी न किसी से क्रिटिसिज्म हुआ है। पर दो गवैय्ये ऐसे हुए जिनके बारे में कभी कोई बात विरोध में सुनने को नहीं मिला। पं. भास्कर बुवा बखले दुसरी जोहरा बाई। जोहरा बाई शेर खाँ की शागिर्द थी । शेर खाँ घघ्घे खुदाबख्श के भतीजे थे। बाद में दरसपिया महमूद खाँ के पास भी सीखा। तो आगरे वाली जोहरा बाई के गाने में ग्वालियर और आगरा दोनों गायकी की डेफिनिटी देखेंगे। बबनजी आपको याद है रामाराव नायक की शिष्या ललिता उभयकर। उसे जब मैंने जेाहरा बाई का रिकार्ड सुनाया तो वो बोली हमारी तीन चौथाई जिंदगी चली गई । हमें तो आजतक अभी सुर भी लगाना नहीं आया। ये रिकार्ड सुनकर उनका यह कहना था। तो सुनिए जोहरा बाई का गौडसारंग। फ़ैयाज खाँ की गायिकी पर भी इनका प्रभाव था। (राग केदार पूर्वी बरवा इत्यादि अनेक राग सुनाये गए,जिसे संलग्न कैसेट में दिया गया है।) लय पर कमाण्ड होना प्रत्येक घराने की गायिकी के लिए जरूरी है। इस कारण फ़ैयाज खाँ का गाना जयपुर ग्वालियर आदि गायिकी से अलग है।

इस तरह का महत्वपूर्ण कर्म आप कर रहे हैं इसलिए हम आपके आभारी हैं। सारे घरानों के मूल तत्व एक ही हैं। जैसे सितार में पहला स्ट्रोक बजाते ही पता चल जाता है कि अमुक वादक किसे फॉलो करेगा,रविशंकर या विलायत खाँ को ? उसी तरह गायक द्वारा सुर लगाने का स्टाईल सुनते ही घराना पता लग जाता है। पर बेसिक चीज और अंग एक ही है। विद्यार्थियों के लिए यह बहुत ही इम्पोर्टेन्ट है। ये जो कलेक्शन मैंने लाया है। आपकी दुआ से सारी जिंदगी मैंने इसके पीछे पड़कर इसे संजोया है। वो किसके लिए छोड़ जाऊँ? यदि खैरागढ़ इसके लिए अच्छी जगह है तो यह गरीब हाजिर है।

आगरा घराने के दो स्तंभ : उस्ताद फ़ैयाज खाँ एवं उस्ताद शराफत हुसैन खाँ

प्रो. चन्द्रकांत लाल दास

आदरणीय मुखर्जी साहब, पं. श्रीकृष्ण हलदनकर, वाईस चांसलर और सभी गुणीजन। मेरा यह परम सौभाग्य है कि भारत का इतना पुराना घराना और इनके दिग्गज कलाकारों की उपस्थिति में मैं अपने आप को उपस्थित पा रहा हूँ। आगरा घराने के महान् उस्तादों को श्रद्धांजली के लिए हम सब आज एकत्रित हैं ऐसा मैं मानता हूँ। आगरा घराने पर बताई हुई सभी बातें जो मुखर्जी साहब ने बताई वह पूर्ण प्रामाणिक है, अनुभव सिद्ध है। हम सभी निश्चित रूप से लाभान्वित हुए हैं। मैं मेरा लेख वीणाजी को दे रहा हूँ। वी.सी. महोदया को निवेदन करता हूँ कि वो इसे एवं आगरा घराने के अन्य अधिकाधिक लेखों आलेखों को प्राप्त कर प्रकाशित करें। ताकि जिज्ञासु, विद्यार्थी रसिक सभी ज्ञानवर्धन कर लाभ ले सके। मैं पटना निवासी हूँ। अंग्रेजी साहित्य से जुड़ा रहने पर भी संगीत क्षेत्र का कहलाता हूँ। उ. अलाउद्दीन खाँ से सरोद सीखा हूँ। उ. मौजूद हुसैन खाँ पटना के पास रहते थे,वे गाना सीखने बड़ौदा गए। फैयाज खाँ ने उनके खाने पीने रहने का इन्तजाम खुद किया था। आँखों देखी कहानी उन्होंने मुझे बताई। सयाजीराव नरेश गायकवाड़ के समय फैयाज खाँ का गायन रात 8 बजे शुरू हुआ।वहां अलादिया- 80 वर्ष के, सुश्री केसर बाई जैसे उपस्थित थे। फैयाजखाँ का गायन नोम तोम, ध्रुपद, ख्याल और सुबहा भैरवी से समाप्त किया। जब अलदिया खाँ को उन्होने गाने हेतु निवेदन किया, तब अलादिया खाँ बोले- गायन के सारे अंग आपने गा डाले, मेरे लिये कुछ बचा ही नहीं। अब मैं क्या गाऊँगा ? उस रोज महफिल वहीं खत्म हुई। इस बात के जिक्र की जरूरत इस कारण हुई की आज की पीढ़ी ये सब जाने कि कैसे वे महान कलाकार उदारमना गुरू, बड़े साधक उस्ताद थे। पटना से, कलकत्ता से, पंजाब से, कहाँ-कहाँ दूर से लोग सीखने उनके पास जाते थे। विश्वदेव चटर्जी, ज्ञानेन्द्र गोस्वामी, दिलीप चन्द्रवेदी, सरदार सोहनसिंह जी हैं। आज यहाँ सभी गुणीजनों का समूह सौभाग का विषय है। बड़ा ही ऐतिहासिक क्षण है। आगरा व अन्य घरानों के लिये दिशा निर्देशक है अन्त में वीणा विश्वरूप के बारे में कहूँ। इन्हें हम विद्यार्थी जीवन से जानते हैं। बड़ी लगन मेहनत वाली विद्यार्थी हैं। आज ये जो महत्वपूर्ण आयोजन की इन्होने बागडोर सम्हाली है, वैसे ही अन्य घरानों पर भी सेमिनार कराएं और विश्वविद्यालय में कड़ी के रूप में चलाएँ। ऐसा मेरा

अनुरोध है। अब मैं अपना आलेख पढ़ता हूँ :-

चार दशक से अधिक तक उ. फैयाज खाँ भारतीय संगीत पर प्रकाश मान सूर्य की तरह छाये रहे। उनकी विशिष्ट सांगीतिक क्षमता के कारण ही मैसूर महाराज ने उनको 1911 ईस्वी में ''आफताब-ए-मौसिकी'' की उपाधि से विभूषित किया था। युवावस्था में खाँ साहब को मैसूर महाराज ने वह उपाधि दी थी। तदन्तर उनकी ख्याति एवं प्रतिष्ठा संपूर्ण देश में फैलती ही गई और सन् 1930 ई. तक सर्वोच्च बिन्दु तक पहुँच गई। सच यह है कि उनके जीवन के अंतिम दशक में भारत का शायद ही कोई संगीत प्रेमी हो जो उ. फैयाज खाँ को एक महान् गायक के रूप में न जानता हो।

किन बातों से उ.फैयाज खाँ इतने महान् गायक बनने में सफल हुए इसको स्पष्ट करने के लिये उनकी जीवनी, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा, अभ्यास एवं निजी संस्कार की चर्चा करना आवश्यक है।

उ. फैयाज खाँ का पूरा नाम था उमर फैयाज हुसैन खाँ। इनका जन्म आगरा में 8 फरवरी 1881 ई. में हुआ था। उ. फैयाज हुसैन खाँ खानदानी गायक थे। आज दुनिया उनको आगरा घराने के सर्वप्रमुख एवं सर्वश्रेष्ठ गायक के रूप में जानती है। खाँ साहब के पिता का नाम सफदर हुसैन सिकंदराबाद वाले और दादा का नाम मुहम्मद अ़ली था। ये दोनो अच्छे गायक थे। सिकंदरा आगरा शहर के पश्चिम से सटा एक कस्बा है, जिसे लोदी शासक सिकंदर शाह लोदी ने बसाया था। उ. फैयाज खाँ आगरा घराने के मशहूर गायक गुलाम अब्बास खाँ के नाती थे। गुलाम अ़ब्बास खाँ की पुत्री का विवाह सफदर हुसैन सिकंदराबाद वाले से हुआ था। फैयाज खाँ अपने पिता के एक मात्र पुत्र थे। गुलाम अब्बास को पुत्र नहीं रहने के कारण उन्होंने फैयाज खाँ को बचपन से ही गोद ले लिया और बचपन से उनको अपने पास रखने लगे अत: अपने नाना गुलाम अब्बास का पितृवत स्नेह उनको प्राप्त हुआ। आगरा में बचपन से ही फैयाज खाँ को अपने नाना गुलाम अब्बास के साथ लगातार कई वर्षों तक रहने का अवसर मिला। साथ ही कम उम्र में ही उनकी तालीम अपने नाना से शुरू हो गई। इसके अतिरिक्त अपने नाना के छोटे भाई उ. कल्लन खाँ से भी फैयाज खाँ को अच्छी तालीम मिली। इन दो उस्तादों की निगरानी में वे कठिन अभ्यास करते रहे। फलत: बीस-बाइस साल की उम्र में ही वे एक सिद्धहस्त गायक बन गए।

खाँ साहब का ननिहाल आगरा घराने की मशहूर गायकों के घर में था। उ. फैयाज खाँ के नाना गुलाम अब्बास के पिता घग्घे खुदाबख्श (1790-1880)

अपने समय के लब्ध प्रतिष्ठ गायक थे। घग्घे खुदाबख्श की आवाज लड़कपन में अच्छी नहीं थी। इसलिए इनके पिता इनको संगीत सिखाना पसंद नहीं करते थे। लेकिन खुदाबख्श को गाना सीखने की बड़ी लगन थी। जब पिता ने इनको गाना सिखाने की कृपा नहीं की तब ये विवश होकर ग्वालियर चले गए और वहाँ दरबार के सुविख्यात ख्याल गायक नत्थन पीर बख्श से ख्याल गायन की शिक्षा प्राप्त करने लगे। ग्वालियर में इनको ख्याल की पूरी तालीम मिली और इन्होंने वहाँ अच्छा अभ्यास किया। जब आगरा लौटे तो इनके पिता इनकी आवाज की खूबी और गायन क्षमता को देखकर खुश हुए और तब स्वयं इनको तालीम देने लगे। फलत: घग्घे खुदाबख्श एक प्रवीण गायक बन गये। ये जयपुर महाराज के दरवारी गायक थे। इनकी ख्याति देशभर में फैल गई। घग्घे खुदाबख्श के दो पुत्र हुए-1. गुलाम अब्बास खाँ (1825-1934) उ. फैयाज खाँ के नाना और 2. कल्लन खाँ(1825-1925)। उ. फैयाज खाँ को कल्लन खाँ से भी सीखने का मौका मिला। इनके अतिरिक्त खाँ साहब ने अपने कई रिश्तेदारों में कई जानकार गायकों से भी तालीम हासिल की थी।

महाराष्ट्र एवं कर्नाटक प्रदेशों में उ. नत्थन खाँ के कई शिष्य थे, जिन्होनें शास्त्रीय संगीत को खूब फैलाया। नत्थन खाँ के सुपुत्र उ. विलायत हुसैन खाँ(1892-1962) एक विद्वान गायक थे। जो आकाशवाणी सलाहकार के पद पर कई वर्षों तक रहे। अपने पिता की तरह ये पहले मैसूर दरबार में रहे, तदन्तर बंबई निवास करने के बजाय इन्होंने महाराष्ट्र के अनेक गायक और गायिकाओं को अपने घराने की तालीम दी। उ. विलायत हुसैन के सुपुत्र युनुस हुसैन खाँ एक प्रशिक्षित गायक थे। और अपने घराने को सुविख्यात रखने में कुशल रहे। लेकिन दीर्घायु प्राप्त करने से पहले ही इनका देहांत हो गया।

उपरोक्त मशहूर गायकों के अतिरिक्त आगरा घराने में कई अन्य अच्छे गायक हो गए हैं, जो इस घराने की अस्मिता कायम रखने में सफल रहे। इन गायकों में कुछ का उल्लेख न करने से आगरा घराने की चर्चा अधूरी रह जाएगी। आगरा घराने के कुछ प्रमुक गायकों के नाम हैं :-अब्दुलशाह खाँ, तस्द्दुख हुसैन खाँ, बशीर खाँ, अकीत अहमद, अनवर हुसैन, खादिम हुसैन, शराफत हुसैन एवं गुलाम रसूल।

अतरौली घराना

हिन्दुस्तानी संगीत में अतरौली घराने का महत्वपूर्ण स्थान है। आगरा घराना जैसा पुराना नहीं है लेकिन इस घराने में अनेक अच्छे गायक हुए हैं और

उनमें दो ऐसे महान् संगीतकार हुए जो सदा इस घराने को अमर रखेंगे। ये दो गायक थे, उस्ताद अलादिया खाँ और उ. महबूब खाँ 'दरसपिया'। अलादिया खाँ के पूर्वज अतरौली निवासी थे और अतरौली से वे जयपुर चले गये। जयपुर में उ. अलादिया खाँ को अपने पिता से तालीम मिली। इसलिये उनका घराना जयपुर अतरौली घराना के नाम से जाना जाता है। दरअसल अतरौली घराना मुख्यत: महबूब खाँ 'दरसपिया' के पूर्वजों एवं संबंधियों का घराना है।

उ. फैयाज खाँ का विवाह महबूब खाँ 'दरसपिया' (1845-1922) की पुत्री से हुआ था। महबूब खाँ की बहन का विवाह नत्थन खाँ आगरावाले के साथ पहले से हो चुका था। इस प्रकार उ. विलायत हुसैन, महबूब खाँ के भाँजा थे। स्मरणीय है कि आगरा और अतरौली घरानों के गायकों के परिवार में बहुत अधिक वैवाहिक संबंध था। यह संबंध इतना घना और पुराना था कि दोनो घरानों को अलग करना अब मुश्किल है।

अतरौली घराने का आरंभ इस प्रकार है। अतरौली जिला अलीगढ़ में एक कस्बा है। यह स्थान रेल से नहीं मोटर यातायात से संबद्ध है। 18 वीं शताब्दी में ग्वालियर के कुछ ध्रुपद गायक ग्वालियर से अतरौली आ गए और वहाँ बस गये। ये गायक चूंकि ग्वालियर से आये थे, इसलिये ये गौहारी या गोवहार वाणी ध्रुपद के अनुयायी थे। गौहारी वाणी को आजकल गौढ़वाणी भी कहते हैं। स्मरणीय है कि तानसेन गौहारी या गौढ़वाणी ध्रुपद से सर्वश्रेष्ठ गायक माने जाते हैं। उ. फैयाज खाँ का अतरौली के गायक परिवार से पुराना पारिवारिक संबंध था। उसी प्रकार आगरा घराने के गायकों का भी अतरौली में अनेक संबंध थे। उल्लेखनीय है कि गायक स्व. खादिम हुसैन उनके छोटे भाई लताफत हुसैन और शराफत हुसैन सभी अतरौली के निवासी थे। ये तीनों गायक उ. फैयाज खाँ के पारिवारिक संबंध से भांजे लगते थे। फैयाज खाँ के शिष्य और इनकी पूरी गायकी के अनुयायी होने के कारण आज ये तीनों आगरा घराने के गायक के रूप में जाने जाते हैं।

अतरौली के महबूब खाँ जैसे ऊपर कहा जा चुका है, उ. फैयाज खाँ के ससुर थे। महबूब खाँ ने रचनाकार के रूप में अपना नाम 'दरसपिया' रखा था। महबूब खाँ अच्छे गायक तो थे ही साथ ही उत्तम कोटि के रचनाकार भी थे। इन्होनें ख्याल और ठुमरी की अनेक बंदिशों की रचना की। आज शायद ही कोई ठुमरी गायक हो जो इनके द्वारा राग पिलू में निबद्ध ठुमरी 'नदिया किनारे मोरा गाँव' न गाते हों। यह ठुमरी रचना महबूब खाँ 'दरसपिया' की है। महबूब खाँ के सुपुत्र उ. अताहुसैन खाँ (1897-1980) भी उच्चकोटि के गायक थे। इन्होने

शास्त्रीय गायन की शिक्षा अपने पिता से और बाद में अपने बहनोई उ. फैयाज खाँ से प्राप्त की थी। ये वर्षों तक उ. फैयाज खाँ के निकट संपर्क में रहे। अता हुसैन लगभग सभी कार्यक्रमों में खाँ साहब के साथ रहते थे, और उनके साथ गाते थे। हिन्दुस्तान कंपनी के ग्रामोफोन रेकार्ड में उ. फैयाज खाँ साहब के साथ उ. अता हुसैन खाँ ने भी अच्छी तैयार ताने कही है। उदाहरण के लिये राग 'सुघरई' में छोटा ख्याल 'नैनन सों देखी एक झलक मोहन की' को सुन सकते हैं।

उ. फैयाज खाँ सर्वप्रथम 1906 ई.में बड़ौदा गए थे। तदुपरांत 1911 ई. में बड़ौदा के महाराज सयाजिराव गायकवाड़ ने खाँ साहब को एक खास मौके पर गायन के लिये बुलाया था। इस कार्यक्रम में खाँ साहब का ऐसा प्रभावकारी गायन हुआ कि महाराज गायकवाड़ मुग्ध होकर उ. फैयाज खाँ को दरबारी गायक के रूप में रख लिये। इस समय से लेकर अपने जीवन के अन्त तक खाँ साहब बड़ौदा में ही रहे। खाँ साहब का कार्यक्रम देशभर में हुआ करता था। वह राजा महाराजाओं का युग था। विभिन्न रियासतों के महाराज एवं नवाब खाँ साहब को आमंत्रित करते थे। बड़ौदा महाराज की ओर से दूसरे रियासतों में गायन कार्यक्रम के लिये खाँ साहब को जाने की पूरी छूट थी। उस समय भारत में संगीत सम्मेलन का दौर शुरू नहीं हुआ था। राजदरबारों में ही शास्त्रीय संगीत के कलावंतों के गायन कार्यक्रम हुआ करते थे। इस क्रम में उ. फैयाज खाँ ने जिन प्रमुख दरबारों में अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया उनमें प्रमुख हैं-मैसूर, इंदौर, जयपुर, हैदराबाद, रामपुर, महिषादल, चम्पानगर-बनैली इत्यादि। इन दरबारों में खाँ साहब के प्रभावकारी गायन से मुग्ध होकर उनको जी खोलकर पुरस्कृत करते थे। पारिश्रमिक की बड़ी रकम के अलावे खाँ साहब को हीरे का हार, बाईस असर्फियों की माला और उनके स्वर्णाभूषण और दोसाले सम्मान स्वरूप मिले थे। इस प्रकार पिछली शताब्दी के दूसरे दशक में खाँ साहब की ख्याति एवं प्रतिष्ठा देशभर में कायम हो चुकी थी।

जब संगीत सम्मेलन का आयोजन आरंभ हुआ, तब खाँ साहब को लगभग सभी सम्मेलनों में भाग लेने के लिये निमंत्रण आया करता था। यह सर्वविदित है कि पं. विष्णु नारायण भातखंडे ने ही सर्वप्रथम संगीत-सम्मेलनों का आयोजन आरंभ किया। प्रथम अखिल भारतीय संगीत सम्मेलन बड़ौदा में हुआ, तदुपरांत दिल्ली में और उसके बाद लखनऊ में। इन सभी संगीत सम्मेलनों में उ. फैयाज खाँ साहब का यशस्वी गायन हुआ था। उस समय से लेकर अपने जीवन के अंतिम वर्षों तक खाँ साहब देश के सभी सम्मेलनों में भाग लेते रहे। उनके सभी कार्यक्रम श्रोताओं के लिये एक अविस्मरणीय अनुभूति बन जाते थे।

उ. फैयाज खाँ चौमुखी गायकी यानि चारों पट के गायक थे। वे ध्रुवपद-

धम्मार, ख्याल, ठुमरी, दादरा, टप्पा एवं लोकभाषा में गेय छोटी चीजों को भी आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करने मे कुशल थे। लेकिन यहाँ यह सर्वप्रथम उल्लेखनीय है कि खाँ साहब एक प्राचीन ध्रुवपद घराने से संबंध रखते थे। आगरा घराना मूलत: नौहारबानी ध्रुवपद गायकों का घराना है। खाँ साहब के नाना के पिता घग्घे खुदाबख्श ने आगरा से ग्वालियर जाकर महान् ख्याल गायक नत्थन पीरबख्श से तालीम हासिल की थी। प्राय: उसी समय से आगरे घराने में ख्याल गाने का सिलसिला शुरू हुआ। आगरा घराने की गायकी में ध्रुवपदीय गान-शैली का सर्वाधिक प्रभाव है। उ. फैयाज खाँ ध्रुवपद को शास्त्रीय संगीत में सबसे ऊँचा और गरिमामय स्थान देते थे। राग की शुद्धता, गाम्भीर्य एवं शास्त्रीयता ध्रुवपद में सर्वाधिक रहती है- उ. फैयाज खाँ साहब की ऐसी मान्यता थी।

खाँ साहब हिन्दुस्तानी संगीत में पहले गायक हैं, जो अपना कार्यक्रम ध्रुवपद शैली में राग के आलाप, नोम-तोम से आरंभ करते थे। खाँ साहब का नोम-तोम एवं आलाप संपूर्ण संगीत-जगत में विख्यात था। उनकी वजनदार आवाज में जब आलाप आरंभ होता था, तो श्रोतागण शास्त्रीय संगीत की गरिमा का अनुभव करते थे और मुग्ध होकर हर्षोल्लास प्रकट करते थे। आलाप के बाद नोम-तोम के क्रम में जब खाँ साहब नाद से उत्पन्न दमदार गमक का स्वरोच्चार करते थे, तब श्रोताओं को उनकी गायन-क्षमता का अनुभव होता था। सभी स्तर के श्रोता मुक्त कंठ से कह उठते थे कि खाँ साहब देश के बेजोड़ गायक हैं और ऐसा वजनदार शास्त्रीय गायन अन्यत्र सुनने को कहीं नहीं मिलता, और यही भाव लेकर श्रोता अपने घर लौटते थे।

आलाप के बाद खाँ साहब ध्रुवपद या धम्मार की एक रचना प्रस्तुत करते थे। स्थाई, अंतरा, संचारी, आभोग के गायन में रचना पद के शब्दों को स्पष्ट करते हुए गाते थे। धम्मार गायन में लयकारी का भी अक्सर प्रयोग किया करते थे, जिससे श्रोताओं का मनोरंजन होता था। ध्रुवपद गायन में लंबी मींड़ का प्रयोग करते थे। वैसे बड़ौदा दरबार में एक पखावज- वादक नियुक्त थे, जो खाँ साहब को ध्रुवपद-धमार में गायन में संगत करते थे, लेकिन संगीत सम्मेलनों में अधिकतर तबले में संगति में ही खाँ साहब ध्रुवपद-धम्मार गाया करते थे।

ख्याल के बाद खाँ साहब बराबर ठुमरी गाया करते थे। और श्रोताओं के मनोरंजन के लिये कभी-कभी दादरा भी। उ. फैयाज खाँ ध्रुवपद-धमार एवं ख्याल प्रस्तुत करने में कुशल थे ही ठुमरी गाने के उतने ही कुशल थे। ठुमरी गाने की क्षमता उन्होंने स्वयं विकसित की थी। पिछली शताब्दी के आरंभ में जब वे अपनी जवानी में कलकत्ता में गायन कार्यक्रम के लिये जाना शुरू किये

थे, उस समय तब उनका कलकत्ता में ठुमरी के दो महान् कलाकार श्री गणपतराव भैया साहब एवं श्री मौजूद्दीन खाँ गायक से संपर्क हुआ। उन दोनों को खाँ साहब ने खूब सुना। भैया साहब और मौजूद्दीन खाँ ठुमरी के अप्रतिम कलाकार थे। दरअसल इन दोनों के माध्यम से ठुमरी का अतिशय प्रचार देशभर में हुआ। उ. फैयाज खाँ साहब ने ठुमरी जैसी कल्पना प्रधान भावुक शैली का सांगीतिक महत्व देखते हुए और इसको मुखरित करने वाले उपरोक्त दोनो कलाकारों को सुनने के बाद ठुमरी गाना आरंभ कर दिया। कुछ ही दिनों के बाद खाँ साहब भैरवी में ठुमरी की कई बंदिशें गाते थे। लेकिन उनके एक गायन कार्यक्रम की रिकॉर्डिंग की चर्चा करना यहाँ उपयुक्त समझता हूँ। आकाशवाणी से कुछ वर्षों तक रविवारीय प्रात:कालीन संगीत-सभा कार्यक्रम प्रसारित किया गया। राग-गायन के पश्चात् जब भैरवी की सुप्रसिद्ध ठुमरी ''बाबुल मोरा नैहर छुटो जाय...'' गाते समय खाँ साहब शेर के कहने के सिलसिले में ''दरोदीवार पर हसरत की नज़र करते हैं। खुश रहो एहले वतन हम तो सफर करते हैं।'' जब करूण स्वरों में गाने लगे, तो मेरे साथ सभी श्रोताओं की आँखों में आँसू आ गए। खाँ साहब के व्यक्तित्व में अनोखा भोलापन और अत्यधिक भावुकता थी। ठुमरी-गायन को अलंकृत करने के लिये खाँ साहब इसमें टप्पा-अंग की तान का सुंदर प्रयोग करते थे।

शास्त्रीय संगीत के महान् अनुयाथी होकर भी खाँ साहब संगीत में कट्टरपंथी नहीं थे। सत्य यह है कि वे एक सच्चे संगीतधर्मी कलाकार थे और संगीत के मर्म को गहराई से समझते थे। खाँ साहब जैसे उदारमना कलाकार की गायकी में दकियानूसी या कट्टरता का कहाँ स्थान था ? इसलिये तो वे गायन के अंत में दादरा या भजन भी गा देते थे। आगरा घराने के सभी अन्य गायक बोलतान को अपनी गायकी का अभिन्न अंग मानते आए हैं।

सन् 1995 ईस्वी में मैने जिज्ञासावश उ. अमीर खाँ साहब से उ. फैयाज खाँ के बारे में पूछा और उनसे उनकी गायन कला की जानकारी ली। उ. अमीर खाँ साहब ने इतना ही कहा-''आज जो कुछ मैं या देश के और लोग गा रहे हैं, सभी फैयाज खाँ साहब एवं उनके समकालीन उस्तादों के कारण ही यह संभव हो सका है।''

उल्लेखनीय यह है कि गया संगीत सम्मेलन से ही उ. बड़े गुलाम अली का नाम हुआ और इनकी ख्याति फैली। पटना विश्वविद्यालय रज़त-जयंती संगीत समारोह में उ. फैयाज खाँ के अतिरिक्त जिन कलाकारों ने भाग लिया उनके नाम हैं :- पं. ओंकार नाथ ठाकुर, बड़े गुलाम अली, पं. विनायक राव पटवर्धन, पं. नारायण राव व्यास, पं.ब्रह्मानन्द गोस्वामी, पं. डी.वी. पलुष्कर , कुमार गंधर्व,

1880) श्रीमती एस.एस. सुब्बुलक्ष्मी एवं के.एल. सहगल। तबला वादकों में थे :- वाजिद हुसैन खाँ(लखनऊ), हबीबुद्दीन खाँ(मेरठ), अनोखेलाल (बनारस)। तदन्तर गया के म्यूजिक कांग्रेस सम्मेलन में उपरोक्त गायकों के अतिरिक्त श्रीमती केसरबाई केरकर श्रीमती गंगूबाई हंगल, उ. अलाउद्दीन खाँ. उ. हाफिज अली एवं कथक-नर्तक पं. शंभु महाराज थे। उसी वर्ष पटना विश्वविद्यालय संगीत सम्मेलन के बाद वैद्यनाथ धाम, देवघर में एक संगीत सम्मेलन आयोजित किया गया। 1944 ई. में हुये इन तीनों संगीत सम्मेलनों में उ. फैयाज खाँ का गायन बड़ा प्रभावकारी रहा।

''शिक्षण कार्य''

महाराज गायकवाड़ ने संगीत के प्रशिक्षण व प्रचार के लिये बड़ौदा में अपने दरबार की ओर से 'कलावंत कारखाना' की स्थापना की। इसके लिये एक समिति बना दी गयी, जिसकी देख-रेख मि. फिडलिश करते थे। इनके बाद हिर्जीभाई डॉक्टर प्रशिक्षण-कार्य की देखभाल करते थे। महाराज के आदेश रहने के कारण फैयाज खाँ साहब को छात्रों को तालीम देना पड़ती थी, लेकिन प्रारंभिक स्तर के छात्र होने के कारण खाँ साहब को सिखाने में बड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। खाँ साहब एक महान कलाकार थे। मनोनुकूल कार्य नहीं रहने के कारण शिक्षण-कार्य से इस्तीफा देना चाहते थे लेकिन महाराज एवं दरबार के कर्मचारी वर्ग के आग्रह पर खाँ साहब प्रशिक्षण कार्य से मुक्त हुए, लेकिन उनको हर सप्ताह संगीत शिक्षकों एवं छात्रों को अपना गायन सुनाना पड़ता था। इसके लिए एक प्रकार की महफिल ही आयोजित कर दी जाती थी। कहने का तात्पर्य यह है कि महाराज गायकवाड़ एवं दरबार के अधिकारी वर्ग खाँ साहब की दिल से इज्जत करते थे और उनको खुश रखने का बराबर ख्याल रखते थे।

''खाँ साहब का शिष्य परिवार''

उस्ताद फैयाज खाँ साहब को कोई संतान नहीं था। उनके शिष्य ही संतान की तरह उनके साथ रहते थे। उनके अनेक शिष्य बड़ौदा में उनके साथ रहते थे। खाँ साहब अपने शिष्यों को पुत्रवत अपना स्नेह देते थे। इन शिष्यों का खाने-पीने का खर्च खुद खाँ साहब करते थे।

खाँ साहब पूरे देश में गाना गाने के लिये जाते थे।ऑल इंडिया रेडियो दिल्ली-लखनऊ का कार्यक्रम हो या संगीत-सम्मेलनों का, उनके कुछ निजी संगतिकार एवं शिष्य हर जगह साथ जाते थे और उनके गायन कार्यक्रम में सहयोग देते थे। खाँ साहब के गायन में मुख्य रूप से सहयोग करते थे, उस्ताद अता हुसैन खाँ। अता हुसैन अतरौली के महबूब खाँ 'दरसपिया' के सुपुत्र और खाँ साहब

के पत्नी के भाई और खाँ साहब के शिष्य भी थे। इनके अतिरिक्त खाँ साहब के साथ गायन में तानपुरा छेड़नेवाले और आवाज लगानेवाले होते थे, लताफत हुसैन और शराफत हुसैन। खुसरूपुर पटना(बिहार) निवासी मौजूद हुसैन-जिनको खाँ साहब बहुत अधिक मानते थे और हर जगह अपने साथ रखते थे- खाँ साहब के कार्यक्रमों में बराबर तानपुरा छेड़ते थे। बड़ौदा में या बाहर कहीं भी खाँ साहब के भोजन एवं खान-पान का प्रबंध भी मौजूद हुसैन ही करते थे। खाँ साहब के गायन में हारमोनियम पर संगत करते थे उस्ताद गुलाम रसूल। गुलाम रसूल खाँ साहब उस्ताद फैयाज खाँ के निकट संबंधी एवं सुविज्ञ संगीतकार थे। बड़ौदा संगीत महाविद्यालयों में उ.गुलाम रसूल प्राध्यापक पद पर वर्षों तक कार्यरत् रहे। उ. फैयाज खां के जीवन के अंतिम वर्ष सुखी नहीं रहे। खाँ साहब कुछ वर्ष अस्वस्थ रहे। अपने जीवनकाल में उन्होने विपुल धनराशि एवं हीरक-स्वर्ण अर्जित किया, लेकिन शिष्य एवं परिवारजन के पालन पोषण में और अपना स्तरीय जीवन-शैली बनाए रखने में अर्थ संचित-सुरक्षित नहीं रह सका। दवा-इलाज के लिये अर्थ की कमी हो गयी। अधिकतर पुरानी पीढ़ी के संगीतकारो का जीवन का अंत इसी दयनीय रूप में होता था। कुछ दिन रूग्णावस्था में रहने के बाद लगभग 70 वर्ष का आयु में उ. फैयाज खाँ का देहांत 5 नवंबर,1950 ई. में बड़ौदा में हो गया।

खाँ साहब की कब्र बड़ौदा में है। उनकी कब्र के ठीक बगल में उनके नाना उ. गुलाम अब्बास की भी कब्र है। खाँ साहब के नाम पर बड़ौदा में उ. फैयाज खाँ पथ है।

''उस्ताद शराफत हुसैन खाँ''

स्वतंत्रता के बाद आकाशवाणी कार्यक्रम में शास्त्रीय संगीत को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से संगीतकार अपने कार्यक्रम का सीधा प्रसारण करते थे। संरक्षण-संकलन हेतु आकाशवाणी द्वारा रेडियो में डिस्क-रिकार्डिंग की जाती थी। शास्त्रीय संगीत से गायन-वादन की ग्रामोफोन रिकॉर्डिंग(78 आर.पी.एम.) अधिकतर बजाई जाती थी। बच्चे की आवाज में तीन कलाकारों के रिकॉर्ड बजते थे। प्रथम, स्व. कुमार गंधर्व के, दूसरे उ. शराफत हुसैन खाँ के और तीसरे मास्टर मदन के। प्रथम दो ख्याल-गायन और तीसरे गजल के। राग मुलतानी में छोटा ख्याल 'ए री आली री...' रेडियो पर अक्सर बजता था। यह रिकॉर्ड उ. शराफत हुसैन का था। लगभग 10 साल की उम्र में इसकी रिकॉर्डिंग हुई थी। इस रिकॉर्ड को सुनने पर बालक कलाकार की प्रतिभा का परिचय सभी श्रोताओं को मिलता था और श्रोतागण बाल-कलाकार

के गायन की प्रशंसा करते थे। यही बालक-कलाकार आगे चलकर आगरा घराने के प्रतिनिधि गायक के रूप में और संगीत जगत में ख्यात हुआ। दो दशकों तक उ. शराफत हुसैन खाँ देश के लगभग सभी संगीत सम्मेलनों में भाग लेते रहे और आगरा घराने की ओजपूर्ण गायकी से श्रोताओं को आनंदित करते रहे।

उ.शराफत हुसैन का जन्म अतरौली में हुआ। इनके पिता का नाम श्री लियाकत हुसैन खाँ था। शराफत हुसैन, उ. फैयाज खाँ साहब के संबंध में भांजे होते थे। उ. खादिम हुसैन एवं उ. लताफत हुसैन इनके चचेरे भाई थे। संगीतकारों के परिवार में इनका जन्म हुआ था , इसलिये इनको सांगीतिक संस्कार विरासत में मिला था। ये बचपन से ही अपने मामा उ. फैयाज खाँ के पास रहे। लगातार वर्षों तक खाँ साहब के सानिध्य में रहकर उनसे इन्होंने शास्त्रीय संगीत की विधिवत् शिक्षा पाई थी। जहाँ कहीं भी उ. फैयाज खाँ साहब अपने गायन-कार्यक्रम के लिये जाते अपने साथ वे शराफत हुसैन को अनिवार्य रूप से ले जाते थे। शराफत हुसैन को उ. फैयाज खाँ का बड़ा प्यार मिला था। इसी प्यार तालीम और अपनी लगन, अभ्यास के कारण वे एक कुशल गायक बनने में सफल हुए।

उ. शराफत हुसैन, बड़ौदा से आने के बाद अपने जन्म स्थान, अतरौली में आजीवन स्थाई रूप से रहे। वे आकाशवाणी दिल्ली के कलाकार थे और अतरौली से हर महीने अपने रेडियो कार्यक्रम के लिये दिल्ली जाया करते थे। आकाशवाणी दिल्ली से वे लगातार कई वर्षों तक अपना कार्यक्रम प्रसारित करते रहे। अखिल भारतीय संगीत कार्यक्रम में कई बार उनका गायन प्रसारित हुआ . इसके अतिरिक्त वार्षिक रेडियो संगीत सम्मेलन में भी उन्होने कई बार गाया। आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों द्वारा आयोजित रेडियो संगीत सभा में भी वे गाते रहे। उस समय कलकत्ते में प्रतिवर्ष तानसेन संगीत-समारोह आयोजित किया जाता था। यह समारोह एक सप्ताह तक चलता था। खाँ साहब इस सम्मेलन में लगभग हर साल बुलाए जाते थे। कलकत्ता के अन्य संगीत सम्मेलनों में भी शराफत साहब का गायन होता था। कलकत्ता के संगीत-प्रेमी श्रोता उनका गायन सुनकर आनंदित होते और उनके गायन की प्रशंसा करते थे। इनका गायन सुनकर कलकत्ता के गुणीजन इनके गुरू उ. फैयाज खाँ को बरबस याद करते थे। कलकत्ता के बुजुर्ग संगीतकार एवं संगीत प्रेमीजन खाँ साहब को बड़े प्यार-इज्जत के साथ दिल से मानते थे। कलकत्ता में इन्होने कई शिष्यों को आगरा घराने की गायकी की तालीम दी। कलकत्ता के गुणीजन खाँ साहब को जो सम्मान देते थे, इसका उन्हें गर्व था।

शराफत खाँ साहब ने उ. फैयाज खाँ के अतिरिक्त अपने निकट

संबंधी उ. अता हुसैन खाँ से भी तालीम पाई थी। आगरा घराने की अच्छी तालीम तो उनको मिली ही थी, उनके गायन में एक निजी विशेषता भी थी। उनका गायन बड़ा भावपूर्ण होता था। अपने उस्ताद की तरह ही उनके गायन में एक पुकार थी, जो सभी प्रकार के श्रोताओं को प्रभावित करती थी। उनकी आवाज बुलंद और वजनदार खनकदार थी। आगरा घराने की गायकी में ओज और पौरूष तत्व है। यह विशेषता खाँ साहब के गायन में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती थी। खाँ साहब आरंभ में राग का थोड़ा आलाप करने के बाद ही विलंबित ख्याल का गायन आरंभ करते थे। आलाप में ध्रुवपद की गंभीरता अवश्य रहती थी, लेकिन वह ध्रुवपद जैसा खड़ा आलाप नहीं होता था, उसमें ख्याल की सहजता और रंग रहता था। विलंबित ख्याल के आलाप-विस्तार में स्वरों को बड़ी गंभीरता के साथ लगाते थे और आगरा घराने की गरिमा को सदैव कायम रखते थे। बोलतान के साथ-साथ फिरत-मुर्की की तानों का विस्तृत प्रयोग करते थे मींड युक्त गमक युक्त मुरक की तान सभी को मांजा गया था। उ. फैयाज खाँ की रचनाओं को अपनी आवाज में नया कलेवर देकर प्रभावकारी ढंग से प्रस्तुत करते थे। सच तो यह है कि उनकी गायकी गुरुजन एवं बुजुर्गों की मात्र नकल नहीं थी, उनकी गायकी में आगरा घराने का अनुशीलन एवं निजी कल्पना का एक सुंदर समन्वय था। नि:सन्देह उनकी गायन-शैली से आगरा घराने की गायकी संवर्धित हुई। खाँ साहब की गायकी में इनकी विशिष्ट प्रतिभा की पहचान थी। उसमें आगरा घराने का अनुशीलन एवं निजी कल्पना का सुंदर समन्वय था। इनसे आगरा घराना संवर्धित हुआ।

पटना में प्रतिवर्ष दशहरा संगीत-कार्यक्रम बड़े पैमाने पर हुआ करता था। इस कार्यक्रम में खाँ साहब लगातार कई वर्षों तक आते रहे। पटना में खजांची रोड एवं गाँधी मैदान में आयोजित दुर्गा पूजा संगीत समारोह में खाँ साहब द्वारा प्रस्तुत राग चंद्रकौंस का अप्रचलित प्रकार और राग मालती बसंत अभी तक संगीत प्रेमी श्रोताओं के स्मृति पटल कर अंकित हैं।

खाँ साहब के प्रिय राग थे :- दरबारी, नन्द, खेमकल्याण. जोग. जयजयवन्ती, पूरिया, बिलासखानी तोड़ी। इन रागों को खाँ साहब बड़े ही प्रभावकारी ढंग से गाते थे। इनके गायन में उनका कलाकार खासतौर से निखरता था। राग खमाज का छोटा ख्याल-''बोल बंदिश की ठुमरी'', ''ना मानूंगी, ना मानूंगी, ना मानूंगी,,,'' को वे बड़े आल्हादपूर्वक और वजनदार ढंग से गाते थे. जो संगीत प्रेमी श्रोताओं के लिये अविस्मरणीय है। छोटा ख्याल गाते समय खाँ साहब तबले के साथ थोड़ी लयकारी भी करते थे। इस जगह पर श्रोताओं को

साथ-संगत का आनंद मिलता था। अपने उस्ताद की तरह शराफत खाँ साहब ख्याल के बाद ठुमरी-दादरा 'पुकार' के साथ गाते थे और श्रोताओं को मुग्ध कर देते थे।

अकस्मात् उ. शराफत हुसैन खाँ अतरौली में कैंसर रोग से पीड़ित हो गये। फिर इलाज के लिये दिल्ली आकर अस्पताल में भर्ती हो गये। खाँ साहब छाती के कैंसर से अधिक बीमार हो गये थे। चिकित्सा में कोई कमी न रही, लेकिन क्रूर नियति ने खाँ साहब को असमय इस संसार से उठा लिया। दिल्ली के अस्पताल में 7 जुलाई, 1985 ई. में 55 वर्ष की अवस्था में खाँ साहब का देहांत हो गया। इनकी असामयिक मृत्यु से शास्त्रीय संगीत-जगत में ऐसी अपूरणीय क्षति हुई, जो अकल्पनीय थी। खाँ साहब का देहांत असमय हुआ। संतोष सिर्फ एक बात का ही है कि उन्होंने अपने जीवनकाल में देश के कोने-कोने में अपना गायन प्रस्तुत किया, श्रोताओं को प्रसन्न किया और अपने घराने की प्रतिष्ठा को कायम रखने में सफल रहे।

आकाशवाणी संग्रहालय में उ. शराफत हुसैन खाँ साहब की कई अच्छी रिकॉर्डिंग्स सुरक्षित हैं। इनके अतिरिक्त खाँ साहब का लॉंग प्लेइंग रिकॉर्ड एच.एम.वी. ने तैयार किया था, जिसका कैसेट अब उपलब्ध है।

उस्ताद फैयाज खाँ हिन्दुस्तानी संगीत के दो युगों के बीच एक सेतु थे। इस सेतु का एक छोर 18 वीं-19 वीं शताब्दी की ध्रुवपद-परंपरा में थी और दूसरी 20 वीं शताब्दी के ख्याल के युग में। खाँ साहब का पूरा गायन सुनने पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है।

खाँ साहब को कोई संतान नहीं थी। ये शिष्यगण ही उनकी संतान थे और उन्हें वे संतान की तरह प्यार करते थे। खाँ साहब ही उनका खाना-खर्च चलाते थे। खाँ साहब एक महान् गायक तो थे ही विद्यादान में इतने उदार थे कि पं. भातखंडेजी ने श्रीकृष्ण नारायण रातंजनकर को बंबई से बड़ौदा खाँ साहब के पास भेज दिया। वहाँ उस्ताद के पास रहकर रातंजनकर जी ने आगरा घराने की अच्छी तालीम पाई और आगे चलकर एक विद्वान गायक बने। भातखंडे जी खाँ साहब की बड़ी इज्जत करते थे। इसका मुख्य कारण यह था कि खाँ साहब

अपने कार्यक्रमों में खाँ साहब हारमोनियम अवश्य रखते थे। उनके साथ स्थाई रूप से हारमोनियम पर संगत करने वाले थे-श्री गुलाम रसूल, जो इनके संबंधी और शिष्य भी थे। गायन को आकर्षक एवं प्रभावकारी बनाने के लिये सारंगी एवं हारमोनियम आवश्यक संगति वाद्य है-खाँ साहब की ऐसी मान्यता थी। खाँ साहब के देहांत के बाद रेडियो में हारमोनियम का प्रयोग बिल्कुल बंद

कर दिया गया। फिर सोलों की क्या बात , संगति के लिए भी यह प्रतिबंधित हो गया। लेकिन फिर संगीतकारों को इसकी बड़ी जरूरत महसूस हुई और रेडियो में हारमोनियम फिर चालू हो गया। आज हारमोनियम पर कोई प्रतिबंध नहीं है। स्मरणीय यह है कि खाँ साहब हारमोनियम को अनिवार्य रूप से अपने गायन में संगत के लिये रखते थे।

खाँ साहब ने ख्याल और ठुमरी की अनेक रचनाएँ की थी। वे 'प्रेमपिया' के उपनाम से बंदिशों की रचना करते थे। आज देश में रागजोग में उनकी रचनाएँ-'साजन मोरे घर आए' एवं राग जयजयवंती में द्रुत ख्याल 'मोरे मंदिर अबलों नहीं आए' जैसी लोकप्रिय शायद ही कोई और बंदिश हुई हो। इनके अतिरिक्त राग ललित में 'तड़पत हूँ जैसे जल बिन मीन' और जौनपुरी में 'फूलबन की गेंदन मै का मारो' या बरवा की बंदिश ' बाजे मोरी पायलिया' बड़ी लोकप्रिय हुई। आज तक संपूर्ण देश में ये रचनाएँ ख्याल गायक गा रहे हैं। वैसे ही उनकी गायी भैरवी ठुमरी 'बाजूबंद खुल-खुल जाए' या 'बाबुल मोरा नैहर छूटो जाय' बहुत अधिक लोकप्रिय रही है। भैरवी दादरा 'चलो काहे को झूठी बनाओ बतियाँ' तंत्रवादक यादि सितार-सरोद-वायलिन या शहनाई के कलाकार भी भैरवी दादरा की इस बंदिश को खूब बजा रहे हैं। खाँ साहब की रचनाओं में निहित रंजक तत्व आज भी संगीतकार एवं श्रोताओं के लिये निस्सीम महत्व रखता है। 5 नवंबर 1950 ई. इसी दिन बड़ौदा में उ. फैयाज खाँ साहब का निधन हो गया। उस दिन भारतीय संगीत का दैदीप्यमान सूर्य भारतीय संगीत के क्षितिज पर अस्त हो गया।

खैरागढ़ वि.वि. द्वारा यह महती आयोजन हुआ। इससे पूर्व कथक सेमिनार हुआ था। उसमें भी मैं यहाँ उपस्थित था। अभी 2 दिनों से यहाँ जो इतनी दुर्लभ महत्वपूर्ण चर्चा, परिसंवाद, गायन चल रहा है- रेकॉर्डिंग का संग्रह सुनने को मिला। मेरे अनुभव में आज जितनी बढ़ोत्तरी हुई,मुझे अमूल्य क्षण बिताने का अवसर मिला, उसको किन शब्दों में बयान करूँ ? अद्‌भुत आयोजन हुआ, पूर्ण सफल रहा। जैसा कि पं. मुखर्जी साहेब ने कहा, ऐसे आयोजन होते रहना चाहिये, वी.सी. मैडम ने भी स्वीकृति दी। गायन-वादन-नृत्य-चित्रकला सभी का सेमिनार होते रहना चाहिये। विद्यार्थी इससे बहुत लाभान्वित होते हैं। मैं चाहता हूँ कि ऐसा आनंद ऐसा अवसर ऐसी अनुभूति मुझे मिले । मैं कामना करता हूँ कि ऐसे आयोजन पुनः आयोजित हो और मैं पुनः यहाँ आऊँ, धन्यवाद।

आगरा एवं ग्वालियर : अंतर्संबंध

डॉ. गंगाधर राव तैलंग कानपुर

मैं दावा नहीं करता कि मैं सब सहीं कहूँगा। वीणाजी का फोन आया कि आप फैयाज़ खाँ की ठुमरी पर कहिये। मैंने कहा बड़े-बड़े लोग उस पर कुछ नहीं कर पाते, मैं क्या कहूँ ? आगरा घराना सेमिनार का अवसर देखकर मैं कुछ कहूँ इसके लिये बबनराव हलदनकरजी ने बेरी बड़ी मदद की एवं ग्वालियर एवं आगरा के संबंध का विषय देकर बड़ी राहत पहुँचाई है। इतेहास से मुझे प्रेम है। कल मुखर्जी साहेब के वक्तव्य से मुझे मालूम पड़ा कि इतिहास में उनकी भी रूचि है एवं बहुत गहरी जानकारी व पैठ है। बहुत सी बातें उन्होंने जानते हुए भी विस्तृत नहीं कही। परंतु इशारे से उन्होंने बहुत कुछ कहा। ठाकुर जयदेवसिंह मेरी प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। वे मेरे पिताजी के पास सीखने आया करते थे, मैं छोटा हूँ इसलिये उनकी मुझपर बड़ी कृपा दृष्टि रही। उन्होंने मुझे अध्ययन की प्रेरणा दी। फैयाज़ खाँ साहब का एक संस्मरण मुझे याद आ रहा है 1937-38 की बात होगी। ठाकुर साहब कानपुर में एक बड़ी कान्फ्रेन्स करते थे। उसमें फैयाज़ खाँ साहब आए थे। कुमार गन्धर्व भी आए थे। कुमार का 1948 के पूर्व का गाना और बाद का गाना बिल्कुल ही अलग था। ठाकुर साहब ने मेरे पिताजी से कहा, कुमार गन्धर्व का गाना सुनने के लिये गंगाधर को जरूर भेजें। इसका उत्साह वर्धन होगा। कालका विद्यालय में कार्यक्रम आयोजित थी मैं 8-9 बरस का था। मुझे सबसे सामने बिठाकर उन्होंने यहाँ ध्यान से सुनना बाद में हम पूछेगे कैसा लगा ? उस दिन कुमारजी का पहले और उनके बाद फैयाज़ खाँ का गाना था। फैयाज़ खाँ(ग्रीनरूम में) दरबारी गुनगुना रहे थे। कुमारजी उन्हें ध्यान से सुन रहे थे। मंच पर कुमारजी ने दरबारी को फैयाज़ खाँ की स्टाईल में हूबहू वैसा का वैसा उतार दिया। फैयाज़ खाँ सुनते रहे-गदगद हो गए। उन्होंने कुमार को उठाकर हृदय से चिपका लिया। कुमारजी की उम्र कोई 15-16 की रही होगी। बोले ''वाह बेटे वाह।'' उसी दिन उन्होंने नहीं गाया। दूसरे दिन सुबह रामकली गाया। बाँधों बाप्रवंद खुल खुल जाय गाया। उस समय मैं छोटा था। फिर भी मुझे रोमांच हुआ और आवाज कसाव सुर का जबरदस्त था और मैं अत्यन्त ही प्रभावित हुआ। उनका व्यक्तित्व का वैसा ही प्रभावशाली था। तमगे लगे कोट की वह भव्य मूर्ति देखकर ही लगता था कोई दिव्य देवी शक्ति सम्पन्न खड़ा है। कल कुमार साहब ने बताया कि खाँ साहब ने अपनी आवाज का गुणधर्म पहचानकर उसे परिमार्जित

किया था। उस आवाज का श्रोताओं पर जबरदस्त प्रभाव पड़ता था। उनकी नकल करने वाले वैसी आवाज ला नहीं सकते थे। उनकी नकलचियों की मीठी आवाज में दरार पड़ने लगती है। खाँ साहब खाँ साहब ही थे। ठाकुर साहब उन्हें शताब्दी का सर्वश्रेष्ठ गायक मानते थे। इस महफिल के दूसरे दिन ठककुर साहब ने घर आकर मुझे महफिल के बारे में पूछा व चर्चा की। गुरूजी यानी मेरे पिताजी को फैयाज खाँ के बारे में पूछा। मेरे पिताजी ने तब एक संस्मरण सुनाया- ग्वालियर में एक बार गुलाम अब्बास खाँ वृद्ध अवस्था में आए थे। तब फैयाज खाँ जवान थे, अचकन शेरवानी साफा पहने थे। शुरू-शुरू का गाना फैयाज खाँ ने गाया। बड़ा आकर्षक था। गुलाम अब्बास खाँ और फैयाज खाँ का सुरीला गाना आज भी नानू भैया के कानों में गूँजता है। -खैर...अध्ययन से कैसे और क्यों का आरपाने तक संतुष्टि तक विद्यार्थियों को पढ़ना चाहिये। मेरा इतिहास में रूझान रहा। मैने देखा कि जितना हमारे संगीत के इतिहास पक्ष से हुआ है, उतना शायद और किसी शास्त्र के साथ नहीं हुआ होगा। हम लोग बहुत सारी बातें कलाकारों से सुनते हैं और याद रखते हैं। पर जब उन्हें किसी कसौटी पर कसने की कोशिश करते हैं, तो बड़ा दुख होता है। सच्चाई का और उनकी बातों का कहीं सामंजस्य ही नहीं बैठता। हम यहाँ विचार करें उसे निष्कर्ष तक ले जाएं निराकरण करें यह मेरा नवेदन है।

घग्घे खुदाबख्श को ही लीजिये। तीन पुस्तकें मैंने पढ़ी। एक में उनका जन्म 1890- दूसरे में (दीपाली नाग) 1879, तीसरी में 1800 लिखा है अब ठीक है, मतभेद है। पर विद्यार्थी पूछे कि क्या लिखें ? तो हमें बताने में परेशानी होगी। इसलिये हमें खोज की आवश्यकता है व एकरूपता के लिये प्रयास करना चाहिये। ऐसे ही दूसरी बात दिल्ली के पास अब्दुल्ला व कादर बक्ष को आगरा की तालीम मिली। उन्हीं के वंशज नत्थन पीर बक्ष बताये गये हैं। उसी में नीचे लिखा है अबदुल्ला व कादरबक्ष जनकोजी महाराज (ग्वालियर) के दरबार में थे। इतिहास का विद्यार्थी होने के नाते मुझे मालूम है कि जनकोजी महाराज का समय 1828 के बाद का है जबकि दौलतराव का देहावसान हुआ था। यदि उस समय अब्दुल्ला व कादर थे तो दौलत राव सिंधिया जो नत्थन पीरबख्श को 1795 में लाते हैं तो जनकोजी तो उनके पुत्र थे। यह विसंगति है। पुत्र-पिता के समय एवं गुरू-शिष्य के समय निर्धारण में। ऐसी अनेक विसंगतियों को संशोधन द्वारा ठीक किया जाय यह हमारा कर्तव्य है। मैने थोड़ा सोचा है आगरा घराने के इतिहास पर यह मेरी चर्चा का विषय है।

(निदेशक-) पंडितजी ने अभी बहुत अच्छा विषय छेड़ा है इसमें शक नहीं। हम लोगों ने जब ये चार्ट बनाया था, तब इसमें ईस्वी सन् डाले

थे। उसी समय हमारा ध्यान गया था कि इतिहास की पुस्तकों के आधार पर चेक करके संशोधित किया जाना जरूरी है। क्योंकि ध्रुपद पहले था कि नौहार बानी ? यदि ध्रुपद पहले था तो नौहार बानी के नायक गोपाल कैसे आगरा घराने के प्रवर्तक हुए? फिर बीच में 200 वर्षों का लंबा गैप मौन है। उसे एडजेस्ट कैसे किया जाय ? इससे चार्ट के 'ईस्वी सन्' पर प्रश्नचिन्ह लगते हैं। फिलहाल चार्ट में, पुस्तक अध्ययन से परिवर्तन हो सकता है। पर महत्वपूर्ण है गायकी। घग्घेखुदाबख्श ने ग्वालियर आकर जो गायकी ली तो पहले की उनकी गायकी एवं बाद की गायकी को जानना प्रयोगात्मक पक्ष हमें चर्चा हेतु लेना उपयुक्त प्रतीत होता है।

(तैलंग जी-) मेरी बात पहले पूरी कर लूँ फिर गायकी पर आयेंगे। क्योंकि वह सभी घरानों से संबद्ध है। आगरा घराने के विद्वजन यहाँ बैठे हैं। इसलिये इनके सामने ये चर्चा होना ही चाहिये। विद्यार्थियों के प्रश्नों का समाधान यहाँ मिलने का अच्छा मौका है। बड़ी बात को मैं छोटी में कहूँगा। मानसिंह तोमर से मुहम्मद शाह रंगीले के समय 1719 तक रागसंगीत दिल्ली आगरा व ग्वालियर तक ही केन्द्रित रहा। कल यह प्रश्न उठा था कि सारे कलाकार दिल्ली से ही आते थे तो इसे दिल्ली घराना क्यों नहीं कहा गया ? मैंने इस पर विचार किया। जब दिल्ली में सुल्तानों का प्रभुत्व रहता था तो सिमटकर सारा केन्द्र दिल्ली में होता था, आगरे में जब आते थे तो आगरा केन्द्र बनता था पर उसका सूत्र संचालन, या संगीत का सूत्र ग्वालियर में था। तीनों में संगीत पनपा। अकबर का ज्यादा समय आगरे में बीता इसलिये आगरा केन्द्र बना और 36 कलाकार दरबार में थे जिसमें 16,17 ग्वालियर के थे। उसमें हाजी सुजान खाँ भी है। वे अकबर दरबार में थे। भातखण्डेजी ने भी करम इमाम की पुस्तक के आधार पर लिखा है। पर आईने अकबरी में कहीं भी सुजान खाँ का नाम नहीं है, सुभान खाँ का नाम है-वे सुजान खाँ हो सकते हैं ऐसा भी मत है। इसका मतलब यह वह वहाँ नहीं थे ऐसा नहीं पर शोध के दायरे में ये आना चाहिये। अब तो यह भी तथ्य प्रकट हो रहा है कि तानसेन की कोई लड़की ही नहीं थी। तो निष्पक्ष शोध जरूरी है। मेरे पास हाजी सुजान खाँ की एक बंदिश है मेरे पिता की दी हुई। मैने वह बंदिश किसी आगरा वाले गायक से नहीं सुनी। सोहनी राग-(कैसेट)-

जालिम अजब एक, जोगी जहर खाय, करता कहर क्या ये, गले मुंडमाला।
कहता सुजान खान जिया में तू यह मान, मेरा निगहबान, वो बैलवाला।

ये बंदिश मैने बचपन में सीखी थी (65 बरस पहले) शिवरात्रि को शिवमंदिर में इसे गाता था। इस बार मैं गाड़ी में था शिवरात्रि को, तो मैंने वीणाजी के पत्र पर ही वह बंदिश उतार ली। यह ग्वालियर घराने की तरफ से

आगरा वालों को अच्छी चीज दे सकूं, यह मंशा है। एक बंदिश है इसे आगरे वाले परज में गाते हैं। बबन साहब ने कहा कि पुराने जमाने में रागों के नाम नहीं बताए जाते थे। यह बात पूरी तरह सत्य है, हमारे पिताजी तुरन्त राग का नाम नहीं बताते थे। बाद में कभी एक साथ बताते थे। इस कारण एक ही बंदिश अनेक रागों में गाई हुई मिलती है। घघ्घे खुदाबक्ष ग्वालियर में आकर सीखे थे।वह समय 1800 माने तो ठीक रहता है, यह मेरा शोध है। इस प्रकार हस्सूखाँ का जन्म 1802 था, यह मेरा निष्कर्ष है। नत्थन खाँ (1806)। हस्सू खाँ, नत्थन खाँ सब समवयस्क थे। एक साथ सीखते थे, तो बंदिशे पीरबक्ष सिखाते थे, जब एक साथ सीखते थे, तो बंदिशों का इधर-उधर होना स्वाभाविक था।

(कुमार मुखर्जी-) सबसे बड़ी बात ये है कि जो डागर अभी गुजर गए उनके प्रपितामह थे अलाबन्दे खाँ। उनके ग्रेंड फादर थे बहराम खाँ। तो बहराम खाँ और घघ्घे खुदाबक्ष टोपीबदल भाई थे। जयपुर की सभा में तो हिसाब अन्दाजा लगाइये कि ग्रेंडफादर्स ग्रेंडफादर, वो कैसे 19 वीं सदी में हो सकते हैं ? आपके 1802 पर फिर सोचिये। अमीनुद्दीन खाँ,मुईनुद्दीन खाँ डागर अभी 77 वर्ष की उम्र में गुजरे। उनके ग्रेंड फादर के ग्रेंड फादर अलाबन्दे। जाकीरुद्दीन के ग्रेंडफादर बहराम खाँ। जब वे घघ्घे खुदाबक्ष के टोपी बदल भाई थे, तो वे 19 वीं सदी में कैसे पैदा हो सकते हैं ? ये तो साफ जाहिर है कि-एनी स्पेकुलेशन दिस सॉर्ट विल नॉट बी इन ऑर्डर। अलादिया खाँ का देहान्त 90 वर्ष की आयु में 1946 में हुआ। जब वे 20 वर्ष के जवान थे तब वे बहराम खाँ से मिले थे। तब बहराम खाँ की उम्र 95 थी। आँख से कुछ नहीं दिखता था। हिसाब लगाइये अलादिया खाँ के बेटे नसीरूद्दीन उनके बेटे अजीजुद्दीन 'बाबा 'को बहुत से वाकयात सुनाए गये थे। उन्होने उन्हें डायरी में नोट किया था। उर्मिला भिरदीकर और अमलान दास गुप्ता ने उसे संयुक्त रूप से अंग्रेजी में ट्रांसलेट किया उनमें हमें बहुत सारे इन्ट्रेस्टिंग फेक्ट्स मिले। जैसे दरसपिया ठुमरी में बहुत इन्ट्रेस्टेड थे। बहुत सी ठुमरियों के कॉम्पोजिशन्स उस समय उन्होने अलादिया खाँ को बताए। आगरे घराने के कोई उस्ताद बाहर ठुमरी नहीं गाते थे। वो तो फैयाज खाँ साहब ने शुरू किया। मोईजुद्दीन खाँ और भैया गणपतराव के प्रभाव से उन्होने गाना शुरू किया। हालाँकि मोईजुद्दीन की शैली और फैयाज खाँ की शैली में बहुत अन्तर है पर इन्सपिरेशन मौजुद्दीन खाँ थे इसमें शक नहीं। मलकाजान सीखती थी,उनके साथ तालुकात थे। डेट वाला चक्कर (बड़ा विचित्र है) युनुस हुसैन और विलायत हुसैन खाँ ने जो जिनियोलॉजिकल ट्री बनाया है- उनमें सरसरंग और शामरंग की उम्र में 15 वर्षों का अन्तर है बाप-बेटे में। इस चक्कर में पड़ना ही नहीं चाहिये।

(तैलंग जी) 1780 शामरंग का समय दिया है।

1780 में ही मक्खन खाँ वगैरह लखनऊ में थे। नादिरशाह के आक्रमण के बाद जब दिल्ली दरबार टूटा तो वहाँ से गुलाम रसूल लखनऊ असिफुद्दौला के दरबार में 1775 में आए। उस समय रागबहार-''कलियन संग करत रंग रलियाँ, भंवर भुंजार फूली फुलवारी, चहुँ ओर मोर बोले, कलियन की कूक सुन हूक उठी'' ये बंदिश गाई थी, तो बुलबुल आकर उनके कन्धे पर बैठ गई थी ऐसा कहते हैं। परंतु लखनऊ में उस समय शकर खाँ,मक्खन खाँ ने गुलाम रसूल को योग्य सम्मान नहीं दिया। वे उनके भांजे व शिष्य थे, और दिल्ली जाकर उन्होंने गुलाम रसूल से सीखा भी था। गुलाम रसूल कहाँ चले गए किसी को पता नहीं चला। कल मुखर्जी साहब ने मक्खन खाँ के पुत्र नत्थन पीर बक्ष ब्ताया है। पर मेरा विचार है कि ये जो मक्खन खाँ थे, वे ही पीरबक्ष होना चाहिये। 1795 में वे वृद्ध थे, तब उनको दौलतराव सिंधिया ग्वालियर लाये थे। महादजी सिंधिया का शासन काल 1761 से 1795 आता है। 1795 में दौलतराव सिंदे ग्वालियर के दरबार में बैठे। नत्थनपीर बक्ष को वे ग्वालियर लाए, उसी समय थोड़े दिनों के बाद ही कादरबक्ष,(कादरबक्ष के बारे में मैने जो सुना है) नत्थन पीरबक्ष के बेटे थे, जो अल्पायु में स्वर्गवासी हुए। यह लिंक जुड़ती है जनकोजी महाराज से। छोटी उम्र के हद्दू ,हस्सू और नत्थन खाँ को साथ-साथ शिक्षा दी गई उसी समय घघ्घे खुदाबक्ष आगरा से आए। यहाँ एक बात निश्चित रूप से कहूँगा कि ग्वालियर घराने के अभ्यास की एक निश्चित परंपरा थी। आज कोई किसी को बताता नहीं। पता नहीं वह पद्धति क्यों लोप हो गई ? मेरे पिताजी ने वह हमें बताई थी। मैं दावा तो नहीं करता कि इसी को नत्थन पीरबख्श ने घघ्घे खुदाबक्ष को बताया होगा, पर उसे मैने साठ वर्ष की एक महिला और एक डॉक्टर को सिखाया। उन्होने दो वर्षों तक उसका अभ्यास किया तो उनकी आवाज की कंपकंपी और कटुता चली गई एवं वे स्वान्तः सुखाय आज भी गा रहे हैं और अपनी प्रगति से प्रसन्न हैं। गौड़मल्हार की बंदिश- 'झुकआई बदरिया सावन की 'में ग्वालियर और आगरे में पाठ भेद है। (कैसेट) दूसरे सोहनी की ''कारी कारी कामलिया''...(कैसेट) आगरे में परज में गाते हैं। ''आज राधे, नैन को अंजन देत'' ग्वालियर में मधमाद सारंग में गाते हैं और आप आगरे वाले लंकदहन में गाते हैं ''नेवर की झनकार बंदिश-केदार की छलबल'', श्याम कल्याण की ऐसा तुमी को मैं जानत हूँ ,हमें कामोद में मिली है।

उस जमाने में रागों के नाम नहीं बताए जाते थे। इस कारण और फिर प्रभावशाली व्यक्ति का असर बंदिशों को प्रचारित करता है। घराने की बंदिशें इस कारण परिवर्तित हुई।

(पं. मुखर्जी) - सोदे सुगंध...आए डमरूवा..केदार

बसन्त...खमाज बहार। कवाल बच्चे बड़े मुबारक अलीखाँ इसे गाते थे। जो कि बड़े महमदखाँ के अनौरस पुत्र थे। 4 बेटे थे उनके। जिनमें से 2 तो सितार बजाते थे। सबसे नाम कमाया बड़े मुबारक अली खाँ ने। ये वो जमाना था जब सब लोग एक ही गायकी गाते थे। आगरा पैदा होने लगा था। किराना-विराना कहाँ था? तो वो ग्वालियर ही था। आगरा घराना आखिर आसमान से तो नहीं आया। इसी में से निकला इसलिये अनेक स्थाई अंतरा बंदिशों का साम्य भेद मिलेगा ही। नेवर की झनकार में आगरा और ग्वालियर के वर्शन में फर्क है। मुझे ग्वालियर वाला वर्शन ज्यादा पसंद है जो कि मैने राजा भैया पूंछ वाले से सुना और गिंडेजी से सीखा। इसमें आगरा ग्वालियर में फर्क है।

(तैलंग जी)-ग्वालियर व आगरा गायकी में समानता

मेरे विचार से फैयाज़ खाँ के पहले दोनों गायकियों में कोई फर्क नहीं था। स्थाई भरने की रीति समान थी। बोलतान, जोड़ विस्तार, नोम् तोम् में बीनकारी का काम सब समान है। ग्वालियर की तरह आगरा में भी अष्टांग गायकी का गुण है। भारत में प्रचलित गायकियों में अष्टांग है पर ग्वालियर में एक खास यह है कि जो आगरे में भी है कि व्यक्ति की व्यक्तिगत शैली के प्रस्फुटन का पूरा अवसर इनमें है। गुरू से सीखने के बाद भी स्वयं के व्यक्तित्व के अनुसार छबि दिखाने का इन दोनों में पूरा अवसर है। इस कारण एक ही गुरू पलुस्करजी से सीखे अनेक शिष्य अपनी अलग-अलग छटा दिखाते हैं - ओंकारनाथ पटवर्धन जी, व्यास जी। इसी तरह कृष्णराव पंडित,बड़े भाऊसाहेब गुरूजी, कुण्डल गुरू, सबकी अपनी पर्सनेलिटी अलग। परिवार एक ही दिखाई दे जाता है। इसलिये इसे अष्टांग कहकर बन्धन में न बाँधिये। यह सर्वांगपूर्ण है। व्यक्तित्व की छाप का आगरा में भी पूरा अवसर है। कई बार इस गायकी की लयकारी,लड़ंत,भिड़ंत भी सुनकर ऐसा लगता है मानो युद्ध हो रहा हो। पर बबन रावजी ने इन शंकाओं का निराकरण किया है, इनसे मैं सहमत हूँ। जहाँ तक कुमार गन्धर्व से किसी की तुलना नहीं हो सकती। ये युग पुरूष हैं ,ये आते हैं अपनी व्यक्तित्व की छाप छोड़ जाते हैं। उनका अनुकरण नहीं हो सकता। हमारे दादाजी का कोट हम यदि पहनकर आएं तो हास्यास्पद होगा। इसलिये अपनी पर्सनेलिटी के अनुसार अपनी गायकी डेवलप करनी चाहिये। यह ग्वालियर की देन है। आगरा का भी वही लक्ष्य है। मैं दोनों को अधिक दूर नहीं मानता। थोड़ा सा अन्तर है, यह अन्तर तो भाई-भाई में भी होता है।

उस्ताद विलायत हुसैन खाँ एक संगीतानुभव

डॉ. अरूण कशालकर

आगरा घराने में कतिपय महान कलाकार पैदा हुए। इन्होंने अपनी विद्या अपने शागिर्दों को सिखाया और अपनी परंपरा आगे बढ़ायी। इस घराने की हमारी पहचान म. उस्ताद फैय्याज खाँ साहब से ही शुरु होती है। इस कड़ी में आगे कई मान्यवर कलाकार पैदा हुए। उस्ताद विलायत हुसैन खाँ साहब इसी घराने के एप मान्यवर उस्ताद थे, जिनके कलारुप की जान पहचान करने का प्रयास हम यहाँ करेंगे। मौखिक परंपरा में बंदिश उस घराने के अनेक उस्तादों से संस्कारित होने के पश्चात ही ''घराने की बंदिश'' कहलाती है।

'बंदिश' यह मूलत: एक सर्वसमावेशक संकल्पना है जोकि भारतीय कंठ संगीत के लिये अत्यंत उपकारक भी है। बंदिश माने बंदिश रूप। इस बंदिस्त रूप से हमारा मतलब है सुबद्धतानिगम बद्धता जो आविष्कार को सुंदर बनाता है। हमारे बुजुर्गों ने सौंदर्य तत्वों का काफी विचार किया और उन अनुभव सिद्ध तत्वों को अपना घराने की गायकी में समाविष्ट किया। खाँ साहब की बंदिशें इन तत्वों को सहीं मिशाल है। वैसे तो राग ताल और शब्दों के अनेक विध रूप ही हमारा संगीत सजाते हैं। लेकिन वह रूप जब तक सुबद्ध या बंदिस्त नहीं होते तब तक वह किसी भी प्रकार का सौंदर्यानुभव देने में असमर्थ रहते हैं। आगरा घराने में राग, ताल और शब्दों का जिस अंदाज से इस्तेमाल हुआ वह अंदाज हा आगरा गायकी और भारतीय कंठ संगीत की विशेषता है। एक ही आगरा विशेषताओं से अलग-अलग रूप में पहचाने गये। उस्ताद विलायत हुसैन खाँ साहब आगरे वाले जो इस घराने के श्रेष्ठतम कलाकारों में से हैं, उनके लागुणों को अभिवादन रूप यह लेखांकन किया है। बंदिश तलक एकनिष्ठ अभ्यासक और श्रेष्ठतम अधिकारी खाँ साहेब विलायत हुसैन खाँ एक आदर्श बंदिशकार थे। इनकी हर एक बंदिश में अनेक सौंदर्य तत्वों का एक साथ दर्शन होता है।

सरलता- जो खाँ साहब के स्वभाव का ही विशेषता थी, उनका हर बंदिश में परावर्तित हुआ है। बंदिश की पेशगी के दौरान खाँ साहब रागरूप, शब्दोच्चारण, लयात्मकता, तालखड़ात्मकता, स्वर लगाव, बोल बॉट इत्यादि विविध पहलूओं को जिस सरलता से व्यक्त करते थे, वह सरलता ही बंदिश रूप में खाँ साहब के व्यक्तित्व का परिचय देता है। बंदिश यह उनकी वृत्ति बन गई है। कला के श्रेष्ठ रूप को जो कलाकार आसान से आसान बना सकता है उस कलाकार को विचारों की गहराया और प्रगल्भ बुद्धिमता का वरदान होता है। उच्चकोटि की सरलता ही खाँ

साहब की विशेषता थी।

अविनाशा नैसर्गिक लय तत्व का मूलाधार भी निसर्ग ही है। अतीत विलंबित और अतीव द्रुत लय यह बुद्धि का करामात है, लेकिन मध्यलय यह सुंदर नैसर्गिक और सुलभ भी है। इसीलिये मध्यलयीन आविकार नैसर्गिक और सौंदर्यपूर्ण लगता है। मध्यलय का प्रयोग मूलत: उपजत अंग स्वभाव का ही द्योतक है। इस स्थिति का परिचय इस तरह हम दे सकेंगे। अपने घराने के कायदों को सम्हालते हुए स्थायी और अंतरा मध्यलय में (पुराने जमाने में यह विलंबित लय कहलाती थी) गाने के बाद लयदार, स्वरलगाव, मींड, सूत, लहक, घसीर आदि प्रकारों से जब बढ़त शुरू होती है, तब राग स्वर प्रवाह को एक नैसर्गिक अवस्था प्राप्त होती है। इस अवस्था में रागाविष्कार एक छंदोबद्ध, स्वरमय और भावना प्रधान रूप लेता है। जिसे लय बढ़ाकर अधिक नैसर्गिक या आकर्षक किया जाता है। नयी-नयी तरकीबों से नये स्वरबंद, नवीन आकृतियाँ पैदा होती है। गाने वाले की और श्रोताओं की अवस्था जादू भरा सा हो जाता है। तत्पश्चात् लय जरा सी बढ़ाकर टीप का षड्ज कायम करके जो असर पैदा किया जाता है, उसकी तुलनी नहीं हो सकती। कलाकार और श्रोता घंटोतक इस अवस्था में रहने की ख्वाईश रखते हैं और एक असीम आनंद का अनुभव करते हैं। एक बेजान अवस्था में रहते हैं। बुजुर्गों से प्राप्त इस फायदेमंद बात का जिक्र खाँ साहब ने हमेशा किया है, जिससे मर्मज्ञ कलालार और श्रोता फायदा उठा सकते हैं।

स्वरोच्चारण- राग स्वरों का सहीं ढंग से किया हुआ उच्चारण यह तो खाँ साहब की अपनी विशेषता थी। रागबाव, रागत्व या राग्ममता का अनुभव लेना और देना यह उस्तादों का ही अधिकार है। खाँ साहब के कम से कम 40 उस्ताद थे। एक ही राग की तालीम अलग-अलग उस्तादों से पाकर ''दिक्खिया सिक्खिया और परक्खिया'' 'स उपदेश के अनुसार खाँ साहब एक ही राग अनेक बुजुर्ग कलाकारों से सुनते थे। बुजुर्गों ने की हुई उस राग की चर्चा का आधार लेकर अपने दिल में उस राग का रूप कायम करते थे, और उसकी जाँच, आजमाईश करने के बाद उस राग का आविष्कार स्वरूप या बंदिश रूप से करते थे। रागस्वरों की कोमल अतिकोमल तीव्र या तीव्रतर अवस्था, राग के पूवर्धि और उत्तरार्ध का संतुलन (जिसे हम सवाल जवाब भी कह सकते हैं) ग्रह, अंश न्यास आदि नियमों का यथायोग्य पालन इन बातों गौर करते हुए खाँ साहब क्हर एक राग के स्वरों के जो दर्जे दिखाते थे, वह Last word के रूप में स्वीकार किये जाते थे।

खाँ साहब को बहोत सारी भाषाएँ भी याद थी। उन सभी का लहेजा व आसानी से सम्हाल सकते थे। खाँ साहब ने अपनी बंदिशों में जिन भाषाओं का इस्तेमाल किया उनके शब्दों का स्व, दीर्घत्व, आघात प्रवाहित मृदु और ठिन

भाव उनकी Fixibility आदि का समुचित ज्ञान उन्हें था जिसके प्रयोग से अपने आविष्कार में खाँ साहब चैन, सकून पैदा कर सके। खाँ साहब की यह खासियत अनेक कलाकारों को अपनी तरफ आकर्षित करती थी। इसीलिये खाँ साहब Musicion's Musicion कहलाते थे।

लय, मात्रा, तालखंड और धंद बंदिश का लय तालकी मात्राओं तालखंड और विविध बंदिशों से शब्दाकृतियों से निर्माण होने वाले छंदों के साथ उनकी बेमालूम मिलावट यह तो खाँ साहब की और एक विशेषता थी। एक उदाहरण के साथ हम इसे समझने की कोशिश करेंगे। खाँ साहब की रची हुई खेसकल्याण की बंदिश इस प्रकार से खंडबद्ध है।

ग ग ग ग म ग - - रे सा - सा सा सा रे रे
जा वो जी तु म जा - - - वो - लँ ग र - वा

16 मात्राओं की इस बंदिश में 16 मात्रा और 4 खंडों का ही वातावरण निर्माण करने का हमारा प्रयास रहता है। लेकिन विलायत हुसैन खाँ साहब के आविष्कार में बंदिश का एक छंद जो कि 3-2-6-5 ऐसा होगा

ग ग ग ग म ग - - रे सा - सा सा सा रे रे
जा वो जी तु म जा - - - वो - लँ ग र - वा

निर्माण होता था। इस छंद पर आधारित और भी नये-नये छंदों का निर्माण बोल बाट में होता था और नये-नये बोल से वह आविष्कार समृद्ध होता था।

सोलो तबला वादन में जिस तरह से एक तरफ लहरे का गुंजन, ताल के सम खंडों को कायम करता है और साथ-साथ कायदों. रेष्टों के मूल रुप का एक छंद और उनके अनेकविध बर्तावों से निर्मित अलग-अलग छंदों का प्रभावशाली प्रदर्शन होता है, ठीक उसी तरह कण्ठ संगीत में उस्ताद विलायत हुसैन खाँ साहब का योगदान रहा है, जिससे उन्हें एकमेवा द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ है। षडज भरना या षडज कायम करना यह खाँ साहब की और एक दूसरी विशेषता है। वातावरण स्वरमय बनाये रखने के लिये बंदिश के खण्डों से शब्द निकालकर वहाँ षडज कायम करना यह इस संकल्पना का उद्देश्य है। तार षडज पर स्थिर होते हुये वातावरण में एक जोश पैदा करना यह बात बहुतांश सभी घरानों में संमत है, लेकिन मध्यषडज का लयात्मक छंदबद्ध रूप जो असर निर्माण करता है, उससे रागविस्तार में एकात्मकता का अनुभव भारी मात्रा में मिलता है। षडज स्वर की लंबाई तालखंडों की आवश्यकता के अनुसार कम ज्यादा करके बंदिश में विशिष्ट शब्दों के स्थानपर कायम करना यह अपने आप में एक अत्युच्च सांगीतिक सौंदर्यानुभव है इसमें कोई संदेह नहीं।

ए-2'कविता', फड़के रोड इंद्रप्रस्थ पार्क
मुलुंड पूर्व मुंबई 400081
दूरध्वनि 5649429 (P) 5646997

पं. श्रीकृष्ण रातंजनकर

(31.12.1900 - 14.2.1974)

डॉ. सुमति मुटाटकर

श्रीकृष्ण रातंजनकर के पिता नारायण राव,सितार वादक होने के साथ-साथ संस्कृत,मराठी भाषा के विद्वान थे। उन्होने अपने पुत्र को प्रथम कृष्ण भट्ट होन्नवार से संगीत शिक्षा दिलवाई। बाद में सौभाग्यवश उन्हें पं. विष्णु नारायण भातखण्डे से अनेक वर्ष शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला। भातखण्डे जी ने उन्हें बड़ौदा की महफिल में सर्वप्रथम मंच पर गवाया,जहाँ उन्हें प्रशंसा एवं छात्रवृत्ति प्राप्त हुई। वहीं पर बड़ौदा नरेश के निवेदन पर श्रीकृष्ण को उस्ताद फ़ैयाज खाँ का गंडा बंधवाया गया। तब से पं. रातंजनकर आगरा घराने के प्रतिनिधि कलाकार बने। 1917 से 1922 तक उन्होंने कठिन परिश्रम से विद्या अध्ययन किया एवं मंच गायन ग्रन्थ लेखन एवं बंदिशों का निर्माण किया। 1922 में रातंजनकर बड़ौदा छोड़कर फिर बम्बई आ गए। अब भातखण्डे जी ने उन्हे संगीत शिक्षा में आने वाली समस्याओं और उसके समाधान से पहचान करवाई ताकि संगीत शिक्षक के रूप में वे सफल हो सके। भातखण्डे जी के योग्यमार्गदर्शन और संचालन में हुए कई महत्वपूर्ण संगीत सम्मेलनों में उन्होने भाग लिया जिनमें देशभर से प्रसिद्ध संगीतज्ञ और संगीत शास्त्री आते थे जो संगीत के व्यावहारिक और सिद्धांत पक्ष की चर्चा करके राग की एकरूपता स्थापित करते थे। इस बीच 1926 में विल्सन कालेज से बम्बई विश्वविद्यालय की स्नातक की उपाधि भी इन्होंने प्राप्त कर ली। भातखण्डे जी ने मारिस कालेज ऑफ म्यूजिक लखनऊ की स्थापना की एवं उसमें दो वर्षों के अध्यापन के बाद श्रीकृष्ण को प्राचार्य पद सौंप दिया। रातंजनकर उस संस्था की आत्मा थे। सभी जगह से प्रतिभा सम्पन्न और उत्साही छात्र संगीत के महान साधक से मार्ग दर्शन के लिए यहाँ आने लगे। उनकी संगीत शिक्षा के महत्वपूर्ण पहलू थे , निर्दोष राग स्वरूप और बन्दिश की मनमोहक अदायगी , छोटे -छोटे स्वर समुदायों में राग का विश्लेषण न केवल राग को परिपूर्ण बनाता था और सृजानात्मकता से परिपूर्ण गायकी तो थी ही। वे लगभग चार दशक तक संगीत सम्मेलनों और सेमीनारों के आकर्षण रहे।

अब वे भारतीय संगीत के प्रमुख प्रतिष्ठित हस्तियों में गिने जाने लगे थे उनका सक्रिय सहयोग विश्वविद्यालय , लोक सेवा आयोग , आकाशवाणी और संगीत संस्थाओं को देशभर में मिल रहा था। अपने कर्तव्य और नैतिकता के प्रति सजग , वे संगीत के विकास के लिए सभी क्षैत्रों में अपना सहयोग देने के लिए तत्पर रहते।- इस सिलसिले में जो लम्बी यात्राएं होती थी उनको वे लिखा-पढ़ी के लिए उपयोगी मानकर उनका मजा लेते थे। वाग्येकार के रूप में उनका स्थान अप्रतिम था। ध्रुपद से लेकर ख्याल तराना , टप्पा आदि की उनकी योजना को पल्लवित करने में वह समर्थ हो सके। साथ ही विषय के शास्त्रीय पक्ष और ऐतिहासिक पक्ष में भी उनकी गहरी पैठ हो गई। रातंजनकर संगीत के व्यवहारिक पहलू संगीत प्रदर्शन को बहुत महत्व देते थे। संगीत प्रदर्शन की विशेष साप्ताहिक शिक्षा कालेज का नियमित कार्यक्रम था। इसमें छात्रों को उपस्थिति श्रोता, कालेज के शिक्षक और रातंजनकर जी के सामने कला के प्रदर्शन का मौका मिलता था।

प्रचलित रागों के अनछुए पहलुओं को उजागर करते हुए इन्होने नई बन्दिशें बनाई अनवट मिश्र राग,साजगिरी, हेम नाट, सावनी केदार जैसों में भी इनकी सुन्दर बंदिशें मिलती है। उन्होने रागों के सर्वमान्य नियमों को ध्यान में रखकर अपनी प्रतिभा और बौद्धिक सम्पन्नता का आभास देते हुए नये राग बनाए। दक्षिणात्य पद्वति के कुछ राग जैसे चारूकेशी और वसंतमुखारी आदि रागों को हिन्दुस्तानी संगीत में अपना कर उन्हे सर्वथा नया रूप ओर ताजगी प्रदान की। उनकी रचनाओं में संस्कृत के बहुत सुन्दर गीत हैं। तराने की कुछ रचनाओं में उन्होने संस्कृत के भाव प्रवण दोहे अंतरों में रचे हैं। ''ताल लक्षण:-गीत '' उनके द्वारा रची सर्वथा नवीन विधा थी। उन्होने तीन संगीत नाटकों की रचना की। इन सभी का मंचन हुआ। बाद में आकाशवाणी पर रिकार्ड होकर प्रसारित किये गये। उनकी बहुत सी रचनाएं लोकप्रिय हुई। उनके अनुसार विविध अंचलों की कुछ लोकधुनों का उदाहरण देते थे जो गौरी , सांरग, पहाड़ी, मांड आदि प्रंतिष्ठित रागों से मिलती थी। संगीत ग्रन्थों में पाई जाने वाली 18 जातियों का संबंध विविध क्षेत्रों पाई जाने वाली 18लोकधुनों से जोड़ते थे। इस सिलसिले में उन्होने राजस्थान के भरतपुर और हिमालय के मण्डी और सुकेत का दौरा किया। वहां की धुनों का विश्लेषण किया। उन्होने आकाशवाणी के ''म्यूजिक ऑफ इंडिया '', संगीत सम्मेलनों और नेशनल प्रोग्राम में भाग लिया। उन्होने ''आकाशवाणी संगीत शब्द कोश '' का निर्माण किया। रातंजनकर जी की नि:स्वार्थ संगीत सेवा हेतु उन्हें इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,खैरागढ़ और भातखण्डे संगीत विद्यापीठ ,लखनऊ ने उन्हे संगीताचार्य से विभूषित करके स्वयं को भी गौरवांवित

किया। 1957 में उन्हे पद्म भूषण से सम्मानित किया गया। मद्रास संगीत अकादमी ने विशिष्ट संगीतज्ञ और विद्वान की तरह सम्मानित किया, संगीत नाटक अकादमी ने अपने सर्वोच्च सम्मान रत्न-सदस्यता से उन्हे सम्मानित किया। खैरागढ़ में देश के प्रथम विश्वविद्यालय (इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय) के प्रथम उपकुलपति होकर संस्था को स्थायित्व देने में मदद की। जीवन के अंतिम काल में रातंजनकर बल्लभ संगीत विद्यालय के मानद अध्यक्ष पद के रूप में उस संस्था से संबद्ध रहे। ऐसा उन्हे स्वामी बल्लभदास के आग्रह पर करना पड़ा। जो एक वैष्णव सम्प्रदाय के प्रमुख थे और फैयाज खाँ के शिष्य भी थे। छोटे कद काठी और दुबली काया में समाया रातंजनकर का व्यक्तित्व प्रतिभा की दृष्टि से किसी भी उंचाई से परे था। परिश्रम और लाभ का अनुपात एक सा नहीं होता। इनका जीवन तो उद्देश्यों को समर्पित था। लाभ की सदा अवहेलना सी अविस्मरणीय योगदान , हमेशा प्रकाश स्तंभ की तरह मार्गदर्शन करेंगे। संगीत क्षेत्र में आचार्य रातंजनकर के विशाल , बहुमुखी कार्य को उनके अवदान को, उपलब्धियों को, एक आधार शिला व साथ-साथ एक धारा में समाहित करके संचालित करना परम आवश्यक था।बम्बई में स्थित उनके प्रमुख शिष्य के.जी.गिंडे, एस.सी.आर. भट्ट, व दिनकर ने निश्चय करके आचार्य एस.एन.रातंजनकर फाउंडेशन की विधिवत स्थापना सन् 1985 में की।

आचार्य रातंजनकर द्वारा निर्मित ग्रन्थ –

प्रकाशित - 1. तान संग्रह (45 प्रमुख रागों में) अभिनव गीत मंजरी (तीन भागों में) छः सौ से अधिक,विविध प्रकार की बंन्दिशों का संग्रह। फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित। संगीत शिक्षा - तीन भागों में। 4. अभिनव संगीत शिक्षा 5. गोवर्धन उद्धार गेय नाटिका (ब्रज भाषा में) 6. हिन्दुस्तानी संगीत की स्वर लिपि 7. पंडित भातखण्डे - अंग्रेजी में -नेशनल बुक ट्रस्ट प्रकाशन (हिन्दी अनुवाद - अमिताभ मिश्रा)पब्लिकेशन डिविजन भारत सरकार प्रकाशन 8. पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे - मराठी,महाराष्ट्र सरकार साहित्य संस्कृति मण्डल प्रकाशन 9. संगीत परिभाषा - मराठी 10. एस्थेटिक आस्पेक्टस ऑफ इंडियाज म्यूजिकल हेरिटेज् (अंग्रजी, हिन्दी, मराठी लेखों का संग्रह , फउंडेशन द्वारा प्रकाशन)

अप्रकाशित – 1. शिवमंगलम् - गेय नाटिका , संस्कृत भाषा में , महाकवि कालिदास के कुमार-सम्भवम् पर आधारित। प्रथम कालिदास समारोह में उज्जैन नगरी में मंचित।अनंतर आकाशवाणी द्वारा प्रसारित। प्राणाहुति - गेय नाटिका, हिन्दी, खड़ी बोली में।झांसी की राणी लक्ष्मीबाई के बलिदान पर आधारित।1957 में राष्ट्रीय स्तर पर आकाशवाणी द्वारा प्रसारित।चतुर्दंडि प्रकाशिका का हिन्दी अनुवाद। 4. स्वर मेलकलानिधि का हिन्दी अनुवाद। 5. लक्ष्यसंगीत कारिका - श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम् ग्रन्थ के ऊपर संस्कृत भाषा में कारिका रूप में विवरण। 6. कुछ लेख , निबंध इत्यादि।

On one occasion, at my residence in Delhi, there was an interesting and enlightening dialogue between Ustad Vilayat Hussain Khan and Acharya Ratanjankar (both of them my Gurus); the topic was "Gauri", Khan Saheb said, This variety of Bhairava that Gauri is identical with our Agra Gharana Kapar Gauri with a very small difference in respect of the use of **Ma** restricted to just one phrase.They then turned to the other variety-using only one (teevra) Ma . Ratanjankarji remarked isn't it amazing that with the note format of puriya dhanashri, our elders have shaped this Gauri in such a way that it has its own distinctive characters let us compare notes. 'He sang his own bandish. "Door Karo mushquilat mori". Then Khan Saheb sang his own bandish - "Surat mohani, dekhi pritamki.", Both compositions were in the traditional format. The stalwarts analysed and enjoyed.Anna Saheb said, 'Khan Saheb, you are a treasure house; there are other rare varieties of Gouri like Chaita Gauri. What are they like we do not have them in our repertory.' Khan Saheb happily demonstrated Chaita Gouri and continued, there is Ram-Gauri, a combination of Ramkali and Gauri ; he Sang, It was exquisite, unheard of. It was an experience of the light and delight of music. In a happy mood Khan Saheb said, 'Panditji, this is real' guna-charcha'. It is becoming rare these days. I am very happy today.This, indeed was a memorable event in my life, unthought of, unplanned. Bhatkhande was keen on putting Shrikrishna for some time under an eminent Ustad for further practical training and concert techniques. For this purpose who could be letter than Aftad-E-Mousiqui Ustad Faiyyaz Khan, the most renowned musician in the service of Maharaja Sayaji Rao Gayakwad of Baroda ? Bhatkhande had the highest regard for Ustad Faiyaz Khan. His request to put Shrikrishna under the Ustad for further training as a formally accepted disciple (ganda bandh shagird) was agreed upon. As a formally accepted disciple of the great Ustad, Shrikrishna received training for full five years. In the professional musicians parlance, this earned for Shrikrishna an entry into the Agra gharana coterie. This was an extremely rewarding opportunity for Shrikrishna. The ustad was happy with this gifted pupil whose grasp and execution were excellent. Shrikrishna benefited immensely from the opportunities he was given by the Ustad to sing with him as a supporting voice in his private and public performances as also at the Durbar mehfils. In fact, these formed a prominent feature of his training, perhaps even more than any regular lessons which were comparatively not very many. The Ustad always remained proud of this pupil whom he affectionately called Shrikrishan. In later years when

Ratanjankar was principal, Morris Music College Lucknow, He used to make it a point to meet this great guru whenever he was in town and to pay his respects in all humility. He also used to invite the Aftab-e-Mousiqui for an 'at home' arranged lavishly in his honour. I have had the good fortune to attend such at home parties. I (the author of these lines) remember how the Ustad looked upon us-Shrikrishan's pupil, with affection and encouragement.Ones the Ustad said- "ShriKrishan, you keep on inviting me for dinner and for at nome, you never invite me to sing". Ratanjankar said in all humility ", Khan Saheb, how can we afford to invite you for singing ? Where are the means?'Khan Saheb laughed and said "Oh, is that so? Come out, invite me; then see whether I accept or not".Overjoyed, Ratanjankar fell at his feet and requested him to give a performance at the college. The maestro gladly accepted the invitation. It was, indeed, a mangnanimous and at the same time an affectionate gesture. The date and time was fixed according to his convenience. ' Veena Hall' of the Marris Music College was overflowing with eager audiences, students, teachers, music lovers and others.Starting with his favourite raga Barwa, Faiyaz Khan Saheb filled the hall with his magnificent, luminous voice. It was a most inspired, most enchanting a memorable performance. This was in the late forties.On the sad demise of the Ustad November 1950, Ratanjankar composed a moving tribute in eulogy and homage to the musical giant, his venerable guru. The composition is in the raga Shyam Kallyan.After five years of enlightening tutelege under Ustad Faiyaz Khan, in the year 1922, Ratanjankar Came back to Bombay and continued with his academic studies. In the year 1926, he completed his graduation from Wilson College, Bombay University.

-Smt. Mutatker

आगरा घराना और पं.वि.ना.भातखण्डे

डॉ. अमरेश चंद्र चौबे
लखनऊ

ख्याल गायन शैली के प्रचलन के साथ उसके चार प्रमुख घराने सर्वाधिक मान्य हुए। 1.ग्वालियर 2.आगरा 3.जयपुर और 4.किराना ख्याल शैली स्थापित होने के पूर्व तक उत्तर भारत में ध्रुवपद शैली का बोलबाला था और इस विधा की सभी शैलीयां वाणीकहलाती थी। परन्तु चूंकी अधिकांश ख्याल गायक मुसलमान थे अत: उन्होने देशी बोलचाल की भाषा के शब्दो का प्रयोग करना प्रारंभ किया और 'वाणी' के स्थान पर स्थान पर 'घराना' कहा जाने लगा।

आगरा घराना मूलत: ध्रुवपद की नौहार वाणी से संबंधित था और इसकी परंपरा अति प्राचीन थी। इस घराने के एक प्रसिद्ध कलाकार उस्ताद तसद्दूक हुसैनने अपनी उर्दू की एक पुस्तक में लिखा था कि उनका वंश रामदास जी उर्फ 'घोड़'जो राजपुत चौहान थे और जिनकी नौहारी वाणी थी से प्रारंभ होता है। इनकी चौथी पीढ़ी में बादशाह अकबर के समय सुजान दास हुए जिनका जिक्र अबुल .फजल ने आइने अकबरी में सुभान खाँ की भांति किया हैं। पं.भातखण्डे जी ने भी संगीतशास्त्र के चौथे भाग में मुहम्मद करम इमाम की पुस्तक 'मादनुल मौसी की'के आधार पर 'सुजान खाँ'का नाम दिया हैं। सुजान खाँ के चार पुत्र हुए। 1.अलक दास 2. मलक दास 3. खलक दास 4. लवंश दास.मलक दास के दो पुत्र 'सरसरंग' और 'श्याम रंग' ध्रुवपद गायक थें। ये 1780 ई.के लगभग आगरा में थें और ग्वालियर नत्थन पिरबस जो ग्वालियर के ख्याल घराने के संस्थापक माने जाते हैं,ध्रुवपद घमार सिखने इनके पास गये थे।श्याम रंग के चार पुत्र थे:1.जघूं खाँ 2.सूसू खाँ 3.गुलाब खाँ 4. व खुदाबख्श। इन खुदाबख्शकी आवाज दोषपूर्ण थी। अत: इस दोष को दूर करने और ख्याल सीखने वे ग्वालियर पहुंचे और नत्थन पिरबख्श के शिष्य बन गये।ग्वालियर के महाराज दौलत राव सिंधिया के समय खुदाबख्श,नत्थन पिरबख्श के शिष्य बन गये और उनकी आवाज दोषरहित हो गई। इनके आगरा वापस आने पर आगरा में ख्याल घराने की नींव पड गई। इनकी आवाज प्रारंभ में दोषपूर्ण होने के कारण इन्हे घग्घे खुदाबख्श कहा जाने लगा। इस घराने का वंशवृक्ष और शिष्य परंपरा बहुत बडी हैं खुदाबख्श के कुटुम्ब में गुलाम अब्बास खाँ (सन 1825 से 1935 ई. तक लगभग) और कल्लन खाँ (सन 1835 से 1925 ई.तक लगभग) हुए। इनकी दो बेटियां अब्बासी बाई और कादरी बाई हुई।उस्ताद फैयाज खाँ जिन्होने इस

घराने में सबसे अधिक अर्जित की इन्हीं अब्बासी बाई के बेटे थें और इन्होने अपने नाना गुलाम अब्बास खाँ और कल्लन खाँ सभी शिक्षा ग्रहण की यद्यपि ख्याल के अन्य तीन प्रमुख घरानों -ग्वालियर, जयपुर और किराना संबंध भी ध्रुवपद गायकों या बीन वादकों से जुडा हुआ हैं परन्तु आगरा घराने की ख्याल गायकी में जितना अधिक ध्रुवपद गायकी का प्रभाव दिखाई देता हैं उतना अन्य घराने की गायकी पर नहीं। उस्ताद फयाज खाँ पितृवंश से रंगीले खानदान के थें। इस घराने के प्रवर्तक मिया रमजान खाँ रंगीले (सिकंदराबाद) जोधपुर के राजा मानसिंह के समय खंडार बानी के ध्रुवपद गायक इमाम बख्श के शिष्य थे। इस प्रकार फैयाज खाँ के पितृवंश मे भी ध्रुपद गायन ही प्रधान था। आगरा घराने की ख्याल गायकी की प्रमुख विशेषताएं उस्ताद फैयाज खाँ की गायकी के आधार पर ही निर्धारित की जाती हैं । ध्रुपद धमार और ख्याल गायकी की विशेषताओं को समन्वय ही इनकी विशेषता थी। आवाज का खुलापन 'नोंमतोंम'के आलापों का का पूरा प्रयोग बोल आलाप और बोलताने विलबिंत और मध्यलय बंदिशों में ठेके की लय साधारण और ध्रुवपद की लय के समान निलबिंत ख्याल की लय,बोलबांट में वजन, लयकारी, तिहाइया, अतीत अनागत के सम,अवरोह प्रधान छोटी आकार की तानें, मुखडा बंदी, राग की मुर्ति खडी करने की कोशिश इस गायकी की प्रमुख विशेषताएं कही जा सकती हैं। **1.** आगरा घराने की ख्याल शैली का विकास क्रमशः सात प्रमुख उस्तादों और उनके शिष्यो के माध्यम से हुआ। खुदाबख्श जी ग्वालियर से ख्याल सीखकर आये और उन्होने जघूं खाँ के पुत्र शेर खाँ को शिक्षा दी। **2.** शेर खाँ नें खुदाबख्श के पुत्र गुलाम अब्बास खाँ को तैयार किया । **3.** गुलाम अब्बास खाँ ने सगे भाई कल्लन खाँ बेटी के पुत्र फैयाज खाँ और चाचा जघूं खाँ के पौत्र और शेर खाँ के पुत्र नत्थन खाँ को। **4.** कल्लन खाँ ने अपने पुत्र तसद्दुक हुसैन फैयाज खाँ नत्थन खाँ के पुत्र विलायत हुसैन और नन्हें खाँ को नत्थन खाँ की पुत्री के पुत्र खादिम हुसैन और अनवर खाँ तथा फिर दौसी बाई और बिब्बो बाई जयपुर को भी सिखाया। **5.**नत्थन खाँ ने पुत्र मुहम्मद खाँ और अब्दुल्ला खाँ को तथा भास्कर बुआ बखले और बाबली बाई (चन्द्रप्रभा)को सिखाया। **6.** फैयाज खाँ के शिष्य अताहुसैन,असद अली,बंदे हुसैन,लताफत हुसैन,शराफत हुसैन,गुलाम रसूल,अब्दूल कादर (जयपुर) मौजूद खाँ (पटना) हामिद हुसैन,गुलाम हुसैन (कत्थक) खुशी खाँ कलकत्ता,श्रीकृष्ण नारायण रांतजनकर,भीष्मदेव चटर्जी,दिलीप चन्द्रवेदी, सोहनसिंह, सुशील कुमार चौबे, के.एल.सेहगल, काशीनाथ, दत्तात्रय केन्डे (हैदराबाद), पाठक श्रीपादशास्त्री (धूलेगांव), लच्छूमहाराज, श्रीमति डाक्टर चन्द्रचूड, मलका बाई आगरेवाली, नरेन्द्रराय शुक्ल, मुहम्मद बसीर खाँ। **7.** उस्ताद विलायत हुसैन

खाँ के शिष्यों की इससे भी लम्बी लगभग 35-40 व्यक्तियों की सूची हैं।

इस घराने में जो भी उस्ताद हुए जिन्होंने जिन्होने शिक्षण कार्य भी किया। इसलिए अन्य घराने की अपेक्षा इसका बहुत प्रचार हुआ । यह लगभग सारे उत्तर भारत में व्याप्त रहा। पं. भातखण्डे ने इस बात की चारों दिशाओं का भ्रमण किया था और सभी मूर्धन्य व्यक्तियों से भेंट की थी। उन्हे आगरे घराने की प्राचीनता,उच्चकोटि के उस्तादों की श्रृंखला, ध्रुवपाद धमार शैली के महत्व और उनके समकालीन उस्ताद फैयाज खाँ की किर्ति का भी पूरा ज्ञान था। जब पं. भातखण्डे बडौदा महाराज के निमंत्रण पर बडौदा पहुंचे इनकी भेंट उस्ताद फैयाज खाँ से हुई जो उन दिनों वहां के महाराज के द्वारा चलाये जा रहे state music school में शिक्षण दिया करते थे। चूकि पं. भातखण्डे यह चाहते है कि उनके प्रिय शिष्य 'बाबू 'अर्थात श्रीकृष्ण नारायण रांतजनकर को उच्चकोटि की घरानेदार गायकी भी सीखने को मिले अत: उन्होंने बडौदा महाराज से 40 रूपया वजीफा दिलवाकर रांतजनकर जी को उनके पास रखा। इस प्रकार उस्ताद फैयाज खाँ को यहां पांच वर्ष तक सीखने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ ।यद्यपि रांतजनकर जी की प्रारंभिक शिक्षा पटियाला घराना के उस्ताद काले खाँ और उसके बाद ग्वालियर घराने के प्रसिद्ध अनंत मनोहर जोशी के पास हो युकि थी परन्तु उनकी गायकी का निर्माण मुख्यरूप से आगरा घराने की विशेषताओं को लिये हुए था ।आगरा घराने में ज्यादातर उस्ताद ऐसे हुए जिनकी आवाज नीचे ढाले स्वर की थी । परन्तु रांतजनकर जी काली दो या सफेद दो स्वर के नीचे कभी नहीं गाये फिर भी उनमें आगरा गायकी की सभी विशेषताएं मौजूद थी।

पं. भातखण्डे ने स्वयं जयपुर घराने के मुहम्मद खाँ के बेटे आशिक अली से बंबई में गायन सीखा था उसके उपरांत वे रामपुर में सेनिया परिवार के वजीर खाँ और छम्मन साहब के भी शिष्य बने। उन्होने अपने संगीतशास्त्र के चौथे भाग में उस समय जो प्राचीन घराने के गायक और वादकों के चले आ रहे थे उनका भी उल्लेख किया है परन्तु उनके समय में प्रसिद्ध ध्रुवपद और ख्याल के घरानों का इनके उस्तादों का या उनसे प्राप्त बंदिशो का जिनका प्रकाशन उन्होंने क्रमिक पुस्तक मालिका के छ: भागों में किया कोई उल्लेख उन्होने अपने संपूर्ण साहित्य में कहीं नहीं किया।

पं. भातखंडे ने घरानो की संकीर्णताओं का वहां सीखने की कठिनायों का और एकाधिकार की मनोवृत्ति का भी अनुभव किया था। वे चाहते थे कि हमारी यह सांगीतिक धरोहर जनसामान्य को उपलब्ध हो। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें। अत: यह आवश्यक था कि

घरानों की संकीर्ण परिधि से संगीत विद्या से निकाला जाय और संगीत विद्यालयों की स्थापना कर तथा विद्या को प्रकाशित कर 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय'उपलब्ध कराया जाय। हालांकि पं. भातखण्डेने अपने संपूर्ण साहित्य में 'घराना' वाद या गुरू शिष्य परंपरा से शिक्षा का कही पर भी विरोध नहीं किया है।जैसा मैं उपर बता चुका हूं कि सभी प्राचीन परंपराओं घरानों के प्रति बडा आदर था परन्तु वे यह भी चाहते थे कि ये विद्या अब थोड़े से लोगों के हाथ में न रहकर सर्वसाधारण की संपत्ति बने और इस कारण आगरा घराने या किसी अन्य घरानें का कोई उल्लेख उन्होने नहीं किया। यदि सूक्ष्मता से विचार किया जाय तो यह समझ में आवेगा कि प्रयोगात्मक शिक्षण में इन्होने अपनाया इन्हीं सब बातों को जो आगरा घरानें की विशेषता थी अर्थात वे मानते थे कि आवाज ऐसी बनाई जाय कि उसका लगाव खुला, स्थिर और गोलाई लिये हुए हो वे आलाप पक्ष को प्रधान मानते थे जैसा कि आगरा घरानें में भी है। अत: इनके शिष्यों ने नोमतोंम का आलाप किसी भी ध्रुवपद की गायक की तरह ही किया और विलंबित ख्याल के अंतर्गत बोल आलाप को महत्व दिया। बोलबांट और लायबांट भी ध्रुवपद धमार की तरह की गई। धमार की उपजों की तरह बोलतानें कही जाती थी और तिहाईयों के साथ समापन किया जाता था विलंबित ख्याल की लय और ध्रुवपद की लय लगभग रखी जाती थी। विलंबिंत ख्यालों में आकार की ताने अवरोहत्मक और छोटी जैसी धमार कीउपज हुआ करती हैं वैसी ही होती थी । मध्यलय के ख्यालों में भी इतने ही शब्द हुआ करते है कि जिनसे बोल आलाप और बोलतानों का विस्तार किया जा सके। प्राय: मुखड़ें इस प्रकार के रखे जाते हैं कि जिनसे तिहाईयां बन सके और तानों के अंत में कभी दो मुखड़े की तिहाईयां लेकर सम पर जोरदार ढंग से आया जा सके।

इस प्रकार पं. भातखण्डे और उनके शिष्य संप्रदाय ने आगरा घराने की विशेषताओं और गायकी को ही सुरक्षित रखने का प्रयत्न किया हैं। कुछ आलोचकों ने किसी उस्ताद विशेष की किसी ऐबदारी को ही उस घराने की प्रमुख विशेषता मानकर निंदा करने की कोशिश की हैं जिन्होने इनकों प्रत्यक्ष सुना हैं उन्होने अभिभूत होकर 'आफताब-ए-मौसीकी' की पदवी भी प्रदान की है। धन्यवाद !

डॉ.ए.सी.चौबे
लखनऊ

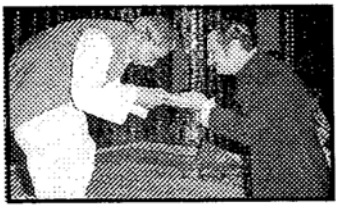

उ. खादिम हुसैन खाँ
एवं
श्री विजय कीचलू

"बड़ौदा में आगरा घराने का प्रचार,वर्तमान स्थिति"

प्रो. वसंत रानाडे

जानकार सूत्रों के अनुसार आगरा घराना 13 वी शताब्दी में ही अस्तित्व में आया, उसका स्वरूप,शैली कैसी थी यह आज कोई नहीं जानता वर्तमान में आगरा घराने के जिस गायन शैली का चर्चा होती है उसका स्रोत आगरेवाले उस्ताद घग्घे खुदाबक्ष माने जाते हैं। ग्वालियर में उ. हस्सूखाँ व उ.हद्दूखाँ के दादा उ. नत्थनखाँ पीरबक्ष लखनऊ से ग्वालियर नरेश के आश्रय में आये और ग्वालियर घराने की सरिता बहने लगी, उ. घग्घे खुदाबक्ष ग्वालियर में उ. नत्थन खाँ के शरण आये और ग्वालियर घराने की शैली को आत्मसात किया। बाद में आगरा जाकर, स्वयं के आवाज के अनुरूप जिस गायन शैली का सर्जन,प्रचार.प्रसार किया वहीं आगरा घराना आज माना जाता है। इस घराने के उस्ताद गायक दिल्ली लखनऊ मैसूर, बंबई, कलकत्ता आदि जगह रहकर इस शैली का प्रचार करते रहे, लगभग 125-150 वर्ष पूर्व आगरा घराने की एक खास बैठक बड़ौदा में स्थापित हुई।

तत्कालीन बड़ौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड़ के आश्रय में आगरा घराने के उस्ताद बड़ौदा में रहकर अपनी गायन शैली का प्रचार करते रहे। उ. गुलाम अब्बास खाँ, फैज महंमद खाँ, नत्थनखाँ व उनके शिष्य पं. भास्कर बुवा बखले तथा आगरा घराने को चार-चाँद लगाकर घराने का नाम रौशन उज्जवल करने वाले सर्वप्रिय उस्ताद फैयाज़ खाँ आदि का बड़ौदा से नियमित व घनिष्ठ संबंध रहा। उ. फैय्याज खां ने तो अपनी अंतिम साँस बड़ौदा में ही ली। उनकी मज़ार (समाधि) आज भी यहाँ दृश्य है। उ. फैय्याज खाँ के पहले और बाद में स्वयं उनके पास गायन सीखने बड़ौदा नगर के व बाहर से लोग आते रहे, पं. भास्कर बुवा बखले का नाम ऊपर आ चुका है। उ. फैयाज खाँ के शिष्यों में पं. श्रीकृष्ण रातंजनकर, पं. दिलीपचन्द्र बेदी, श्रीमती दीपाली नाग, ध्रुवतारा जोशी आदि नाम उल्लेखनीय हैं।

उ. फैय्याज़ खाँ के समयकाल में ही बड़ौदा नरेश ने एक 'संगीत शाला' की स्थापना की। बाद में यह संस्था विद्यालय, महाविद्यालय का सफर तय करते हुए आज सयाजीराव विश्वविद्यालय बड़ौदा के संगीत संकाय का रूप धारण कर चुकी है। इस संस्था में उ. फैय्याज खाँ, उनके शिष्य अताहुसैन खाँ भी संगीत शिक्षा देते थे। भारत में सबसे पुरानी संगीत शिक्षण संस्था के नाम से इसे जाना

जाता है। वर्तमान परिस्थितियों का असर इस संस्था पर भी हुआ और संभवत: इस संस्था का स्तर आज सबसे कनिष्ठ कहा जा सकता है।

उ. फैय्याज खाँ व अताहुसैन खाँ की तालीम में कुछ अच्छे शिष्य तैयार हुए उनमें पं. मधुसूदन जेशी, पं. मधुकरराव पेंडसे, पं. रघुनाथ पोद्दार आदि उल्लेखनीय है। मधुकर राव पेंडसे का अकाल निधन हुआ परंतु आज भी उनका नाम गर्व से लिया जाता है। पं. जोशीजी भी उच्च कोटि के गायक थे। अपनी गायकी व स्वभाव से उन्होनें बड़ौदावासियों का खूब प्रेम, श्रद्धा आदर पाया। पं. जोशीजी के शिष्य आज यहाँ वहाँ बिखरे हुए हैं। आगरा घराने के नाम मात्र का संबंध उनके साथ बना है। भिंडीबाजार नामक एक उपघराने का आक्रमण बड़ौदा पर हुआ। यह अस्थायी सिद्ध हुआ और आज यहाँ आगरा व भिंडीबाजार घराने के केवल नाम बचे हैं। पं. जोशीजी का निधन 3 वर्ष पूर्व हुआ। उसके बाद आगरा घराने के गायक कार्यक्रम हेतु बाहर से बड़ौदा आते हैं। परंतु बड़ौदा में आगरा घराने का कोई साधक पैदा नहीं हो रहा है न अब ऐसी कोई आशा है भिंडीबाजार का वही हाल है। गायन, वादन दोनों क्षेत्र में आज बड़ौदा का स्थान नगण्य है। बड़ौदा का राजघराना आज भी पूर्ण सक्षम प्रभावशाली व श्रेष्ठ सामाजिक प्रतिष्ठा होते हुए भी बड़ौदा में शास्त्रीय सांगीतिक स्थिति के प्रति नितांत उदासीन है। होनहार व सुयोग्य युवक-युवतियां ग़ज़ल, गरबा. भजन आदि कम कष्ट और बहुत पैसा कमा देने वाला गायन गाते हैं। आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियाँ तो सभी तरफ बदली है। फिर भी मुंबई, कलकत्ता जैसे शहरों में आज भी घरानेदार शास्त्रीय संगीत(गायन-वादन) की साधना में प्रतिबद्धतापूर्ण लीन युवक और वयस्क साधक देखने मिलते हैं। ऐसे साधक पुणे, नागपुर, भोपाल जैसे शहरों में भी हैं परंतु बड़ौदा अब शून्य है। बड़ौदा ही क्यों, समस्त गुजरात में आज राष्ट्रीय स्तर का एक भी कलाकार नहीं है। गुजराती समाज की व्यावसायिक वृत्ति भी इसका एक कारण है। गुजरात संगीत नाटक अकादमी पं. ओंकारनाथ ठाकुर के नाम पर प्रतिवर्ष संगीत प्रतियोगिता, संगीत समारोह का आयोजन करती है। उ. फैय्याज़ खाँ का जीवन, योगदान व अंत बड़ौदा में होने के बावजूद उनके प्रति अकादमी पूर्ण उदासीन है।

3-4 वर्ष पूर्व बड़ौदा महानगर पालिका के एक जागरूक नगराध्यक्ष महोदय ने, उ. फैय्याज़ खाँ की बरसी पर झाड़झंकार और गंदगी से दबी हुई उनकी मज़ार का जीर्णोद्धार कराया, उनको श्रद्धांजली दी गयी और उनकी स्मृति में एक संगीत जलसे का आयोजन किया गया, यह सिलसिला 4 साल में ही ठंडा पड़ते दिखायी दिया। नगराध्यक्ष आखिर राजनैतिक पार्टी का ही व्यक्ति, भविष्य में कोई नगराध्यक्ष

किसी बिल्डर या उद्योगपति से हाथ मिलाकर मज़ार की जमीन का वारान्यारा करा दे और उस जमीन पर कोई कारखाना या बहुमंजिली इमारत देखने में आये तो कोई आश्चर्य नहीं। बड़ौदा शहर के भीड़भाड़ वाले पुराने क्षेत्र में एक संकरी व गिचपिच गली को ''फैय्याज़ खाँ रोड'' यह नाम दिया है। उसी गली में खाँ साहब का घर था। उस गली में स्थित किसी के घर का या दुकान का पता लिखते समय शायद ''फैयाज खाँ रोड'' का प्रयोग होता हो। बड़ौदा में आगरा घराने का संक्षिप्त विवरण ऐसा है। आगरा घराने के प्रति अपना प्रेम, श्रद्धा व्यक्त करने के लिये ''आफ़ताब-ए-मौसिकी'' को समर्पित एक स्वयं का सर्जन निम्नानुसार है। ध्रुपद रूप की बंदिश की पंक्तियाँ है :-

सिरीमान सयाजीराव, बिराजत दरबार, सकल गुनी गुनज्ञानी, संगत रसिक जन सुजन॥
फैज़ महंमद, निसार, मौलाबख्श अतिचतुर, कान ध्यान देत सुनत, 'आफ़ताब' गान करत॥

राग दरबारी कानडा व चौताल में निबद्ध इस बंदिश की स्वरालिपि देकर यह वक्तव्य समाप्त करता हूँ -

राग-दरबारी कानडा, स्थायी ताल-चौताल

रे	रे	रे	-	सा	सानि	रेसा	-	रे	ध़	नि़	प़
सी	री	मा	ऽ	न	स	या	ऽ	जी	रा	ऽ	वं
म़	प़	-	नि़ध़	नि़ध़	नि़	सा	सा	-	नि़	सा	सा
बि	रा	ऽ	ज	ऽ	त	द	र	ऽ	बा	ऽ	र
नि़	सा	रे	रे	मग़	-	म	म	प	-	प	-
सं	क	ल	गु	नी	ऽ	गु	न	ज्ञा	ऽ	नी	ऽ
नि़ध़	नि़	प	प	प	ग़	ग़	म	रे	सारे	सा	सा
सं	ऽ	ग	त	र	सि	क	ज	न	सु	जा	न
x		0		2		0		3		4	
						अंतरा					
म	-	प	प	नि़ध़	नि़ध़	नि़	प	सांनि़	सांनि़	सां	सां
फै	ऽ	ज	म	हं	ऽ	म्म	द	नि	सा	ऽ	र
सां नि़	-	सां	-	रें	रें	सां	सां	ध़	नि़	प	प
मौ	ऽ	ला	ऽ	ब	ख	श	अ	ति	च	तु	र
म	-	म	प	-	प	नि़ध़	-	ध़	नि़	प	प
का	ऽ	न	ध्या	ऽ	न	दे	ऽ	त	सु	न	त
पसां	-	सां	नि़म	प	नि़	ग़	म	रे	रे	सा	सा
आ	ऽ	फ़	ता	ऽ	ब	गा	ऽ	न	क	र	त
x		0		2		0		3		4	

प्रो. वसन्त रानडे

उस्ताद खादिम हुसैन खाँ 'सजन पिया'

(आगरा घराने के स्तंभ गायक एवं वाग्गेयकार)

डॉ. हिमांशु विश्वरूप,खैरागढ़

उ. खादिम हुसैन खाँ साहब का नाम आगरा घराने के उस्तादों में सम्मानपूर्वक लिया जाता हैं। मेरे गुरूजी पं.केशवराव सुरंगे जी (ग्वालियर) प्राय: आगरा घराने के उस्ताद फ़ैयाज खाँ,विलायत हुसैन खाँ, एवं उस्ताद खादिम हुसैन खाँ, आदि के बारे में कुछ बाते चर्चा के दौरान बताते थे। क्योकि आगरा घराने के पं. रातंजनकर जी से भी कुछ वर्षो तक सुरंगे गुरूजी ने लखनऊ में शिक्षा प्राप्त की थी। इस कारण आगरा घराने की गायकी से वे प्रभावित रहे। ग्वालियर में आयोजित होने वाले तानसेन संगीत महासमारोह में ई . 1984 में उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहब को **तानसेन सम्मान** अलंकृत करने की सुखद वार्ता जब मैंने सुनी तब उस समारोह के उद्घाटन सत्र में मैं उनके दर्शनार्थ उपस्थित रहा। परन्तु अस्वस्थ होने के कारण खाँ साहब मुंबई से नहीं आ सके और मैं उनसे मिलने से वंचित रहा। सन 1987 में मुंबई में उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहब के पट्ट् शिष्य पं. बबन राव हलदनकर जी से पहली बार मैं मिला। तब खाँ साहब के बारे में उनसे मुझे विस्तृत जानकारी मिली। मुंबई में ग्वालिया टैंक पर उनके निवास स्थान पर मैं उनसे मिलने गया था किन्तु भेंट न हो सकी। खाँ साहब के शिष्य वर्ग द्वारा उनके नाम पर बनाई गई संस्था 'सजन मिलाप' मुंबई के कार्यक्रम में उपस्थित रहने का मुझे अवसर मिला। उनके शिष्यों का उनके प्रति आदरभाव देखकर मैं बहुत प्रभावित हुआ। सजन मिलाप संस्था का प्रारंभ पं. बबनराव हलदनकर जी एवं श्रीमति ऊषा हलदनकर द्वारा किया गया एवं प्रारंभिक कार्यक्रम भी उनके निवास स्थान अर्थात कला महर्षी, हलदनकर ब्रिज, राघववाडी, आपेरा हाऊस में होते रहे। पं. बबनराव के पुत्र श्री गौतम ,श्रीमति आसावरी व भाई मधु हलदनकर उन्हें मदद करते थेबाद में श्रीमति नीलिमा किलाचन्द, श्रीमति ललित राव,सोली बाटलीवाला, इत्यादि शिष्यों ने भुलाभाई देसाई हाल में कार्यक्रम करने आरंभ किये।

मुझे यह जानकर भी सुखद आश्चर्य हुआ था कि उस्ताद खादिम हुसैन खाँ को 1981 में उनकी 75 वी वर्षगांठ के अवसर पर सजन मिलाप संस्था ने एक भव्य संगीत समारोह आयोजित कर सम्मानित किया। इसमे भारतरत्न पं. रविशंकर ने स्वेच्छा से आकर खाँ साहब के सम्मान में कार्यक्रम दिया क्योंकि वे खाँ साहब को बहुत मानते है।

उस्ताद खादिम हुसैन खाँ 'सजन पिया'

(आगरा घराने के स्तंभ गायक एवं वाग्गेयकार)

डॉ. हिमांशु विश्वरूप,खैरागढ़

उ. खादिम हुसैन खाँ साहब का नाम आगरा घराने के उस्तादों में सम्मानपूर्वक लिया जाता हैं। मेरे गुरूजी पं.केशवराव सुरंगे जी (ग्वालियर) प्राय: आगरा घराने के उस्ताद फ़ैयाज खाँ,विलायत हुसैन खाँ, एवं उस्ताद खादिम हुसैन खाँ, आदि के बारे में कुछ बाते चर्चा के दौरान बताते थे। क्योकि आगरा घराने के पं. रातंजनकर जी से भी कुछ वर्षो तक सुरंगे गुरूजी ने लखनऊ में शिक्षा प्राप्त की थी। इस कारण आगरा घराने की गायकी से वे प्रभावित रहे। ग्वालियर में आयोजित होने वाले तानसेन संगीत महासमारोह में ई . 1984 में उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहब को **तानसेन सम्मान** अलंकृत करने की सुखद वार्ता जब मैंने सुनी तब उस समारोह के उद्घाटन सत्र में मैं उनके दर्शनार्थ उपस्थित रहा। परन्तु अस्वस्थ होने के कारण खाँ साहब मुंबई से नहीं आ सके और मैं उनसे मिलने से वंचित रहा। सन 1987 में मुंबई में उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहब के पट्ट् शिष्य पं. बबन राव हलदनकर जी से पहली बार मैं मिला। तब खाँ साहब के बारे में उनसे मुझे विस्तृत जानकारी मिली। मुंबई में ग्वालिया टैंक पर उनके निवास स्थान पर मैं उनसे मिलने गया था किन्तु भेंट न हो सकी। खाँ साहब के शिष्य वर्ग द्वारा उनके नाम पर बनाई गई संस्था 'सजन मिलाप' मुंबई के कार्यक्रम में उपस्थित रहने का मुझे अवसर मिला। उनके शिष्यों का उनके प्रति आदरभाव देखकर मैं बहुत प्रभावित हुआ। सजन मिलाप संस्था का प्रारंभ पं. बबनराव हलदनकर जी एवं श्रीमति ऊषा हलदनकर द्वारा किया गया एवं प्रारंभिक कार्यक्रम भी उनके निवास स्थान अर्थात कला महर्षी, हलदनकर ब्रिज, राघववाडी, आपेरा हाऊस में होते रहे। पं. बबनराव के पुत्र श्री गौतम ,श्रीमति आसावरी व भाई मधु हलदनकर उन्हें मदद करते थेबाद में श्रीमति नीलिमा किलाचन्द, श्रीमति ललित राव,सोली बाटलीवाला, इत्यादि शिष्यों ने भुलाभाई देसाई हाल में कार्यक्रम करने आरंभ किये।

मुझे यह जानकर भी सुखद आश्चर्य हुआ था कि उस्ताद खादिम हुसैन खाँ को 1981 में उनकी 75 वी वर्षगांठ के अवसर पर सजन मिलाप संस्था ने एक भव्य संगीत समारोह आयोजित कर सम्मानित किया। इसमे भारतरत्न पं. रविशंकर ने स्वेच्छा से आकर खाँ साहब के सम्मान में कार्यक्रम दिया क्योंकि वे खाँ साहब को बहुत मानते है।

उस्ताद खादिम हुसैन खाँ आगरा घराने के श्रेष्ठ कलाकार कोठीवाला गायक, श्रेष्ठ वाग्गेयकार, श्रेष्ठ गुरू एवं सज्जन व्यक्ति थे ।अत: आगरा घराने पर आयोजित सेमीनार में एवं ग्रंथ में उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का स्मरण अपरिहार्य प्रतीत होता हैं। इस हेतु मैंने गुरूवर्य पं. हलदनकर जी से चर्चा द्वारा उनके ग्रंथ 'मिलनोत्सुक दो तानपुरे' एवं श्री जयवंतराव लिखित पुस्तक 'सजन पिया' के आधार पर संक्षेप में जिज्ञासुओं के लिये जानकारी प्रस्तुत की है।

1. जन्म एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि– उस्ताद खादिम हुसैन खाँ साहब का जन्म सन् 1905 में अतरौली नामक स्थान पर हुआ। अतरौली उत्तरप्रदेश के अलीगढ़ से लगभग 10 कि.मी. दूर एक कस्बा है। औरंगजेब के काल में जब संगीतज्ञों का राज्याश्रय समाप्त हुआ तब खाँ साहब के पूर्वज अतरौली जाकर बस गए एवं वहां संगीत साधना करते रहे। आज भी उनके पूर्वजों की साधना स्थली मौसिक़ि मंजिल वहां मौजूद है। खाँ साहब के पिता का नाम अल्ताफ हुसैन खाँ तथा माता का नाम फ़ैयाजी बेगम था। खादिम हुसैन खाँ का जन्म अनेक मन्नतों के बाद एक फकीर के आशीर्वाद से हुआ। इनके दोनों भाई अनवर हुसैन और लताफत हुसैन खाँ ने भी संगीत क्षेत्र में बड़ा नाम किया।

खाँ साहब की माता उस्ताद नत्थन खाँ आगरे वाले की पुत्री थी एवं पिता अतरौली घराने के सुप्रसिद्ध कलाकार इनायत खाँ के पुत्र थे। इस कारण खादिम हुसैन खाँ को अनुवंशिक रूप से संगीत के उच्च संस्कार मिले। आगरा घराने की वर्तमान ख्याल गायकी के प्रवर्तक उस्ताद घघ्घे खुदाबख्श के पुत्र कल्लन खाँ ही खादिम हुसैन खाँ के पडनाना एवं गुरू थे।

2. संगीत शिक्षा– खाँ साहब को अपने पडनाना उस्ताद कल्लन खाँ से आगरा गायकी की सुव्यस्थित शिक्षा प्राप्त हुई। कल्लन खाँ जयपुर दरबार के राजगायक थे। खादिम हुसैन खाँ जब 9वर्ष की उम्र के थे तब उन्हे विधिवत जयपुर में ही गंडाबांध कर आगरा घराने की खास तालीम दी जाने की शुरूआत हुई। प्रतिदिन 12 घण्टे की कड़ी तालीम, अनुशासन एवं गुरू के प्रति समर्पण भाव सहित सेवा लगभग 12 वर्ष तक चली। ('सजन पिया' ग्रंथ में श्री जयवंतराव लिखते हैं कि आज के विद्यार्थी हफ्ते में 2 या 3 घंटे की तालीम पाते हैं। इस हिसाब से उन्हें खाँ साहब जैसी विद्या प्राप्त करने में लगभग 300 वर्ष लगेंगे) खादिम हुसैन खाँ को अपने गुरू से प्रचलित-अप्रचलित सैकड़ों रागों की तालीम प्राप्त हुई । यह गायकी 18 अंगों से सुशोभित थी। इसको गाने का गुरूमंत्र यही था कि राग की तबीयत पहचान कर स्थाई के अंग से गाना। आवाज का लगाव एवं सुरीलापन ऐसा सिखाया गया कि श्रोता सुनकर भाव विव्हल हो जाये। सुरों

के कोमलतम, तीव्रतर एवं सकारी दर्जे हृदय पर शर्तिया असर डालते हैं। लय,ताल,लयकारी एवं कठिन सरगम भी उनसे तैयार करवाई गई। तालीम के दौरान उनके लिये दंड एवं पुरस्कार दोनों का समुचित प्रावधान रखा गया था। उस्ताद कल्लन खाँ द्वारा आगराघराने की परंपरा, पूर्वजों की प्रेरक घटनाएं भी उन्हें बताई गई जिससे घराने के प्रति उनके मन में स्वाभिमान स्थाई रूप से बना।उस्ताद खादिम हुसैन खाँ ने अपने घराने के अन्य उस्तादों से भी जो विद्या ग्रहण की उसका उल्लेख वे कृतज्ञता पूर्वक करते रहे। जैसे-विलायत हुसैन खाँ,दादा इनायत खाँ,पडनाना गुलाम अब्बास खाँ,फ़ैयाज खाँ,नन्हे खाँ,मुन्नु खाँ,तसद्दूक हुसैन खाँ,मामा मोहम्मद खाँ,अब्दूला खाँ, बशीर खाँ,अलादिया खाँ,अशिक अली खाँ ,गणपतराव मनेरीकर आदि। कल्लन खाँ ने उन्हें वह समस्त संगीत सिखाये जो हृदयस्पर्शी थे-चाहे वह भिखारी द्वारा गाया गया हो या लोक गायिका नन्हीं जान ही क्यों न हो। समर्थ गुरू के द्वारा वे नोमतोम,आलाप,ध्रुपद,धमार,ठुमरी, तराना, होरी, त्रिवट, कजरी,रसिया,भजन,गजल,लावणी,इत्यादि।सभी गीत प्रकार गाने में सिद्ध कण्ठ बना गए। **3. गुरू के रूप में :-**ई. 1925 में खादिम हुसैन खाँ साहब के परिवार पर आर्थिक संकट का पहाड टूट पड़ा क्योंकि इनके गुरू कल्लन खाँ, पिता अल्ताफ हुसैन खाँ एवं दत्तक पिता मामू अब्दूल्ला खाँ बीमार पड गए एवं जयपुर दरबार का राज्याश्रय समाप्त हो गया। तब गुरू एवं परिवार जनों की आज्ञा लेकर मामा विलायत हुसैन खाँ साहब के साथ वे मुंबई पहुँचे। वहाँ संगीत विद्या-दान द्वारा उन्हें इतनी आमदनी होने लगी कि वे अपने परिवार को पर्याप्त सहायता भेजने लगे। मुंबई में उनके अनेक शिष्य हुए - भुजंगराव वत्सला कुमठेकर, कृष्णा उदयावरकर,ज्योत्सना भोले, सरस्वती फातर्फेकर, सगुणा कल्याण पुरकर,मीरा वाडकर,कुसुम वरिवडेकर,मोहन चिकरमाने,श्रीधर पार्सेकर, गोविन्दराव अग्नि, प्रहलाद गानू,अनंत दामले,गुजरात की भूतपूर्व राज्यपाल शारदा मुखर्जी,श्रीमति निलिमा किलाचन्द,चारूबाईजन्हेरी, कुमुद टोपे,अहिल्या बाई पुण्डे,ललितराव, जयानन्द खीरा,नाना राजाध्यक्ष,पद्मजा पुण्डे आदि।इनके अतिरिक्त फिल्म जगत की प्रसिद्ध हस्तियां भी इनसे सीखी जैसे-मुकेश,सुरैया, दुर्गा खोटे,मधुबाला,सुरेन्द्र इत्यादि।खाँ साहब की कड़ी व खड़ी तालिम 20वर्षों तक लगातार प्राप्त करने वाले एकमात्र शिष्य **बबनराव हलदनकर** है।इनके भाई मधुकर हलदनकर एवं बड़ी बहन को भी खाँ साहब ने तालीम दी ।

4. सिखाने की पद्धति:-खां साहब शिष्य के गले का गुणधर्म मानसिक एवं बौद्धिक स्तर को देखकर उसके अनुरूप बातों को सीधे और सरल रीति से सिखाते थे। 45 मिनट की तालीम में वह सब कुछ सिखा देते थे जिसे सिखाने में

अन्य लोगों को शायद 3-4 घंटे का समय लगे।

अपने शिष्य को महफिल में गाते समय आने वाली सभी संभावित कठिनाइयों का अंदाज देकर समझाते हुए उसका सामना करने का तरीका भी वे बताते थे। एक बार खाँ साहब पं. हलदनकर जी को पटमंजरी राग सिखा रहे थे। पांच रागों के बने इस मिश्रण को सोचकर पहले तो शिष्य का सिर चकराने लगा लेकिन खाँ साहब हँसकर बोले-घबराओं मत, हो जाएगा।बाद में पांच रागों को जब उन्होने खोलकर समझाया तो पटमंजरी पानी की तरह सहज हो गया।

प्रत्येक बंदिश को मौलिक लय में सिखाने के बाद वे उसी बंदिश को अति अतिविलम्बित से लेकर अतिद्रुत तक प्रत्येक लय में गवाते थे।इसका कारण वे बताते थे कि -''बेटा महफिलों में कभी-कभी अनाड़ी तबला वादक भी टकराते है। वे बताई हुई लय के उल्टा शुरू हो जाते हैं। ऐसे समय रूकना नहीं बल्कि उसी लय में गाते बनना चाहिए। इसलिए यह अभ्यास करवाया है।''

एक बार दशहरे के दिन उन्होने विशेष रूपसे आकर पं. हलदनकर जी को राग खट् (विद्याधर गुनियन)सिखाना शुरू किया। स्थाई अंतरा सीख जाने के बाद उसी समय सँचारी, आभोग बढ़त गायकी इत्यादि भी सिखा दिया।शिष्य की ग्रहण शक्ति से जब वे प्रसन्न हो जाते तो उदार होकर देते ही जाते थे और अंत में अपने इत्र फाहा भी पुरस्कार के रुप में बबनराव को दे दिया करते थे।

उस्ताद खादिम हुसैन खाँ के कारण ही उनके घराने के उस्ताद घग्घे खुदाबख्श की 200 वर्ष पूर्व की गायकी पं. हलदनकर जी को शु द्ध स्वरूप में प्राप्त हुई और आज हमें सुनने-सीखने को मिल रही है।

5. कलाकार के रूप में- बंबई तथा देश के अनेक महफिलों में खाँ साहब का गायन हुआ जिसे आज भी लोग याद करते हैं । इनके साथ देश के अनेक दिग्गज तबला एवं पखावज वादकों ने संगति प्रदान की जिनमें प्रमुख उस्ताद अहमद जान थिरफवा,अमीर हुसैन खाँ,कण्ठे महाराज,अल्लारक्खा, किसन महाराज,कामूराव मंगेशकर आदि प्रमुख थे।

खाँ साहब का स्वर एवं ताल पर अद्भुत प्रभुत्व था। मैसूर दरबार में उनका गायन सुनकर मैसूर के महाराजा ने अपने कानों को हाथ लगाकर जोर से कहा-''अय्यय्यों बिकट गवय्या,बिकट गवय्या''।

एक बार बड़ौदा में एक सात दिवसीय संगीत समारोह में खाँ साहब को अपनी कला प्रस्तुत करनी थी। वहां एक तैयार तबला वादक भी पहुंचे थे जिन्होंने यह घोषणा कर रखी थी कि मैं किसी गायक को गाने नहीं दूंगा, मैं गायक के मुँह में हथौड़ी डाल दूंगा (अर्थात् मेरी तैयारी और लयकारी के सामने कोई गायक टिक नहीं सकता) इस डर से कोई गायक उसको संगति के

लिए लेने को तैयार नहीं हुआ। जब खाँ साहब को अन्य लोगों से यह बात मालूम हुई तो वे बोले - ''मेरा मुँह बड़ा है शायद उसमें हथौड़ी आ जाय।'' उसे लेकर खाँ साहब गाने बैठे और विलम्बित झपताल में एक बंदिश शुरू की। दो चार आलापों के बाद खाँ साहब ने अपने चिर परिचित अंदाज में ताली के आघातों सहित लय की आड कुआड की तो तबला वादक हड़बड़ाकर लय को दुगुनी कर बैठा। खाँ साहब ने मुखड़ा लेकर सम पकड़ी और बोले यह कौन सी लय तुमने कर दी ? सारे श्रोता हँसकर बोलने लगे-देखो-देखो गवैय्यों के मुंह में हथौड़ी डालने वाले की दुर्गत। तब तबला वादक ने खाँ साहब से माफी मांगी।खाँ साहब बोले ''घमंड बहुत बुरी चीज है। अब किसी गवैय्ये के साथ ऐसी गुस्ताखी मत करना।''

खाँ साहब राग वाचक स्वर समूह से गायन प्रारंभ करते थे जिससे श्रोता तुरंत जान लिया करते थे कि कौन सा राग गाया जाने वाला है। राग की शुद्धता को वे प्राणों की तरह जतन करते हुए भी गायन को शुष्क नहीं अपितु सौन्दर्यपूर्ण एवं भावपूर्ण बनाया करते थे। नोमूतोम् की आलापी एवं जोडकाम में वे श्रोताओं को झूमने पर मजबूर कर देते थे। स्थाई के अंग से गाकर वे राग को साकार मूर्त रूप प्रदान कर जीवंत कर देते थे।लयकारी एवं बोलतानों में उनकी अनाकलनीय एव अंदाज के विपरीत पड़ने वाली सटीक तिहाइयां श्रोताओं को चमत्कृत,मंत्रमुग्ध एवं मस्तिष्क को झकझोर कर रख देती थी। उनकी लयकारी केवल गणितीय हिसाब नहीं थी अपितु उसमें श्रोताओं को लय के विशिष्ट आघातों का आनंद मिलता था। श्रोता जब लयकारी के आनंद में विभोर रहते थे तब वे अचानक सम पकड़कर श्रोताओं को अचम्भित कर देते थे।इतना प्रभुत्व होने के बाद भी वे कहते थे कि - ''मनुष्यका संपूर्ण जीवन लय से व्याप्त हैं। लय तो हवा की तरह है। इसलिए किसी को घमंड नहीं करना चाहिये कि वह मेरे काबू में है।''

6. वाग्गेयकर के रूप में :-खाँ साहब ने कुछ नये सुन्दर रागों की रचना की एवं उनमें बंदिशें भी बांधी। इनमें सुन्दर श्री,पंचम हिण्डोली, ललित भैरव आदि है। इसी प्रकार उनकी अनेक रचनाएं आगरा ,अतरौली,जयपुर के कलाकार आदरपूर्वक गाते हैं। खाँ साहब की स्वयं की बंदिश अनुकुल वातावरण एवं प्रेरणा प्रोत्साहन मिलते साथ तुरंत प्रस्फुटित होती थी ।एक बार फ़ैयाज खाँ साहब किसी महफिल में मलुहा केदार गाना चाहते थे किन्तु बंदिश का अन्तरा बना नहीं था। वे भोजन के लिए बैठते हुए खादिम हुसैन खाँ को बोले कि मुझसे इसका अन्तरा अनेक प्रयत्न करने पर भी नहीं बन पा रहा है, तुम कोशिश करो। खादिम हुसैन खाँ ने कुछ ही मिनटों में चिन्तन कर इतना सुन्दर अन्तरा बनाकर

उन्हे सुनाया कि लग ही नहीं रहा था कि स्थाई व अन्तरा अलग-अलग व्यक्तियों ने रचा है। स्थाई :- मोरी आली मोरा मन हर लीनो रे
जात रही मैं तो ब्रिज की गलियन में ॥
अन्तरा :- हूं जमुना तट गौवे चरावत
मुरली की धुन परी मोरे कान तब ॥

इसे सुनकर फ़ैयाज खाँ साहब बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने बहुत आशीर्वाद दिये। इसी प्रकार उनके गुरूभाई पं. रातांजनकर जी की रचना राग झिंझोटी की-'मेरो मन सखी हर लिनो'को सुनकर उन्होने तुरंत उसी अंदाज की एक रचना-'सांवरे सलोने से लागे मोर नैन'बना दी। अपने घराने की अनेक स्थाईयों को उन्होने ऐसे ही अन्तरे बनाकर दिये। इसी प्रकार अनेक रागों में जोड़ ख्याल बनाए।इनके छोटे भाई अनवर हुसैन ने भी अनेक बंदिशें संगीत जगत को दी हैं। मुद्रा अपने गुरू की रखी है। खाँ साहब की रचनाओं में अन्य रचनाकारों की अपेक्षा लय ताल के पेंच अधिक रहते थे। उसे गाने के लिए विशेष प्रतिभा की जरूरत रहती है,पर सुनने में बड़ी आसान लगती है। उन्होने अपनी बंदिशें 'सजन पिया' मुद्रा नाम से रची। उनकी अनेक सुन्दर रचनाओं में से कुछ निम्न है :-

जौनपुरी	-	कैसे करूं उन संग
गोरखकल्याण	-	पिया नहीं आए
बिहाग	-	कान्हा भर-भर मारे पिचकारी
खम्बावती	-	बीती जात सगरी उमरिया
सोहनी	-	साजन तुम जरा बोलो बोलो बोलो
चन्द्रकौंस	-	तीखे नैना तोरे भंव हैं कमान

निम्नलिखित रागों की रचनाएं भी बहुत लोकप्रिय है एवं गायक उन्हे बड़े सम्मानपूर्वक गाते हैं जैसे- बिहागडा, चम्पक बिलावत,खेमकल्याण,रामगौरी,ललितागौरी,दीपक केदार,धनाश्री,हिण्डोली, मियां की सारंग,पटदीपकी,पूरबा,सामंत सारंग,आदि आदि।

वे अपने शिष्यो को भी नई-नई रचनाएं करने हेतु प्रोत्साहित करते थे। उनके पट्टशिष्य पंडित श्रीकृष्ण बबनराव हलदनकर जी ने 'रसपिया' मुद्रा से सैकड़ों बंदिशें बनाई हैं। श्रीमती किशोरी अमोणकर के करकमलों से पूना में उक्त ग्रन्थ का विमोचन 29.9.2001 को हुआ। इस संगीत की अमूल्य देन के पीछे खादिम हुसैन खाँ साहब का प्रोत्साहन व प्रशिक्षण भी कारणीभूत है।

7. पारिवारिक जीवन:- खाँ साहब का विवाह अतरौली घराने के मेहबूब खाँ 'दरस पिया'के छोटे भाई मुंशी जमाल अहमद की पुत्री

हसीना बेगम से सन् 1928 में हुआ। विवाह के कई वर्षों तक उन्हें कोई संतान नहीं हुई फिर भी उन्होने एकपत्नि व्रत का पालन किया क्योकि उन्होने अपने गुरू कल्लन खाँ को वचन दिया था। बाद में (1945 में) उन्हें एक पुत्री जरीना हुई। उनका विवाह सन 1965 में सुप्रसिद्ध सितारवादक श्री शमीम अहमद से हुआ। खाँ साहब ने अपने छोटे भाई श्री अनवर हुसैन एवं श्री लताफत हुसैन का भी पालन-पोषण किया। लताफत हुसैन खाँ को घराने की संपूर्ण तालीम दी तथा इनके सारे परिवार की जिम्मेदारी का निर्वाह किया। खाँ साहब के नाती मोहसीन,अहसान और मुजीब को भी खाँ साहब ने सिखाया।

8. स्वभाव:– खाँ साहब का स्वभाव अत्यन्त मिलनसार, शान्त था।वे अपने घराने की विद्या पर गर्व जरूर करते थे परन्तु घमण्ड उन्होने कभी नहीं किया। वे हमेशा कहते थे कि ''मैं कितना नसीब वाला हूं कि अल्लाह ने इतना इल्म (विद्या)मुझे बख़्श दिया।'' उ. विलायत हुसैन खाँ उनके मामा एवं गुरू थे। फ़िर भी वे कहते थे कि खादिम हुसैन के पास न जाने और कितना क्या-क्या है ।इतना होने पर भी उ. खादिम हुसैन खाँ कहते थे कि जो अपने घराने को ऊंचा और अन्य घराने को नीचा कहे वह कूढ है और जो कलाकार अपने आप को ऊंचा और दूसरे कलाकार को नीचा समझे वह महाकूढ हैं।साथ ही अपने घराने की विशुद्ध गायकी को छोड कर सारे घरानों की गायकी का मिश्रण करना वे दुर्भाग्यपूर्ण मानते थे।

खाँ साहब समय के अत्यन्त पाबंद थे। अपने गन्तव्य स्थान पर वे एकदम ठीक समय पर पहुंच जाते थे इसलिये कहा जाता था कि खाँ साहब को देखकर घडी मिला लेनी चाहिए। दिये हुए वचनों का पालन उन्होने कठोरता पूर्वक किया। ई.सन् 1924-25 में मुंबई आने के पूर्व वे जब अपने गुरू उ. कल्लन खाँ से बडौदा में मिले तब उनके गुरू ने उनसे वचन लिया कि -

1. जीवन में हमेशा व्यभिचार और व्यसन से कोसो दूर रहो।
2. विवाह होने तक ब्रह्मचर्य का पालन करो।
3. अपने लाभ के लिये दूसरों की हानि नहीं करना।
4. दिल से साफ रहना ।
5. सबका भला करना ।

खाँ साहब ने अपने गुरू को दिये वचनों का आजीवन पालन किया। मद्यपान धूम्रपान ही नहीं सुपारी से भी दूर रहे। यह उनकी 90 वर्ष की लंबी आयु का शायद रहस्य था। एक रोचक घटना उल्लेखनीय है। एक बार फ़ैयाज खाँ साहब ने महफिल में सब के लिये रम मंगवायी। लेकिन खादिम हुसैन खाँ के लिये विमटो नामक शीत पेय मंगवाया। खादिम हुसैन ने आशंका जताई

क्योकि विमटों एवं रम एक ही रंग के थे। परन्तु प्रत्येक ने उन्हें आश्वस्त किया कि उनके ग्लास में बूंद भर भी रम नहीं हैं। शीत पेय पी लेने के पश्चात् फ़ैयाज खाँ ने सीधे-सीधे उनकी आंखों में देखकर कहा-''आखिर आज तुम हम पापियों की जमात में शामिल हो ही गये''। यह सुनकर खाँ साहब का सिर घूमने लगा और वे बहुत घबराये। सब लोग बहुत हंसे और बाद में उन्हें समझाया कि उन्होंने जो पिया है विमटो ही था। इसलिये उन्हें संत महात्मा के रूप में सब लोग देखते थे।खाँ साहब तालीम देते समय दिल खोलकर सिखाते थे। उन्हें कोई पुत्र नहीं था इसलिये उन्होने पं. बबनराव को अपना पुत्र समझकर औलाद जैसी तालीम दी।

9. प्राप्त सम्मान:-आपकी नि:स्वार्थ संगीत सेवा से प्रभावित होकर महाराष्ट्र शासन द्वारा सर्वप्रथम आपको सम्मानित कर सम्मान की श्रृंखला प्रारंभ की गई। संगीत नाटक अकादमी नई दिल्ली ने आपको अवार्ड दिया। कलकत्ता की संगीत रिसर्च अकादमी ने आपको अवार्ड दिया एवं आपके गायन का रिकार्डिंग संग्रह हेतु रखा। म. प्र. शासन ने सुप्रसिद्ध **तानसेन पुरस्कार** से आपको अलंकृत किया। भारत के राष्ट्रपति महामहिम नीलम संजीव रेड्डी ने आपकों **पद्म भूषण** सम्मान से सम्मानित किया। संगीत संस्था 'सजन पिया' का निर्माण आपके नाम पर आपके शिष्यों ने किया जिसमें घराना सम्मेलन नामक कार्यक्रम अपने आप में अद्वितीय हैं। आप अकाशवाणी के 'ए' टॉप ग्रेड कलाकार थे।

10. नादविलय :- खाँ साहब अपने जीवनके अंतिम दिनों में अस्वस्थ रहे। दि. 11.1.1993 को उनका बंबई में दु:खद निधन हुआ। शोकाकुल संगीत जगत ने उन्हें अश्रुपूरित श्रद्धांजलि दी। खैरागढ़ संगीत विश्वविद्यालय ने अपनी शोक संवेदनाएं उनके परिवारजनों को भेजी। उस समय दैनिक समाचार पत्र में मेरा लेख-'जाना एक गान तपस्वी का' प्रकाशित हुआ था। संगीत संस्था 'नाद निकुंज' खैरागढ़ ने उनकी स्मृति में एक संगीत सभा आयेाजित की एवं उन्हे श्रद्धांजलि दी। इसमें खाँ साहब की बंदिशों का प्रस्तुतिकरण उनके पट्ट शिष्य पं. बबनराव हलदनकर ने किया।

खाँ साहब के कारण आगरा गायकी की 200 वर्ष पुरानी परंपरा आज तक शुद्धरूप में स्थापित रही एवं शिष्यों को सीखने का अवसर मिला। यह गायकी आज भी शिष्यों के माध्यम से व रिकार्डिंग के माध्यम से हम सुन सकते हैं, सीख सकते हैं। इसे जतन कर अगली पीढी को देना हमारा पुनीत कर्त्तव्य है। ऐसे युगसृष्टा संगीत संत को मेरा प्रणाम ।

आगरा घराना : संस्मरण

डॉ भालचन्द्र पंचाक्षरी, खैरागढ़

बड़ौदा तथा खैरागढ़ में अनेक वर्षों तक रहने के कारण एवं बड़ौदा से आगरा घराने के कलाकारों का संबंध होने से मुझे निम्नलिखित कलाकारों से प्रत्यक्ष भेंट का सुअवसर मिला।

1.पं. मधुसूदन जोशी - ये अता हुसैन खाँ शागिर्द थे। अता हुसैन खाँ मेहेबूब खाँ दरसपिया के सुपुत्र एवं फैयाज खाँ के शालक थे। पं. मधुसूदन जोशी फैयाज खाँ के साथ तानपुरे पर संगत करते थे।भारतीय संगीत पाठशाला में एवं एम.एस. यूनिवर्सिटी के म्यूजिक कालेज में आप व्याख्याता रहे। मुझे इनके बहुमूल्य मार्ग दर्शन का यहीं अवसर मिला।

2. उ. गुलाम रसूल खाँ - ये गुलाम अब्बास खाँ की छोटी पुत्री के पुत्र थे। ये फैयाज खाँ के साथ हार्मोनियम चालीस वर्षों तक संगति करते रहे।बड़ौदा संगीत विद्यालय में आप शिक्षक रहे तब मुझे पढ़ाया। प्रसिद्ध सितार वादक शमीम अहमद इनके पुत्र हैं। बाद में वे पंडित रविशंकर जी से भी सितार सीखे।

3. नन्हे खाँ - ये उस्ताद नत्थन खाँ के छोटे पुत्र एवं विलायत हुसैन खाँ के भाई हैं। नन्हे खाँ के पुत्र अमानत अली खाँ के साथ बैठकर मैं अभ्यास करता था।

4. सुश्री मीरा वाडकर - ये विलायत हुसैन खाँ की शिष्या थी। म्यूजिक कालेज में ये हमें पढ़ाती थी।

5. प्रो. आर.सी.मेहता - म्यूजिक कालेज बड़ौदा के ये प्राचार्य रहे। इन्डियन म्यूजिकालाजिकल जरनल के ये संपादक हैं। ये खैरागढ़ संगीत यूनिवर्सिटी में अतिथि प्राध्यापक रहे। इन्होने युनूस हुसैन खाँ की बंदिशों एवं आगरा गायकी के ध्वन्यंकन का संग्रह किया।इनसे मुझे अनेक वर्ष गायन सीखने को मिला।

6. उ. युनूस हुसैन खाँ - ये विलायत हुसैन खाँ के सुपुत्र थे। ये भी खैरागढ़ संगीत यूनिवर्सिटी में अतिथि प्राध्यापक के रूप में आए एवं रिकार्डिंग दी।तब मैंने हार्मोनियम बजाया था।

7. एम.आर.गौतम - ये खैरागढ़ संगीत यूनिवर्सिटी के 80 से 83 तक कुलपति रहे। इन्होने पं. रामराव नाईक,पं. दिलिप चन्द्र वेदी,उ.अता हुसैन खाँ , ठाकुर जयदेव सिंह आदि विद्वान कलाकारों से संगीत की उच्च शिक्षा प्राप्त की।आपके प्रशासन काल में संगीत युनिवर्सिटी उल्लेखनीय रूप से प्रगति पथ पर आरूढ़ हुई। आप गुणियों की कद्र करते हैं एवं सार्थक योजनाओं के क्रियान्वयन में दक्ष हैं।आपने देश-विदेश में भारतीय संगीत के प्रति विदेशियों के मन में सुन्दर धारणाएं बनाने हेतु व्याख्यान व प्रदर्शन दिये। आपके कार्यकाल में देशभर के

सर्वाधिक अतिथि प्राध्यापकों ने विश्वविद्यालय को लाभान्वित किया ।आप मेरे डॉक्टर ऑफ म्यूजिक के गाईड रहे ।

8. पं. गजानन बुवा जोशी - वैसे तो आपके पिता जी ग्वालियर घराने के थे परंतु आपने अपने पिता के अलावा उ. विलायत खाँ से सीखा । आपके गाने में रहिमत खाँ का भी असर था । उ. फैयाज खाँ के भी आप सत्संग में रहे । आप खैरागढ़ संगीत यूनिवर्सिटी में काफी अवधि के लिए अतिथि प्राध्यापक बनकर रहे एवं मुझे सीखने का अवसर मिला ।आप केसर बाई केरकर के गायन के बहुत दीवाने थे ।

9. पं. श्रीकृष्ण बबनराव हल्दनकर - आप खैरागढ़ में मार्च 1981 से अतिथि प्राध्यापक के रूप आए थे । उसके बाद भी अनेक बार गायन एवं सोदाहरण व्याख्यान हेतु आप आए जिनसे सभी शिक्षक व मैं बहुत ही लाभान्वित हुए ।आप खादिम हुसैन खाँ के सर्वश्रेष्ठ सर्वज्ञ शिष्य हैं ।

10. जयसुखलाल शाह - आप भी इंदिरा कला संगीत वि.वि.,खैरागढ़ में अतिथि प्राध्यापक पद के रूप में आमंत्रित हुए थे एवं मुझे सीखने का सुअवसर मिला।आपके सारंग,कानडा,भैरव,मल्हार के प्रकारों की पुस्तकें बहुत ही स्तरीय एवं मार्गदर्शनीय हैं ।

11.सुश्री दीपाली नाग - आपको भी फ़ैयाज खाँ साहब से सीखने का सुअवसर मिला । आपका ग्रन्थ ' फ़ैयाज खाँ ' सुप्रसिद्ध है । आप भी अतिथि के रूप में खैरागढ़ आने कारण मुझे सीखने को मिला ।

12. प्रो.अमरेश चन्द्र चौबे - आप संगीत विश्वविद्यालय में डीन व गायन विभागाध्यक्ष रहे । आप रातंजनकरजी के शिष्य हैं । आप मेरे गाईड होने से मुझे सीखने का अवसर मिला । सम्प्रति आप लखनऊ में हैं ।

13.प्रो.बी.आर.देवधर - आप हमारे विश्वविद्यालय में अतिथि प्राध्यापक के रूप में लम्बी अवधि तक रहे ।खादिम हुसैन खाँ साहब के छोटे भाई अनवर हुसैन खाँ से आपने तथा आपके प्रमुख शिष्यों ने तालीम हासिल की थी । इस कारण अनेक अप्रचलित राग एवं बंदिशें आप के संग्रह में सम्मिलित हुई ।आपसे मुझे सीखने का सौभाग्य मिला ।

14. इसी प्रकार पं.जी.टी.जोशी , पं. दिनकर कैकीनी, उ.निसार हुसैन खॉ , ठाकुर जयदेव सिंह इत्यादि अनेक कलाकारों ने मार्गदर्शन दिया ।

आगरा घराने के प्रतिनिधि व श्रेष्ठ गायकरत्न आफताब-ए-मौसिक़ी (संगीत के सूर्य) ''उस्ताद फ़ैयाज खाँ''

आगरा घराना की वर्तमान गायकी को विकसित,पल्लवित व प्रफुल्लित करने का श्रेय उस्ताद फ़ैयाज खाँ को जाता है,अत: इनकी संक्षिप्त

जीवनी व गायिकी पर नजर डालना आवश्यक है । उस्ताद फ़ैयाज खाँ चौमुखी,चतुंरगी,अष्टावधानी गायक तथा वाग्गेयकार थे। इनका जन्म 8-2-1881 को हुआ तथा बड़ौदा-गुजरात में दिनांक 5-9-1950 को पैगंबरवासी हुए। आपका गायन सुनना रसिक श्रोता के लिए चिरस्मरणीय पर्वणी समान रहता था। उस्ताद फ़ैयाज खाँ जहाँ भी जाते थे उनके साथ उनके चहेते लोग व शागीर्दों का काफिला रहता था । कभी-कभी महफिल में चार तानपुरे भी रहते थे । उस्ताद फ़ैयाज खाँ को अत्तर का भारी शौक था । उनकी उपस्थिति दूर से ही अत्तर की सुगंध से पहचानी जाती थी । छह फीट ऊँ चा बदन,रोबदार मूँछें,सिर पर साफा,शेरवानी,हाथ में चांदी की मूठवाली शीशम की लकड़ी, जोधपुरी कोट पर कई लटकते मैडल,ऐसे प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी उस्ताद फ़ैयाज खाँ थे। पल्लेदार,मोटा,ढ़ाला,भारी व विशेष जवारीदार तथा तासीर वाले आवाज (कंठ) के धनी उस्ताद फ़ैयाज खाँ थे। ध्रुपद गायन के लिए उपयुक्त कंठधर्म,वजनदार,स्वर में बोज़,मींड,कण, छूट व गमक के लिए उपयुक्त लक्षणों से युक्त जो चाहिए वह आवाज उस्ताद फ़ैयाजखाँ को निसर्गत: ही प्राप्त था। उनकेगाने का स्वर हारमोनियम के ''काली पांच से सफेद एक'' तक रहता था । ऐसे उमदा, मर्दानी स्वर के मालिक उस्ताद फ़ैयाज खाँ बड़े सभागृह में भी बिना माईक के गाते थे।

फ़ैयाज खाँ के जन्म के पूर्व ही उनके पिता की मृत्यु हो चुकी थी। अत: इनका जन्म नाना गुलाम अब्बास खाँ के यहाँ आगरा गांव के एक कुनबे में 8-2-1881 को हुआ। बचपन से ही फ़ैयाज खाँ ने गुलाम अब्बास खाँ से तालीम पाई,जिसमें धृपद,धमार,होरी ख्याल,टप्पा का समावेश था। उस्ताद गुलाम अब्बास खाँ जगह-जगह जाकर अपने कार्यक्रम करते थे । दौरे पर फ़ैयाज खाँ उनके साथ ही रहते थे ।बचपन से ही कई कलाकारों को सुनकर फ़ैयाज खाँ के कान खुल गए थे,वे बहुश्रुत हो गए थे,नज़र व्यापक हो गई थी। मैसूर के दरबारी गायक नथ्थनखाँ के पुत्र अब्दुल्ला खाँ को सुनने का मौका उस्ताद फ़ैयाज खाँ को मिला । उस्ताद नथ्थनखाँ के हिन्दु शिष्य पं. भास्कर बुवा बखले का नाम उत्तम गायकों में प्रसिद्ध है। कलकत्ता में पं. गणपतराव भैया दादरा व ठुमरी गायन में निष्णात थे। इनके प्रभाव से उस्ताद फ़ैयाज खाँ ने यह ढंग भी अपना लिया। अन्य खानदानों की योग्य उपयुक्त चीजें उस्ताद फ़ैयाज खाँ ने सीखकर प्राप्त की ।उस्ताद अताहुसैन खाँ के पिता उस्ताद मेहबूबखाँ,जो ''दरस पिया''नाम से बंदिशें बनाते थे ,प्रथम श्वसुर थे,इनसे भी उस्ताद फ़ैयाज खाँ ने बंदिशें प्राप्त कीं। साथ ही साले साहब उस्ताद कालेखाँ ,जो ''सरस पिया'' नाम से बंदिशें बनाते थे,इनसे भी उस्ताद फ़ैयाज खाँ ने बंदीशें प्राप्त कीं । उस्ताद अताहुसैन खाँ, फ़ैयाज खाँ के पास ही बड़ौदा में रहे। उनके साथ तानपुरा पर संगत करते रहे,साथ में बीच-बीच में उनके साथ

गाते भी रहे।उस्ताद अताहुसैन खाँ की आवाज उस्ताद फ़ैयाज खाँ से थोड़ी पतली जवारीदार थी। वे तानों में पूरे तीन सप्तक की तानें लेते थे। उस्ताद मौजुद्दीन खाँ से बनारसी,लखनवी ठुमरी व दादरा,उस्ताद फ़ैयाज खाँ सीखे। इस प्रकार ग्रहणशील वृत्ति, सरल मनमोहक स्वभाव,

लुभावना व दूसरों को आकर्षित करने वाला व्यक्तित्व,इन गुणों से संगीत गायन की एक-एक छटाएँ उस्ताद फ़ैयाज खाँ ने प्राप्त की। परिश्रमपूर्वक कठोर रियाज कर साथ ही अद्‌भुत सर्जनशीलता से आपने ''प्रेम पिया'' उपनाम से कई रागों में बंदिशें जोड़कर ,उस्ताद फ़ैयाज खाँ की गायकी,चौबीस कैरेट सोना बनती गई। आगरा घराना की गायकी को उस्ताद फ़ैयाज खाँ का अप्रतिम योगदान मिला व उस्ताद फ़ैयाज खाँ ''आगरा घराना गायकी'' के प्रतिनिधि गायक बने। हिन्दुस्तानी संगीत की अधिकांश विधाओं के अधिकारी उस्ताद फ़ैयाज खाँ रहे। भक्ति संगीत में भजन भी उस्ताद फ़ैयाज खाँ गाते थे। काफी राग का ''वंदे नंदकुमारम्'' गौडमल्हार का सूरदास का भजन ''निस दिन बरसत नैन हमारे'',बाखूबी उस्ताद फ़ैयाज खाँ गाते थे। आपने जीवन में एक हजार से भी अधिक बैठकें की। राजा महाराजाओं ने धन,मान-सम्मान,उपाधियाँ व मेडल दिये। मैसूर महाराजा ने ''आफ़ताब-ए-मौसिक़ी'' व बड़ौदा के महाराज ने ''ज्ञानरत्न'' की उपाधि उस्ताद फ़ैयाज खाँ को प्रदान की। अपने को उस्ताद फ़ैयाज खाँ ने कभी पैसों से तुलने नहीं दिया। समझदार व रसिक श्रोताओं के प्रेम के वे भूखे थे। संगीत के श्रोताओं ने भी उनको अपार प्रेम व सम्मान दिया। आगरा घराने के साथ,प्रतिनिधि के रूप में जुड़कर,उस्ताद फ़ैयाज खाँ अमर हो गए। उस्ताद फ़ैयाज खाँ वाग्गेयकार भी थे। ''प्रेम पिया'' नाम से या तखल्लुस (उपनाम)'से बनाई कुछ बंदिशें निम्नानुसार हैं - 1. राग जोग - साजन मोरे घर आये। 2. जयजयवंती में - (अ) मोरे अंदर अब लो (ब) पैया परुंगी (स) धमार - आली री डफ बाजन। 3. रामकली - उन संग लागी 4. भैरवी - (अ)बनाओं बतियाँ (ब) पायलिया (स) बाबुल मोरा 5. पीलू - भंवरारे 6. शंकरा - ऐसी ढीट 7. तिलककामोद - बमना एक सगुण 8. दुर्गा - कहाँ करिये 9. गारा कानाडा - (अ) बारम्बार (ब) तनमनधन (स) मोसे करत 10. तिलंग - ऐसो निपट अनारी। 11. रागश्री - ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती 12. सोहनी - चलो हटो। 13. पुरिया - मैं कर आई 14. बरखा - बाजे मोरी 15. बिंदराबनी सारंग - सगरी उमरियाँ मोरी। 16. शुद्ध सारंग - अब मोरी बात 17. बिलासखानी तोड़ी - बलम मोरी छोड़ो। स्वतंत्र भारत में उस्ताद फ़ैयाज खाँ,बड़ौदा की भारतीय संगीत पाठशाला व युनिवर्सिटी के म्युज़िक कॉलेज में मानद् प्राध्यापक के रूप में कार्यरत थे। आगरा घराना की गायकी को विविधता देने का श्रेय,जिसे हम अष्टांग गायकी कहते हैं,उस्ताद फ़ैयाज खाँ को जाता है।

आगरा घराना :

उद्‌गम, विकास एवं इसकी शिष्य परम्परा

डॉ.वीणा विश्वरूप

वर्तमान समय में ख्याल गायन शैली के लिए आगरा घराने का नाम सम्मानपूर्वक लिया जाता है क्योंकि यह प्राचीन परम्परागत घरानों में सर्वोपरि माना जाता है ।ख्याल गायन शैली के पूर्व ध्रुपद गीत प्रकार प्रचलित थे तथा नोमूतोम् की आलापचारी होती थी। इसमें नौहारवाणी (राग प्रस्तुतिकरण की एक पद्धति)के लिए भी आगरा गायकी का उच्च स्थान है। प्राय: ऐसा समझा जाता है कि घराना शब्द गुरू-शिष्य परम्परा या वंश परम्परा को इंगित करता है जबकि गायकी उस विशिष्ट परम्परा द्वारा राग प्रस्तुतिकरण की शैली का प्रतीक माना जाता है। परन्तु आज घराना और गायकी प्राय: समानार्थक माने जाने लगे हैं।

भारतीय संगीत के अन्तर्गत आने वाली राग एवं ताल परम्परा विश्व की समस्त संगीत पद्धतियों में अपने आप में अद्वितीय है। सुर और लय पूरी दुनिया में है परंतु राग और ताल (ठेका) भरत की अपनी प्रॉपर्टी है। भारतीय मनीषियों का स्वयंभू स्वर ,स्वर-सम्वाद तथा सप्तकों का ज्ञान इस अद्वितीय राग परम्परा के विकास हेतु कारणीभूत रहा। राग द्वारा विशिष्ट भाव विश्व में प्रविष्ट कराने का उद्देश्य प्राचीन समय में था ,तब से चला आ रहा है और आज भी है। इस उद्देश्यपूर्ति के लिए प्रत्येक युग में राग को प्रस्तुत करने के लिए किसी न किसी शैली का प्रचार रहा। आज राग को ख्याल गीत प्रकार के अन्तर्गत विभिन्न घरानों में अपनी-अपनी शैली से गाया जाता है। जिसमें आगरा घराना या गायकी के इतिहास पर हम दृष्टिपात करेंगे ।आगरा घराने के इतिहास पर लिखित विविध ग्रंथों के आधार पर जो बिंदु इस घराने के उत्पत्ति के संबंध में सामने आते हैं वे क्रमानुसार इस प्रकार हैं :-

(1)- ई.1296 से 1316 के मध्य अलाऊद्दीन खिलजी के शासन काल में अमीर खुसरो के कारण नायक गोपाल या गोपाल नायक को दक्षिण के देवगिरी से दिल्ली लाया। उनकी गायन शैली के बारे में निश्चित प्रमाण ज्ञात नहीं परंतु दीपक राग द्वारा ज्वाला प्रज्जवलित करके खिलजी व खुसरो के समक्ष प्रदर्शन की घटना का वर्णन प्राप्त होता है। (सजन पिया- लेखक जयवंत राव)। दूसरी किंवदंती का उल्लेख ग्रंथों में इस तरह से मिलता है कि नायक बैजू और नायक गोपाल का संगीत द्वंद्व हुआ। इसमें बैजू ने छ: रागों का मिश्रण कर खटराग बनाकर सुनाया और मुकाबला जीता। वह रचना निम्न लिखित थी -

विद्याधर गुनीयन सों कहां अरी ये कछु चर्चा की लराई लरिये।
जो कुछु आवे तो गाये सुनाये नहीं तो गुनीयन के चरन परिये॥
मेरो तेरो न आवे निरंजन के आगे चंदन बबूल को एक ठौर धरिये।
ज्ञान को समझावे को बहु बेख करिये कहे बैजू नायक तानन तरिये॥

(संगीतज्ञों के संस्मरण पृष्ठ 49)

आगरा घराने में आज भी वो लोग उक्त बंदिश को गाते हैं जिन्हें सच्ची तालीम प्राप्त हुई है। आगरा घराने के समर्थक अपने घराने का प्रारंभ नायक गोपाल से मानते हैं। लेकिन उनकी वाणी व गायन शैली के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि वे संस्कृत या प्राकृत या देशी भाषाओं के प्रबंध परम्परा के गायक रहे होंगे।

(2)- ई. 1325 से ई. 1375 के मध्य (सम्भवत: : फीरोजशाह तुगलक के शासन काल में) नायक गोपाल के शिष्य अलखदास जटाधारी प्रसिद्ध थे,जिनकी वंश परम्परा आगरा घराने के वर्तमान गायकों तक पहुँची है।

(3)- ई.1375 से 1536 तक अलखदास के बाद प्राय: 5 पीढियों का इतिहास अज्ञात है। इन 161 वर्षों में अलखदास के वंशज एवं शिष्य अपने गांवों में पीढ़ी दर पीढ़ी विद्या सीखते सिखाते रहे एवं बुजुर्गों से अपने इतिहास की जानकारी लेते रहे ही होंगे। इस अवधि में संगीत का राज्याश्रय,उत्थान एवं प्रचार-प्रसार न होने के पीछे एक कारण तो यह था कि मोहम्मद तुगलक द्वारा राजधानी को अनेक बार दिल्ली से देवगिरी एवं देवगिरी से वापस दिल्ली लाने का क्रम दोहराया गया इससे प्रशासनिक अव्यवस्था,अस्थिरता एवं अकाल पड़ा। दूसरे तैमूरलंग के आक्रमण से दिल्ली व भारत का उत्तरी भाग युद्ध के कारण आक्रांत रहा। तीसरे छोटे-छोटे राज्यों में बंटे कमजोर शासक एक दूसरे से लड़ते रहे और अशांति के वातावरण के कारण संगीत दर किनार कर दिया गया। लेकिन इसके बाद सौभाग्य से शांति स्थापित हुई। अलखदास की गायन शैली का नाम नौहरवाणी ग्रंथों के द्वारा बताया गया है क्योंकि वे राजस्थान के नौहार क्षेत्र के गोसाई थे। गोसाई परम्परा गोरक्षनाथ दीक्षा से संबद्ध मानी जाती है जिसमें संगीत के माध्यम से उपदेश एवं धर्म का रक्षण किया जाता है। नौहरवाणी शब्द आजकल की तरह उस समय ध्रुपद की वाणी के रूप में नहीं अपितु गायन शैली हेतु उपयोग में आता था। इस 161 वर्षों के अवधि में ग्वालियर के राजा डुंगरेन्द्र सिंह ने विष्णुपद तथा डागुर वाणी का निर्माण किया तथा मानसिंह तोमर ने ध्रुपद का नवीन स्वरूप प्रचलित किया। दूसरी तरफ खुसरूई मौसिकी,कव्वाली, सुफियाना गज़लें , लोकगीत,महिला गीत इत्यादि भी जनता में प्रचारित प्रसारित होने लगे थे।

(4)- ई.सन् 1556 से 1605 तक अकबर के शासन काल में

सुजानदास नामक नौहर राजपूत का दरबारी गायक एवं अलखदास के शिष्य के रूप में उल्लेख किया गया है। सुजानदास ने भी अकबर को दीपक राग द्वारा दीपक जलाने का एवं मल्हार से बारिश कराने का चमत्कार दिखाया था। परंतु कुछ विद्वानों का मत है कि उक्त घटनायें राजनीतिक कारणों से तानसेन के साथ जोड़ दी गई। प्रमाण स्वरूप निम्नलिखित साहित्य बताया जाता है जो इस प्रकार है -

ब्याहन आया बाजत ढोल मंगल धौंगल निशान धराया।
असीस मोर कंगना मेंहदी सोहे पागा सोने सजाया।
नर-नारी मिल मंगल गावत,सखियन टोना चलाया।
आगे ममदशा पीछे **दीपक ज्योत** गुनन सगुन सराया।
चिर जगि जियो,**अलख दास** को दुल्हा **मिया** मंगल गाया।

(श्री रमणलाल मेहता)

दूसरी तरफ यह भी लिखा है कि तानसेन ने अपनी पुत्री का विवाह सुजानदास के साथ किया था। तानसेन गौड ब्राह्मण थे,इसलिए उनकी गायन शैली गौडहारी वाणी कहलायी। एवं सुजानदास नौहर राजपूत थे इसलिए उनकी शैली नौहार वाणी कहलायी। सुजानदास धर्म परिवर्तन कर तथा हज यात्रा के बाद हाजी सुजान खाँ हुए। उनके द्वारा रचित एक ध्रुपद ग्रंथों में इस प्रकार मिलता है - प्रथम मान अल्लाह जिन रच्यौ नूर-ए-पाक।

नबीजी पे रख इमान ए रे सुजान।

उक्त रचना ध्रुपद रूप में राग जोग में है। मानसिंह तोमर द्वारा रचित ध्रुपद विधा का 1486 से 1516 ई. के बाद पर्याप्त प्रचार-प्रसार हुआ।

(5)- ई. सन् 1556 से 1605 अकबर शासन काल में सुजानदास का पुत्र सुरज्ञान खाँ भी दरबारी गायक था। यह नौहरवाणी के ध्रुपद गायक के रूप में प्रसिद्ध हुआ। इन्हें गायक एवं नायक की पदवी प्राप्त थी।

(6)- ई. 1605 से 1627 तक जहांगीर का शासन काल रहा। उसके दरबार में सुरज्ञान खाँ का बेटा जोगीबच्चा कदरशाह था। अकबर ने सुरज्ञान खाँ को प्रसन्न होकर गौंडपुर नामक ग्राम इनाम के तौर पर दिया था।अतः वहाँ पर शिक्षित कदरशाह गौंडपुरिये के नाम से भी जाने गए।

(7)- ई. सन् 1627 से 1658 तक दिल्ली पर शाहजहां का शासन था। वे फतेहपुर,फतेहपुर सिकरी,आगरा आदि स्थानों पर भी रहकर शासन कार्य करते थे। आगरे का ऐतिहासिक ताजमहल इनके द्वारा इनकी पत्नी के नाम पर बनाया गया,यह बताया जाता है। विश्व के आश्चर्यों में यह एक है और इससे आगरे का नाम दुनिया में प्रसिद्ध हुआ। शाहजहां के दरबार में जोगीबच्चा हैदरशाह नौहार गायक थे। इनके पुत्र दयमखाँ सरसरंग ही आगरे के प्रथम निवासी बने।

(8)- ई. 1658 से 1660 तक दाराशिकोह का शासनकाल संगीत अध्यात्म एवं शांति के लिए अनुकुल था। इन्होंने अकबर के आश्रित गायकों की परम्परा पूर्ववत् चलाने हेतु अनुकुल कार्य किए। परंतु उनके ही भाई ने उनकी हत्या कर शासन हथिया लिया।

(9)- ई. सन् 1660 से 1707 तक औरंगजेब का शासनकाल संगीत के लिए दुर्भाग्यपूर्ण एवं प्रतिकूल रहा। औरंगजेब ने संगीतज्ञों का राज्याश्रय तो बंद करवाया ही साथ ही दिल्ली के आसपास के स्थानों में रहने वाले गायको के परिवारों को गांव छोड़ने हेतु फरमान जारी किए। दहशत के माहौल में दयमखाँ सरसरंग दिल्ली- गौंडपुर छोड़कर आगरा में आकर बस गए। उस समय काशी नरेश महाराजा वीरभद्र सिंह ने अपना स्थायी निवास आगरा को बना लिया था। इनके दरबार में सरसरंग एवं उनके पुत्र शामरंग दोनों को आश्रय प्राप्त हुआ और ये दोनों आगरे से बाहर नहीं गए। सरसरंग से ही नौहरवाणी के स्थान पर आगरा घराना शब्द इस गायकी के साथ जुड़ना प्रारंभ हुआ। वाणी शब्द गायकी का द्योतक है जबकि घराना शब्द उस स्थान पर रहने वाले विशिष्ट कलाकारों को इंगित करता है।

(10)- ई. सन् 1707 से 1719 तक बहादुरशाह प्रथम (1712)का,जहांदरशाह (1713) फर्रूखाँसियर (1719) का शासनकाल प्राय: युद्धों में व्यतीत हुआ एवं संगीत की ओर विशेष रूप से ध्यान नहीं दिया गया परंतु गायक अपनी गायिकी को पीढ़ी दर पीढ़ी चलाने के लिए साधनारत रहे। इसी अवधि में सदारंग और अदारंग को दिल्ली के दरबार में राज्याश्रय प्राप्त था।

(11)- ई. सन् 1719 से 1750 तक मोहम्मद शाह रंगीले का शासनकाल था। इस काल में संगीत पुन: पल्लवित पुष्पित हुआ। स्वयं रंगीले के आदेश पर सदारंग अदारंग ने ख्याल शैली में बंदिशों की रचना की।रंगीले के काल में ही हाजी सुजान खाँ की बेटी का विवाह वज़ीर खाँ नौहार से हुआ था जो खुसरूई मौसिकी का कलाकार था। वज़ीरखाँ के पुत्र हसनखाँ फ़ैजमोहम्मद खाँ के पूर्वज दादाजी थे। फ़ैज मोहम्मद खाँ ही पंडित भास्कर बुवा बखले के प्रथम गुरू तथा आफ़ताब-ए-मौसिकी फ़ैयाजखाँ के ससुर थे। मोहम्मद शाह के समय ख्याल शैली से सभी का परिचय हो गया था। इस कारण सरसरंग व शामरंग ने ख्याल की बंदिशें रचीं।

यहाँ तक हमने देखा कि 'वाणी' एक शैली की परिचायक रही। बाद में इसमें विविध गायकी के आधार पर नाम जुड़े। ध्रुपद भी इनके नामाभिधान को प्राप्त कर आगे बढ़े। किंतु शहरों के नाम पर जब घराना या गायकी का नामकरण हुआ तब वह शैली के साथ-साथ विशिष्ट परिवार,स्थान,वंश या शिष्य

परम्परा का भी द्योतक रहा है। आगरा घराना या गायन शैली को 1250 ई. के बाद 1750 ई. तक यानि 500 वर्षों के अविरत प्रवाह से उत्पन्न अनुभवों के द्वारा एक दृढ़ नींव का आधार मिला।अभी तक मुख्यत: ध्रुपद धमार आलापचारी एवं लयगत कामों का इसमें प्रवेश था।इसके बाद कयम खाँ शामरंग के बेटों ने आगरा घराना गायकी व नाम सार्थक किया। वर्तमान ख्याल शैली के आगरा घराने के जनक इनके पुत्र थे।

(12)- ई. 1750 से 1850 तक की अवधि शामरंग के चार बेटों में से एक थे घघ्घेखुदाबख़्श। जन्म से ही उनकी आवाज घघ्घी होने के कारण उनका नाम तदनुरूप पड़ गया। कयमखाँ शामरंग के घर में सभी को पारम्परिक संगीत की शिक्षा दी गई पर आवाज खराब होने के कारण घघ्घे की ओर दुर्लक्ष किया गया। इतना ही नहीं उसका उपहास भी किया गया। दु:खी और आहत हृदय खुदाबख़्श ने मन ही मन दृढ निश्चय किया कि अन्य घराने में जाकर पूर्ण विद्या प्राप्त करके ही घर लौटेगा। पक्के इरादे से एक रात बिना किसी को सूचना दिए उसने ग्वालियर के लिए प्रस्थान किया। ग्वालियर जाने वाले जत्थे के साथ वह भूखा प्यासा पैदल चलते हुए ,जंगली पशु, बीहड़ के डाकू सभी को सहते भागते हुए ग्वालियर पहुँचा। ग्वालियर के राजा सिंधिया के राज गायक नत्थन पीरबख़्श के चरणों में गिरकर अपनी करूण कहानी सुनाई और गुरू बनने की विनती की।

नत्थनपीरबख़्श मक्खन खाँ के शिष्य थे। नत्थनपीबख़्श ने आगरे के संगीतज्ञों से ध्रुपद होरी इत्यादि चीजें सीखी थीं जिसके आधार पर उन्हें स्थायी,ख्याल की ताकत और ऊँचा दर्जा प्राप्त हुआ था।आगरे से सीखने के बाद वे लखनऊ के दरबार में गए। वहाँ उनके पुत्र कादरबक्ष की मृत्यु के कारण दु:खी होकर वे अपने नाती हद्दू, हस्सू और नत्थू को लेकर लखनऊसे ग्वालियर दरबार में दौलतराव सिंधिया महाराज (1794 से 1827) के आश्रय में आ गए।उनकी ख्याति सर्वत्र हुई। घघ्घे भी उनकी योग्यता से परिचित थे इस कारण वे ग्वालियर पहुँचे। ग्वालियर में उस समय शकरखाँ का बेटा बड़े मोहम्मदखाँ भी दरबार में था। उसे सुनने का भी उन्हें अवसर मिला। अवधनरेश आसफुदौला और गयासुद्दीन के शासनकाल में (1720 से 1800 ई.) सदारंग के समकालीन एवं प्रतिद्वंदी कव्वाल गायक गुलाम रसूल के तीन शिष्य थे ! इनमें से शकरखाँ ,मक्खनखाँ जामाता हुए और पुत्र शौरी मियां टप्पा के प्रचारक हुए। गुलाम रसूल के बनाये ख्याल लंगड़े ध्रुपद और गायिकी कव्वाल बच्चों की गायिकी कहलाई।घघ्घे खुदाबक्ष ग्वालियर में आने से उन्हें उक्त सभी विधाओं को आत्मसात करने का अवसर मिला।

कठोर परिश्रम से खुदा बक्ष ने पहले अपनी आवाज सुधारी उसके बाद बारह वर्षों तक गुरू की आज्ञानुसार साधना करते हुए पारंगत हुए। लगभग 14 वर्षों बाद वे जब वापस अपने घर आगरा लौटे तो इनकी आवाज और गायिकी का असर ऐसा था कि सुनने वाले रोमांचित हो जाते थे। इनका मधुरकंठ दर्द भरा सुरीला गायन श्रोता के सीधे हृदय को छूता था। आज आगरा गायिकी या घराना घघ्घे खुदाबक्ष की इसी शैली का अनुसरण करता है।

(13)- घघ्घे खुदाबक्ष ने अपनी गायिकी को अपने भाई के बेटे शेरखाँ (1805 से 1862 ई.) को,पुत्र गुलाम अब्बास खाँ (1825-1934ई.)को कल्लन खाँ (1835-1925 ई.)को और शिष्य पंडित बिशंभरदीन विश्वनाथ को सिखाया। शेरखाँ के पुत्र नत्थन खाँ (1840-1901ई.)ने इस गायिकी को अपने पुत्रों मोहम्मद खाँ,अब्दुल्ला खाँ,विलायत हुसैन खाँ,बाबू खाँ,नन्हेखाँ और शिष्य भास्कर बुवा बखले और दामाद अल्ताफ हुसैन को सिखाया।

गुलाम अब्बास खाँ ने आफ़ताब-ए-मौसिकी फ़ैयाजखाँ और छोटे भाई कल्लनखाँ को यह गायिकी सिखाई। कल्लनखाँ के नाती खादिमहुसैन खाँ ने आगरा घराने की गायिकी को आगरा,जयपुर,बड़ौदा से होते हुए मुंबई में प्रचारित प्रसारित किया। मुंबई में उनके शिष्यों की लम्बी सूची है। इनमें पंडित बबनराव (श्रीकृष्ण) हलदनकर को उन्होंने पुत्रवत पूरी तालीम दी।

(दृष्टव्य : संलग्न वंश व शिष्य परम्परा की तालिका)

1. **शेरखाँ** घघ्घे खुदाबक्ष के भतीजे व जंगु खाँ के पुत्र इन्होंने आगरा गायिकी में तानफिरत का काम बड़ी दमदारी से किया। एक बार वे ग्वालियर में जाकर सराय में ठहरे। हद्दू खाँ उन्हें विनती कर महाराज जीवाजीराव सिंधिया के पास ले गए। इनका गाना सुनकर सभी अत्यंत प्रसन्न हुए। संयोगवश वे मुंबई गए। वहाँ भी इनके गाने की धाक संगीत जगत पर संगीत जगत पर बनी रही। वे तीस वर्ष तक मुंबई में रहकर विद्यादान करते रहे एवं परिवार के लोगों क पालप-पोषण किया। 1862 में 75 वर्ष की उम्र में इनका आगरा में देहावसान हुआ।

2. **गुलामअब्बास खाँ** ये घघ्घे खुदाबक्ष के बेटे थे। इन्होंने आगरे घराने की गायिकी को दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का बहुत ही महत्वपूर्ण काम किया। जिस कलाकार के नाम से आगरा घराना सर्वाधिक प्रसिद्ध हुआ वे फैयाजखाँ इन्हीं के नाती एवं शिष्य थे। कहते हैं कि ये 130 वर्ष की आयु तक जीवित रहे क्योंकि उसके लिए उन्होंने विशेष रूप से प्रयास किया।

3. **कल्लनखाँ** - ये घघ्घे खुदाबक्ष के बेटे थे एवं इनकी तालीम गुलाम अब्बास खाँ के पास हुई। साथ ही इनके पिता के शिष्य पं. विश्वनाथ ने भी

इन्हें घराने की बहुत सी चीजें होरी ध्रुपद सिखाई। जयपुर के महाराजा माधवसिंह के दरबार में इन्हें आश्रय प्राप्त हुआ। फ़ैयाजखाँ, तसद्दुकखाँ ,खादिम हुसैन खाँ,अनवर हुसैन,नन्हे खाँ,बशीर खाँ,और विलायत हुसैन खाँ को इन्होंने तालीम दी। ये जयपुर से बाहर प्रायः नहीं जाते थे किंतु पंडित भातखण्डे जी ने लखनऊ में जब आल इंडिया कान्फ्रेंस आयोजित की तो वे निमंत्रण टाल न सके।

4. **नत्थन खाँ** - ये शेरखाँ के इकलौते बेटे थे। आगरा घराने की गायिकी के अनुसार स्थायी अंतरे की बढ़त बोलतान लयदारी इत्यादि इनकी गायिकी की विशेषता थी। विलंबित ख्याल को वे इतनी कम लय में गाते थे कि तबले वाले को ठेका पकड़ना मुश्किल हो जाता था। फिर भी वे उसमें आड़कुवाड़ इत्यादि लयकारी सहित आमद एवं सम को अचूक पकड़ते थे। देश भर में घूमकर इन्होंने अपनी गायिकी से सब को मोहित किया। संगीत भास्कर पंडित भास्कर बुवा बखले इन्हीं के शिष्य थे।

5. **मोहम्मद खाँ** (1875-1925) ये नत्थन खाँ के पुत्र थे।घराने की तालीम प्राप्त करने के बाद ये 1901 में आगरे से बंबई आए। इनके पास रागों और बंदिशों का भंडार था। इन्होंने कई शिष्यों के साथ भाई शंकर,भाई प्राणनाथ तथा पुत्र बशीरखाँ को तालीम दी।

6. **अब्दुल्ला खाँ** (1875-1925)- नत्थनखाँ के दूसरे पुत्र मैसूर के दरबारी गायक थे। ये दिल्ली जालंधर काश्मीर आदि स्थानों पर जाकर महफिलों में प्रशंसित एवं पुरस्कृत हुए।

7. **नन्हे खाँ** (1899-1945)- नत्थन खाँ के सबसे छोटे बेटे थे ।घराने की तालीम कल्लनखाँ से प्राप्त की। बंबई आकर अनेक शिष्यों जैसे रत्नकांत रामनाथकर,सीताराम फातरफेकर, गुलाम अहमद आदि को तालीम दी। इनका उपनाम शकील था।

8. **फ़ैयाज खाँ** - अपनी गायिकी से सभी घरानों के गायकों को सामान्य जनता को विद्वानों से लेकर रसिकों तक सबको निर्विवाद रूप से प्रभसवित करने वाले सदी के इस गायक ने आगरा घराने की रोशनी में चार चाँद लगा दिए। इनके नानाजी गुलाम अब्बास खाँ जो कि घघ्घे खुदाबक्ष के पुत्र थे। इनके गुरू भी थे। ईश्वर ने बनाये इस अनमोल हीरे को इनके गुरूओं ने तराशा और भारतीय संगीत को एक दैदिप्यमान नक्षत्र प्राप्त हुआ। भारत के समस्त राजाओं में इन्हें दिल खोलकर पुरस्कार दिए। आफ़ताब-ए-मौसिकी संगीत चूड़ामणि अन्य गवैये नहीं हुए। स्वतंत्रता के पश्चात् बड़ौदा, लखनऊ,इलाहबाद,कलकत्ता इत्यादि स्थानों पर आपकी कान्फ्रेंस पंडित भातखण्डे जीद्वार संयोजित हुई। आपकी प्रशंसा के लिए पूरा ग्रंथ कम पड़ेगा अतः संक्षेप में यहाँ इतना ही कहा

जा सकता है कि भारतीय राग संगीत के लिए आपकी प्रतिभा एवं तपस्या ने एक नया रंगीन प्रकाशमय मार्ग खोला। आपके शिष्य दिलीपचंद्र बेदी ,श्री कृष्ण रातंजनकर,पंडित कुमार मुखर्जी,पंडित बबनराव हलदनकर इत्यादि सभी ने आगरा गायिकी के रूप में आपकी गायिकी को आगे बढ़ाया।

9. **बशीर अहमद खाँ** (1903-1975)- मोहम्मद खाँ के बड़े पुत्र,कल्लन खाँ के शागिर्द,जयपुर निवासी,बशीर अहमद मुंबई तथा कलकत्ता में भी रहे। दीपाली नाग,अपर्णा चक्रवर्ती इत्यादि अनेक शागिर्दों को सिखाया। आगरा में देहावसान हुआ।

10. **तसद्दुक हुसैन खाँ (विनोद पिया)** - ये कल्लन खाँ के पुत्र थे। उनसे आगरा की तालीम पाई । पं. काशीनाथ एवं असदअली इनके शिष्य थे । बड़ौदा के संगीत हाईस्कूल में 22 वर्ष तक संगीत अध्यापन भी किया।

11. **असदअली खाँ** - आगरे वाले कालेखाँ के सुपुत्र और तसद्दुक हुसैन के शिष्य थे।

12. **खादिम हुसैन खाँ** (1905-1993 ई.)- अलताफ हुसैन के पुत्र,कल्लन खाँ के शागिर्द। गुलाम अब्बास खाँ,फ़ैयाज खाँ,विलायत हुसैन खाँ,इनायत खाँ एवं अलादिया खाँ से भी संगीत विद्या प्राप्त की। सजनपिया के नाम से सैकड़ों बंदिशों का निर्माण। श्री कृष्ण हळदनकर, ललित राव आदि को तालीम दी । पद्म भूषण एवं तानसेन सम्मान से अलंकृत एवं संस्कृत रिसर्च अकादमी एवं संगीत नाटक अकादमी से सम्मान प्राप्त।

13. **अनवर हुसैन खाँ** (रसरंग)- खादिम हुसैन खाँ के छोटे भाई,कल्लन खाँ के शिष्य। गोविन्द राव अग्नि , मीरा वाडकर, रामजी भगत, शंकर राव बड़ौदा वाले को तालीम दी। आगरा घराने द्वारा आयोजित म्यूजिक कान्फ्रेस मुम्बई , 1937 के सेक्रेटरी रहे।

14. **लताफत हुसैन खाँ** - अल्ताफ हुसैन के सबसे छोटे बेटे। तसद्दुक हुसैन एवं खादिम हुसैन के शागिर्द।

15. **अकील अहमद खाँ** - बशीर अहमद के पुत्र तथा शिष्य ।आगरे में घर पर संगीत शाला खोलकर विद्यादान किया।

16. **सफीकुल हुसैन खाँ** - अतरौली वाले एजाज हुसैन के पुत्र तथा अता हुसैन खाँ के शागिर्द। खादिम हुसैन, अनवर हुसैन एवं विलायत हुसैन से भी चीजें प्राप्त की ।अलीगढ़ में संगीत विद्यालय के संचालक।

17. **रामजी भगत**- बढ़ताल मठ के बड़े गोसाई जी के शिष्य। बड़ौद में अता हुसैन खाँ और अनवर हुसैन खाँ से शिक्षा प्राप्त की ।बम्बई में

मलाड में संगीत शाला के संयोजक।

18. **स्वामी वल्लभ दास** - अहमदाबाद में स्वामी नारायण मंदिर के पुजारी। बड़ौदा में अता हुसैन खाँ से 15 वर्षों तक संगीत सीखा।ये संगीत के द्वारा जो भी अर्थार्जन करते थे उसे संगीत के प्रचार के लिये ही खर्च कर देते थे। बम्बई के सायन (शीव)स्थान पर संगीत वल्लभाश्रम बनाया। इसमें इस जमाने में एक लाख रूपया लगा। इसका उद्घाटन फैयाज खाँ साहब के गायन से हुआ और यही उनके जीवन का अंतिम जलसा था।

19. **पं. भास्कर राव बखले** - 1895-1932। फैज मोहम्मद खाँ एवं एवं नत्थन खाँ के शागिर्द। इन्हे संगीत भास्कर की उपाधि मिली थी क्योंकि ये श्रेष्ठ एवं निर्विवाद गायक थे। पूरे भारत में सभी रियासतों में इनकों पूरा सम्मान एवं प्रशंसा प्राप्त हुआ। इन्होने पूना में भारत गायन समाज नामक संस्था खोली थी। मास्टर कृष्ण राव , दिलीप चन्द्र वेदी, गोविन्द राव टेम्बे, बाल गंधर्व इत्यादि इनके प्रमुख शिष्य थे।

20. **गोविन्द राव टेम्बे** - कोल्हापुर निवासी बी.ए.एल.एल.बी. हारमोनियम वादक के रूप में सुप्रसिद्ध ।पं. भास्कर राव बखले के शिष्य। किर्लोस्कर नाटक मण्डली एवं बाल गंधर्व मण्डली के संगीत निर्देशक एवं अभिनेता।माझा संगीत व्यासंग नामक महत्वपूर्ण संगीत समीक्षा एवं संगीत इतिहास ग्रन्थ के लेखक। अनेक फिल्मों में सफल अभिनय एवं संगीत निर्देशक।

21. **दिलीप चन्द्र वेदी** - पंजाब निवासी पं. दिलीप चन्द्र जी भास्कर राव बखले के शिष्य बनने के लिये बम्बई आए। गोविन्द राव टेम्बे से हारमोनियम की शिक्षा भी प्राप्त की। फैयाज खाँ के गायन से अत्यंत प्रभावित। ठा. जयदेव सिंह , डॉ. एम.आर.गौतम जैसे शिष्यों को सिखाया।

22. **मास्टर कृष्ण राव फुलंब्रिकर** - पं. भास्कर राव के शिष्य। भारत कोकिला श्रीमती सरोजनी नायडू द्वारा सम्मानित। भारत गायन समाज के प्राचार्य। बाल गन्धर्व नाटक मण्डली के सदस्य।

23. **पं. श्रीकृष्ण नारायण रातंजनकर** - पं. भातखंडे एवं फैयाज खाँ साहब के शिष्य। संगीत वि.वि.खैरागढ़ के प्रथम कुलपति। हजारों बन्दिशों के वाग्येकार। राष्ट्रपति द्वारा पद्मभूषण सम्मान से विभूषित। लखनऊ के भातखंडे संगीत महाविद्यालय के प्राचार्य। संगीत के लिये पूरा जीवन समर्पित। अनेक शिष्यों को तैयार किया जिनमें पं. के.जी गिन्डे, एस.सी.आर. भट्ट, डॉ. सुमति मुटाटकर, प्रभाकर चिंचोरे ,पं.बालासाहब पूछवाले, पं. केशव राव राजा राम सुरंगे,प्रो.व्ही.जी. जोग, व्ही.सी.रानाडे, ए.सी.चौबे, चिन्मय लहरी,

चिदानन्द नगरकर इत्यादि प्रमुख हैं।

24. **पं. जगन्नाथ बुआ पुरोहित (गुणी दास)**- कोल्हापुर निवासी। आगरा घराने के गवैये। मो. अली खाँ सिकन्दरे वाले से हैदराबाद में तालीम पाई। तानरस खाँ कुतुब बख्श के भांजे शब्बू खाँ दिल्ली वाले, बशीर खाँ गुरयानी वाले एवं विलायत हुसैन खाँ आगरे वाले के शागिर्द। कोल्हापुर में संगीत विद्यालय खोला। गुलाब बाई बेलगांवकर, राम मराठे, सुरेश हळदनकर, गजानन राव जोशी, जितेन्द्र अभिषेकी इत्यादि शिष्यों का तैयार किया।

25. **गुलाम अहमद** - गुलाम रसूल खाँ मथुरा वाले के पुत्र। आगरे वाले नन्हे खाँ के शागिर्द।

26. **विलायत हुसैन खाँ (प्राण प्रिया)**- नत्थन खाँ साहब के सुपुत्र। कल्लन खाँ, गुलाम अब्बास खाँ के शागिर्द। इन्होने 42 गुरूवों से शिक्षा प्राप्त की। पूरे देश में इनके लगभग 100 शागिर्द हैं जिनमें गजानन राव जोशी, मोगू बाई कुर्डीकर,अंजनी बाई जम्बोलीकर, दुर्गा खोटे, मेनका शिरोड़कर, जगन्नाथ बुआ पुरोहित, रत्न कान्त रामनाथकर, राम मराठे और **कश्मीर के राजा कर्ण सिंह** प्रमुख है। **कर्ण सिंह जी भारतीय राजनीति के वरीष्ठ नेता हैं।**

27. **पं. कुमार मुखर्जी** - उस्ताद फैयाज खाँ के एकलव्य शिष्य। अता हुसैन खाँ, लताफत हुसैन खाँ के शागिर्द। संगीत रिसर्च अकादमी कलकत्ता के सदस्य।

28. **पं. श्रीकृष्ण हळदणकर** - पद्म विभूषण मोगू बाई कुर्डीकर एवं उस्ताद खादिम हुसैन खाँ के पट् शिष्य। रसपिया उपनाम से सैकड़ों बन्दिशों का निर्माण। मिलनोत्सुक दो तानपुरे एवं अन्य अनकेक्र गन्थों के लेखक।वर्तमान समय में आगरा घराने के वास्तविक प्रतिनिधि गायक। अनेक शिष्यों को तैयार किया जिनमें प्रमुख डॉ.अरूण कशालकर, देवकी पण्डित, शुभदा पराड़कर, कविता खरवंडीकर, पूर्णिमा धुमाले,डॉ. श्री एवं श्रीमती विश्वरूप , डॉ.राम देशपाण्डे, मंजरी आलेगांवकर इत्यादि प्रमुख हैं।

29. **पं. बटुक दीवान** - उस्ताद विलायत हुसैन खाँ के शागिर्द एवं ठुमरी गायन में भी सिद्ध-हस्त। अनेक शिष्यों को तैयार किया।

30. इसके अतिरिक्त आगरा घराने के अनेक शागिर्द एवं गायक हैं जिनके नाम संलग्न तालिका में देखे जा सकते हैं।अन्य गायकों का परिचय ग्रन्थ में संलग्न आलेखों में विस्तार से प्राप्त हो सकता है।

*आगरा घराना वंश एवं शिष्य परम्परा की तालिका पुस्तक में संलग्न है.

वाग्गेयकारों की सूची

सरसरंग	- दय्यम ख़ाँ	गुणिदास	- जगन्नाथ पुरोहित
शामरंग	- क़यम ख़ाँ	दर्पण	- युनुस हुसैन ख़ाँ
मनहरपिया	- अब्दुल्ला ख़ाँ	रसपिया	- श्रीकृष्ण हलदनकर
प्रेमपिया	- फैयाज ख़ाँ	इनायत पिया	- इनायत ख़ाँ
प्राण प्रिया	- विलायत हुसैन ख़ाँ	चतुर	- वि.ना.भातखण्डे
सजन पिया	- खादिम हुसैन ख़ाँ	हर रंग	- मुहम्मद अली ख़ाँ
विनोद पिया	- तसद्दुक हुसैन ख़ाँ	सदारंग	- न्यामत ख़ाँ
सरसपिया	- कालेख़ाँ मथुरावाले	अदारंग	- फीरोज़ ख़ाँ
दरसपिया	- मेहबूब ख़ाँ	दिलरंग	- अजमत हुसैन ख़ाँ
सुजान	- श्री रातांजनकर	मिया रंगीले	- रमजान ख़ाँ
चन्दन पिया	- ग़ुलाम महमूद ख़ाँ	रामदास	- जहूर ख़ाँ
विश्वनाथ	- विशंबरदीन	प्रेमरंग	- रत्नकान्त रामनाथकर
रसरंग	- अनवर हुसैन ख़ाँ	रसदास	- अरूण कशालकर
		रसदासी	- वीणा विश्वरूप

आगरा–अतरौली का अंतर्संबंध

(नौहारबानी) आगरा		(गौड़हारबानी) अतरौली
1. घघ्घे खुदा बख्श (कयम खाँ 'शामरंग 'के पुत्र)	गुरू	शिष्य - मुंशी गुलाम हुसैन (करीम हुसैन के पुत्र) शिष्य - लाल खाँ (हिदायत खाँ के पुत्र) शिष्य - हाजी जहूर खाँ (मुगुल खाँ के पुत्र)
2. नत्थन खाँ (शेरखाँ के पुत्र,जंघूखाँ के नाती)	पति शिष्य	पत्नि - जसिया बेग़म (हाजी जहूर खाँ की पुत्री) गुरू - मेहबूब खाँ दरस (हाजी जहूर खाँ के पुत्र)
3. कल्लनखाँ (घघ्घे खुदाबख़्श के पुत्र)	गुरू	शिष्य - खादिम हुसैन खाँ (अल्ताफ हुसैन खाँ के पुत्र)
4. फ़ैयाजी बेग़म	पत्नि	पति - अल्ताफ हुसैन खाँ (इनायत खाँ के पुत्र)
5. अब्दुल्ला खाँ	पति	पत्नि - मरियम बी बेग़म (मेहबूब खाँ दरस की पुत्री)
6. विलायत हुसैन खाँ (दोनो नत्थन खाँ के पुत्र)	गुरू	शिष्य - खादिम हुसैन खाँ
7. फ़ैयाज खाँ (सफदर हुसैन खाँ के पुत्र और गुलाम अब्बास खाँ के नाती)	पति गुरू शिष्य	पत्नि - बशीरन बेग़म (दरस पिया की पुत्री) शिष्य - खादिम हुसैन खाँ अता हुसैन खाँ (दरस पिया के पुत्र)
8. जुबैदा बेगम (विलायत हुसैन खाँ की पुत्री)	पत्नि - पति - लताफत हुसैन खाँ (अल्ताफ हुसैन के पुत्र)	
9. युनुस हुसैन खाँ (विलायत हुसैन खाँ के पुत्र)	पति - पत्नि - शमीम बेगम (एजाज हुसैन की पुत्री)	
10. असीमा बेगम (विलायत हुसैन खाँ की पुत्री)	पत्नि - पति - शराफत हुसैन खाँ (लियाकत हुसैन के पुत्र)	
11.नसीम अहमद (बशीर खाँ के पुत्र)	पति - पत्नि - विकार बेगम (अता हुसैन की पुत्री)	

महिला गायिकाओं की सूची

गायिकाएँ	गुरू
जोहरा बाई	शेरखाँ
फिर्दोस बाई, बिब्बो बाई	कल्लन खाँ
मलिका जान	फ़ैयाज खाँ
दीपाली नाग	फ़ैयाज खाँ, बशीर खाँ तसद्दुकहुसैन खाँ,
अपर्णा चक्रवर्ती,	बशीर खाँ
श्रीमती बाई नार्वेकर, सरस्वतीबाई फातर्फेकर, वत्सला पर्वतकर, अंजनी जांभोलीकर, दुर्गा खोटे, तारा कल्ले, मालती पांडे, वासंती शिरोडकर, मेनका शिरोडकर, बाला बाई बेलगांवकर, तुंगा बाई बेलगांवकर, मोगूबाई कुर्डीकर, इंदिरा वाडकर, शामला मजगांवकर, रोंगिनी फडके, सुशीला वर्धराजन, सुशीला गानू, गिरिजा केलकर.	विलायत हुसैन खाँ
वत्सला कुमठेकर, सुरैया, मधुबाला, कुमुद वागले, ज्योत्सना भोले, कृष्णा उदयावरकर, श्यामला मजगांवकर, ललितराव, पद्मजा पुंडे	ख़ादिम हुसैन खाँ
सगुणा कल्याणपुरकर, मीरा वाडकर	अनवर हुसैन खाँ
तारा बाई शिरोडकर	भास्कर बुवा बखले
डॉ. सुमति मुटाटकर	श्रीकृष्ण ना. रातंज़नकर
गुलाब बाई आकोडकर, गुलाबबाई बेलगांवकर	जगन्नाथ बुवा पुरोहित
मोहन तारा, माणिक वर्मा	
सिंधु शिरोडकर, लता देसाई	गुलाम अहमद
अंजनी बाई लोयलेकर	गोविन्दराव अग्नि
अरूणाराव, सुमन वरेरकर	मोहनराव चिक्करमाने
मीनाक्षी मुडबेद्री, वंदना बखले, रंजना कश्यप	रत्नकांत रामनाथकर
शुभदा पराडकर, देवकी पंडित, वृन्दा मुण्डकुर, मंजिरी आलेगांवकर, समिधा यार्दी, पुर्णिमा धुमाले, कविता खरवंदीकर, सुमेधा देसाई, डॉ. वीणा विश्वरूप	बबनराव हलदनकर

My guru

(Aparna Chakravarti)

Ustad Bashir Khan (1897-1960)

In the historical city of Agra in a narrow lane - Gali Ashor Bag - stands an old house ' the house of the ustad of the Agra gharana. The Agra gharana has shishyas scattered all over the country , both North and South. This is because the ustads of this gharana were liberal with their 'talim'. The singer who are keeping alive the Agra gharana tradition today , are mostly shishyas and prashishyas who have no blood ties with the gharana. The Agra gharana vocal idiom has a strong flavour of Dhrupad gayaki in what is now mainly a khyal gharana . The reason is that this gharana was basically a dhrupad gharana. The khayal came in to it from Ustad Khuda Baksh called Ghagge Khuda Baksh who learnt the Gwalior gharana ustad Natthan Peer Baksh.We must mention here the name of Ustad Ghulam Abbas , son of Khuda Baksh . He had a very long life (1829-1934) In this long span he groomed his younger brother Kallan Khan , nephew Tassaduq Hussain and Sher Khan and last but not the least , the most luminous star of this gharana , his grandson on his daughter' side , Ustad Faiyaz Khan. Bashir Khansahab's great grandfather , Sher Khan, his grandfather Nathan Khan and his father Mohammed Khan were all settled in S.India and West India . His youth was spent in Jaipur with Kallan Khansahab from whom be received the gharana talim.Jaipur at the beginning of the 20th century was a veritable abode of the Muses. The Dagar gharana patriarch Ustad Bairam Khan and Ghulam Abbas Khansahab were contemporaries. Both were long-lived and their contribution to their respective gharanas was considerable. Bashir Khan has golden memories of Jaipur State under Sawai Ram Singh . He would reminisce about the 'samajhdari' of the rulers, of their charity , and above all their deep respect for Music and musicians. They were not just rich patrons but often the disciples of the ustads.Ustad Bashir Khan had spent many years in Baroda with his 'Mamu', Faiyaz Khansahab. The younger members of the family were expected to wait upon the commands of the senior musicians. This applied to the disciples as well , who were staying with the guru. They accompanied the seniors on the tanpura there by gaining

experience of performing in mehfils. Ustad Atta Hussain and Bashir Khan were in Baroda with Faiyaz Khan. Among the shishyas were Shrikrishna Ratanjankarji and Sohan Singh ji.Ustad Atta Hussain and Bashir Khan were both excellent gurus. Atta Hussain had made Calcutta his home under the patronage of the Raja Mahishdal. Ustad Bashir Khan , my guru, spent nearly nine years (1951-60) in Calcutta with me, and I had the god fortune of receiving the gharana talim in Dhrupad Dhamar, Khayal and Bandishi thumris peculiar to this gharana . As my parental home was Agra, even when Khansahab went there, I accompanied him. Bashir Khansahab was a God-fearing , retiring person, and a veritable storehouse of knowledge . His presence in our humble home gave me the chance of the company of great personalities from various music gharana. Ustad Mustaq Hussain (Rampur gharana), Ustads Tansen Pandey, Moinuddin and Aminuddin Dagar (Dagar Brother) of the Dagar gharana, Bade Ghulam Ali Khan (the Patiala gharana), Amir Khan (Indore gharana) to name but few.The four 'vanis' of the dhrupad, namely Khandar, Gobarhar, Dagar and Nauhar, have some distinctive features. These differences are now hardly discernible due to the whole new world of the electronic media , providing easy access so the far corners of the world. As Indian music is basically a word of mouth system, the notated form, if available was but skeletal , so that the physical presence of the guru was imperative in imparting the gharana gayaki to the shishya. The 'gharana' , a word often bandied about, came to be associated with music in the end of the 18th and beginning of the 19th century.The literal meaning of 'gharana' being family , to start with the word referred to a music family. Later it included the shishyas. It is interesting to note that the gharanas survived through the disciples who did not belong to the family. There were some reservation for a music family to attain 'gharana' status . It had to be carried over to at least three generations keeping the basic recognizable features of that gharana intact. This does not mean that there were no innovations. Innovation by coming generations added new techniques , new expositions keeping the recognizable structure of the gharana, which were handed down from the guru to shishya meticulously.As mentioned above, this segregation of gharana from the 'virus' of other gharanas, even from other music disciplines is hardly feasible today, still some age-old gharanas such as Agra, Gwalior, Dagar,have maintained their individuality.The Agra gharana's origin is discernible in the full-fledged 'no-tom' alaap before a recital. Very few dhrupad singers being available in this gharana now, the present system of passing on to khyal after full alaap , through erroneous, has come to stay.

Boldbat , boltaan, layabol are all the legacy of the dhrupad dhamar tradition which has enriched the khayal gayaki of this gharana. As in this gayaki the vistar is 'bol'- oriented and not akar oriented , the 'bandish' is of the utmost importance. 'Ras Bhav' forms a very important part, so that garbled lyrics have no part in it. Ustad Bashir Khan to lay great stress on the 'bandish' of which he was a master. 'Asthai bharna' or elaborating the raga as well the lyric give a new dimension to the song and is a test of musician's caliber . 'Laya' is not just keeping the beat of song. 'Laya' with its multifarious shades is a very important factor in creating 'bhav' or emotion. A very mild man by nature , Bashir Khansahab was a strict disciplinarian where music teaching was concerned . Hours used to pass in talim. He expected his student to devote all one's energy and devotion even to the neglect of other duties! During Bashir Khansahab's stay in Calcutta, connoisseurs were quick to recognize his 'Ustad'. Jnan Prakash Ghosh , Radhika Mohan Maitra, Manmotho Nath Ghosh, Mustaq Ali Khan , Montu Banerji , Dabir Khan , Tansen Pandey and many other musicians and connoisseurs welcomed him with sincerity. He was invited to take part in Jhankar Music Circle, All Bengal Music Conference, Tansen Music Conference et cetera where he generally presented little known 'achhop' ragas and talas which delighted samajhdars, but were a bit too stiff for the general listener.Ustad Atta Hussain was a relative of Bashir Khansahab .Naseem Ahmed , Bashir Khan's Son was married to Atta Hussain Khansahab's daughter.Bashir Khan was a regular broadcaster from the Bombay station of Akashvani. He passed away suddenly in Rourkela on 26th February 1960. He used to go there every month where my sister Sumita Chatterjee, wife of Shri D.R. Chatterjee, engineer of Rourkela Steel Plant , was receiving talim from him. He was always fond of beautiful things. He used to say how he enjoyed Nature after the bustle of Calcutta, but we never imagined that Rourkela would be his last resting place.Moghubai Kurdikar , mother of the more famous Kishori Amilkar, was his first pupil Jyotsana Bhole, Sitaram Fatarpekar and several others in Bombay revered him as guru. Dipali Nag and Kalpana Mukherjee were also disciples.During his stay in Calcutta , several students came to him , but as I said before , he was a hard disciplinarian and could not tolerate a cavalier attitude towards the great heritage which he guarded jealously. He often remarked "What else have I ? I have no diamonds, no gold, only this which I can impart to those who crave for it". It reminded me of St. Paul's saying, "Silver and gold have I none , but what I have , I give three". The poet Keats' lines " Beauty is Truth Truth Beauty ..... that is all ye need to know" are a fit tribute to the great ustad who worshipped Beauty embodied in Music.

आगरा घराना स्वानुभव

पं. तुलसीराम देवांगन

खुशी की बात है कि आगरा घराना सेमिनार के आलेखों का ग्रंथ प्रकाशन होने जा रहा है। मेरे गुरूजी पं. गजानन राव जोशी, पंडित श्रीकृष्ण रातंजनकर, पंडित विष्णु जोशी सभी आगरा के उस्तादों को बहुत सम्मान देते थे एवं फैयाज खाँ एवं विलायत खाँ को गुरू मानते थे। हाल ही में प्रकाशित ग्रंथ 'मिलनोत्सुक दो तानपुरे ' पढ़ने का अवसर मिला। यह श्री बबनराव हलदनकर जी का बहुत सुन्दर ग्रंथ संगीत जगत के लिये बड़ा ही उपयोगी सिद्ध होगा। पंडित हलदनकर जी का गायन भी मैंने सुना। वे रागों को शुद्धता और सुरीली लयात्मकता से जिस तरह अलंकृत करते हैं वैसा आज के युवाओं ने उनसे,उनकी तरह दीर्घ शिक्षा व परिश्रम द्वारा सीखना चाहिए व उस धरोहर को बचाना चाहिये। फ़ैयाज खाँ के बाद आगरा घराने का वैसा नामी गायक फिर सुना नहीं गया, पर घराने में सीखने वाले बच्चे एक न एक दिन उनका आदर्श सामने रखकर वैसा बनेंगे यह विश्वास मन में रखना चाहिए , ईश्वर स्मरण पूर्वक कर्म करते रहना चाहिये । एक न एक दिन उसका मधुर फल अवश्य मिलता है,यह इतिहास का अध्ययन करने से हमें मालूम पड़ता है। सेमीनार एवं प्रकाशन हेतु मेरी शुभकामनायें ।आपको सफलता मिले यह मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं। श्री भगवत स्मरण पूर्वक

तुलसीराम

(पंडित तुलसीराम देवाँगन जी को सेमिनार में शोधपत्र प्रस्तुति हेतु आमंत्रण-पत्र भेजा गया था। उन्होने पत्रोत्तर में लिखा-''पूरे जीवन तो यह गायकी,वह घराना बहुत किया। अब जीवन की संध्या में मैं उस घराने को याद करना चाहता हूं और उस घराने में जाने की चिन्ता करता हूं जहां 'यद् गत्वा न निवर्तते'सभी को जाना ही है। साथ ही मेरा स्वास्थ्य भी मुझे स्वीकृति शायद नहीं देगा।''---- अत: मैं स्वयं 26.01.01 को उनके घर पर रायपुर गई एवं उनका वक्तव्य रिकॉर्ड करके लाई जो यहां प्रस्तुत है।)

संपादिका

A MUSICIAN'S MUSICIAN
USTAD VILAYAT HUSAIN KHAN
(Pt.Batuk Deewan)

Ustad Vilayat Hussain Khan a stalwart of Agra Gharana and a musician's musician. Hit repertoire was so phenomenal and his erudition so vast that musicians often consulted him for a solution of finer points of music which were beyond their comprehension.

Villayat Hussain was born in a family of musicians who claim Lineage from Haji Sujan Khan, a contemporary of Miyan Tansen, Haji Sujan Khan was a Rajput and practised Vaishnavism, but he later became a convert to Islam and changed his original name which was Sujansingh Nauhar. He was a dhrupad singer practising Nauhari Bani(i.e. Nauhari style of dhrupad). In 1835, Ustad Vilayat Hussain's grandfather Ustad Sher Khan, came to Bombay and was the first artist to teach classical music in Bombay and was the first artiste to teach classical music in Bombay. His son Ustad Nathan Khan also settled in Bombay for some years and taught music and gave performances. They both were great musicians and were greatly respected for their knowledge and erudition.

Nathan Khan had achieved mastery over Layakari and Boltaans. His most famous disciple was Pandit Bhaskarabuva Bakhle, one of the greatest musicians of his time. When Nathan Khan died, Vilayat Hussain was only six years old; hence, he received training in music from his brothers - Ustad Mohammed Khan and Ustad Abdulla Khan who, too, were great musicians. He also received talim in Dhrupad from Ustad Karamat Khan and in Khyal from Ustad Kallan Khan, who were court musicians of Jaipur Darbar. Consequently, Villayat Khan's repertoire consisted of hundreds of dhrupads, dhamars and khyals, moreover, he knew a large number of bandish thumris.

Vilayat Hussain's forte was layakari and boltaans. He knew a very large number of rage ragas and presented every raga in its pristine purity. Ustad Ahmed Jan Thirakwa, the great tabla wizardm often accompanied him on the table and it was a great treat to listen to both these Ustads indulging in a friendly contest. Vilayat Hussain was a composer par excellence of bandishes, which contained the quintessence of the raga. There were no traditional drut bandishes in ragas like Rayasa Kanada Pancham Sohani, Hem, etc. He composed superb bandishes under the nom deplume of "Pran Piya" in these and many other ragas numbering about 70. More over, many

of these bandishes have ShriKrishna as the hero. His pupils Ustad Yunus Hussain (son), Ustad Khadim Hussain (nephew) and Pandit Jagannathbuva Purohit (disciple) also composed numerous excellent bandishes under the nom deplume of "Darpan", "Sajan Piya", and "Guni das" respectively, His other illustrious pupils were Moghubai Kurdikar, Indira Wadkar and Saraswati Faterpekar. He was very large hearted and taught his pupils without any reservations.

Sangeet Natak Academy has published his book "Sangeetagyon ke Sansmaran", which is a mine of information regarding various gharanas (schools) of vocal music and about numerous great musicians of a bygone era. Vilayat Hussain was a poet and had composed many ghazals in Urdu. In his book he had composed poetic eulogies summing up the characteristics of each of the artists but, unfortunately, they were deleted by the publishers, In this books, he has mentioned what ragas he had learnt from his forty one Gurus. Even those who taught him just a song or two are also referred to in his book as his Gurus. Villayat Hussain had a big family to support; hence, he spent all his earning after them. When he was 30, both his elder brothers died and there was a great financial atrain on him, with the intention of helping him Pandit Bhaskarbuva Bakhle had organized a concert and had collected 1600 rupees. When he offered this sum to Vilayat Hussain,the latter said, "Sangeet Vidya is our real treasure and, by the grace of God, I have that in great abundance, hence the money should be paid to Tilak Swaraj Fund". Bhaskarbuva had to accede to this request and the money was presented to Tilak Swaraj fund. After the death of Bhaskarbuva one of his admirers often ustad to say "Sangeet ki sarita ab sook zai hai" (The river of music has now dried up). Sometime after this, Vilayat Khan sang in a concert which was attended by this person. He was so much charmed by the music that after the concert was over, he embraced Vilayat Khan and said that he was mistaken and that the river of music was still flowing with grace and serenity. In spite of his greatness Vilayat Hussain was a picture of humility. Whenever some listener praised him for his proficiency in layakari, he used to say, "Mere Pitaji bahot layadal they, lekin main to abhi tak lay ko dhundata hum" (My father had a great command over laya, but I am still groping in order to find it). During the last ten years of his life, Vilayat Hussain Khan was appointed a "Salahkar" (Adviser) by the A.I.R. at Delhi, where he died on 18-5-1962.I have grave doubts whether we shall ever find a musician of his calibre and stature.

पं.हलदनकर जी का समापन समारोह का अध्यक्षीय उद्‌बोधन

आगरा घराने के गुरूशिष्य अनेक बार एकत्र हुए हैं किन्तु आगरा घराने पर इससे पूर्व इस रूप में सेमिनार नहीं हुआ है। आगरा घराने के विद्वज्जन गायक सब एक जगह मिलकर चर्चा कर चुके हैं, बंदिशों का आदान-प्रदान किये हैं और गाना बजाना हुआ है किन्तु शासकीय स्तर पर आगरा घराना सेमिनार ऐसा प्रथमतः हुआ, सफल हुआ और सार्थक हुआ इसलिये खैरागढ़ युनिवर्सिटी अभिनंदन की पात्र है। ग्वालियर में डॉ.बांगरे ने ग्वालियर घराने का बहुत बड़ा सेमिनार करवाया, भोपाल में जयपुर घराने पर भारत भवन में सेमिनार हुआ, मंसूर प्रसंग में भोपाल में म.प्र.कला परिषद ने सेमिनार किया, इसी तरह भिंडी बाजार, सहसवान, किराना, पर कलकत्ता में भी काम हुआ है। लेकिन आगरा पर सेमिनार अभी तक होना चाहिये था वो क्यों नहीं हुआ यह चिन्तनीय है और खैरागढ़ युनिवर्सिटी ने ऐसा अभूतपूर्व काम किया है इसलिये इन्द्राणीजी एवं वीणाजी एवं सभी सेमिनार के आयोजक बधाई के पात्र हैं और व्यक्तिगत रूप से मेरे आशीर्वाद उनके साथ हैं।

दरअसल बात यह है कि आगरा घराने के उस्तादों में नम्रता बहुत ज्यादा है। एक बात कुछ अन्य घराने में दिखती है कि उसके शिष्यवर्ग, एक दूसरे को बढ़ा चढ़ाकर पेश करने के लिये प्रयास करते हैं। इस कारण आलोचना, प्रत्यालोचना, आत्मविश्लेषण, समालोचना का अवसर वहाँ प्रायः नहीं है। पर आगरे में स्तरीय को ही मान्यता है। कम स्तर वालों को मौका या मान्यता कम है इस कारण जो कुछ है उसी को आँख मूँदकर अंतिम मान कर कर्तव्य की इतिश्री आगरा में नहीं समझी जाती है। अन्य घराने में अपने घराने की स्टाईल छोड़कर दूसरी स्टाईल एडॉप्ट करके भी कुछ कलाकार उसी पुराने घराने के प्रतिनिधि के रूप में स्वयं को मानकर उसका लाभ ले रहे हैं। इससे घराने का नुकसान है, और विद्यार्थी वर्ग में भ्रान्ति है कि ये अमुक घराने के हैं पर इनके गाने में तो अमुक घराने का कोई अंग/छाप नहीं है। ये गाना तो अमुक का है। उन्हें क्या जवाब दें ? जरा सोचिये हम जो कहते हैं वह अपने या अपने घराने के लिये नहीं बल्कि घराने के बुजुर्गों ने जो ज्ञान एकत्र कर रखा है कहीं वह लुप्त ना हो इसलिये जी टूटता है। आगरा घराने में एक स्वस्थ परंपरा रही है आत्म विश्लेषण, आत्म सुधार एवं आपसी चर्चा द्वारा अधिकाधिक ऊँचे जाने की। यह भी सच है कि आगरा की है

शैली उठाने के लिये ज्यादा प्रतिभा, ज्यादा परिश्रम व ज्यादा समय चाहिये। धैर्य विहीन बच्चे इस की अपेक्षा तुरंत फुरंत तैयार होने वाली स्टाईल पकड़ लेते हैं ।आगरा घराने में उस्ताद फैयाज खाँ का गाना दैवी गाना था। उनका इतना नाम हुआ, इतनी प्रसिद्धि हुई कि बाकी लोग उनके बराबरी के होते हुए भी पीछे रह गए । दूसरे एक अप्रतिम गाना देखने सुनने के बाद अपने गानों की अपने ही मुँह से प्रशंसा करने की आगरे में प्रथा नहीं थी न अब है। जबकि बाकी जगह स्व-स्तुति के बौछार का रिवाज होने से आम लोगों में आगरा के बारे में गलत धारणा बढ़ती गई। फैयाज खाँ साहेब के निधन के बाद उनकी अत्यन्त वृद्ध अवस्था में रेकॉर्ड का गई रेकॉर्डस को प्रमाण मानकर कुछ लोगों ने इसे ही आगरा गायकी कहकर उपहास का प्रयत्न किया। खास करके अति विलंबित लयवाले और बिना घराने के लोगों ने। जिन्हें राग विस्तार केवल मीरखण्ड से आता था। इधर कुछ दोष आगरा घराने के उस्तादों का भी है जो समय की माँग के साथ बदलने को राजी नहीं। विद्या को किसे सिखाना है, यह मापदण्ड पुरानी पद्धति से ही चलता रहेगा तो नए युग के साथ कदम मिलाने में कठिनाई होगी। पुराने उस्ताद 5-6 वर्ष परखने के बाद ही घराने की खड़ी कड़ी तालीम देते थे। आगरा घराने के राग, बंदिशें, शैली मैं युवापीढ़ी को सिखा रहा हूँ। मुझे युवा वर्ग पूरा-पूरा साथ देकर समर्थन दे रहा है। गायकी के प्रचार-प्रसार के लिये और क्या चाहिये ? यहाँ उपस्थित सभी विद्यार्थियो से, शिक्षकों से मेरा आग्रह है, अनुरोध है कि आगरा घराने के सिद्धांतो को वे केवल घराने के लिये ना समझे। उसे आप अपनाकर विद्यालयीन परीक्षा में भी उपयोग कर अपने गाने को सुन्दर बना सकते हैं।-

विद्यालयों में संगीत शिक्षण पद्धति प्रारंभ करने वाले पं.भातखण्डेजी भी फैयाजखाँ को सबसे ज्यादा मानते थे। विद्यालय के विद्यार्थियों को आगरा घराने के उस्तादों का गाना सुनने भेजते थे। जयपुर घराने की केसर बाई केरकर ने अपने जीवन के उत्तरार्ध में फैयाजखाँ का अनुकरण कर अपना गाना सुधारा था और वो साफ सबके सामने कहती थी-''अरे भाई आप लोग क्या कर रहे हैं ? फैयाज खाँ साहेब का गाना मैंने उठाया आप पीछे क्यों है ? उठाइये इसे। वामनराव देशपाण्डे जी मेरे गुरूभाई हैं। उन्होने घरंदाज गायकी पुस्तक लिखकर उसमें जयपुर घराने को सबसे श्रेष्ठ साबित करने का प्रयास किया। मैं नहीं कहता जयपुर उत्कृष्ट नहीं। उसमें कुछ तत्व, लय एवं प्रवाह अत्यंत महान

। पर आगरे को नीचा कहकर उसे बड़ा बताना अन्यायपूर्ण है, ये मेरा कहना है। मैंने मिलनोत्सुक दो तानपूरे ग्रन्थ प्रकाशित कराया और उसमें वामनराव के मतों का संपूर्ण समूल खण्डन किया। जयपुर की कमी भी बताई। वामनराव ने वह ग्रन्थ गुरू मोगूबाई को पढ़वाया। जानबूझकर। ताकि वो मुझे कुछ कहें, गुस्सा करें। एक दिन मैं उनके घर ऐसे ही मिलने गया। तो माई ने ही चर्चा शुरू की "अरे बबन तुमने किताब-विताब लिखी है मैने सुना।" मैं चुप रहा और विषय बदलना चाहा। मुझे पसीना छूटने ही वाला था, कि माई के वाक्य ने मानों मेरे ऊपर ठंडे पानी की फुहार छिड़क दी। वो बोली "बबन उसमें जो कुछ भी लिखा है मैने पढ़ा। तुमने सब सही लिखा है। एक भी बात गलत नहीं है।" बस मेरा तो मानो एक-दो तोला खून बढ़ गया मुझे अब किसी के सर्टिफिकेट की जरूरत महसूस नहीं होती। जयपुर घराने की प्रतिनिधि ने जब आगरा को श्रेष्ठ कहा तो उतनी मान्यता तो आगरा वाले खुद भी दें तो कम है। खैर जो हुआ सो हुआ। अब हमें आगे देखना है। आज की पीढ़ी के संगीत सीखने वाले विद्यार्थी ज्यादा बुद्धिमान हैं। उनके पास सुविधा पैसा और साधन हैं। अब वे एक बात यदि ठान लें कि उन्हें उच्चस्तर का गाना ही गाना है तो उनके लिये आगरा घराने की पुस्तक, कैसेट और गुरू सभी हैं। यदि कोई कम मैटर में जैसे-तैसे महफिलें मारकर ईश्वरी प्रतिभा के आधार पर गलेबाजी से नाम पैसा कमा लेता है तो कुछ समय चल जाता है। पर जिस दिन वो खुद उससे ऊबने लगेगा, तब कहाँ जाएगा ? तब उसे घराने के बुजुर्गों ने जो कुछ साधकर रखा है उसका आश्रय लेना पड़ेगा। जनरल पब्लिक की 1000 वाहवाही से जानकार, गुणिजन और बुजुर्ग की एक शाबाशी लाख गुनी होती है। उसे पाने के लिये पुराने जमाने के युवा गायक तन मन धन से जी जान लगा देते थे। आजकल के विद्यार्थी भी उसी आदर्श को सामने रखेंगे तो मैं समझता हूँ संगीत का कल्याण तो होगा ही, उन्हें स्वयं भी संतोष मिलेगा। तो आजके युवा विद्यार्थी भी इन आदर्शों पर चलकर लौकिक लाभ भी साध ही लेंगे। आज संगीत क्षेत्र में भयंकर कॉम्पिटिशन बढ़ गया है। इसलिये बिना योग्य तालीम के 90 में 10 तालीम वालों का गाना अलग से दिख जाता है और उन्हें यश भी मिल रहा है।

आपको भी आपकी प्रतिभा, मेहनत और लगन से सब मिले ऐसी मेरी शुभेच्छा है।

विश्वविद्यालय के गायन विभाग द्वारा दिनांक 22 एवं 23 फरवरी 2001 को आगरा घराना पर एक सारगर्भित परिचर्चा आयोजित हुई। इसमें देश के कई सुप्रसिद्ध संगीतज्ञों ने भाग लिया। मुझे भी इस परिचर्चा में एक पर्यवेक्षक के रूप में आमंत्रित किया गया था। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उक्त परिचर्चा में विभिन्न विद्वानों द्वारा अभिव्यक्त विचारों को परिचर्चा की निदेशक डॉ.वीणा विश्वरूप पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने जा रहीं हैं। इससे संगीत के जिज्ञासुओं को आगरा घराने की गायकी की सूक्ष्मतम बातों को समझने में मदद मिलेगी। इस हेतु मैं उन्हें साधुवाद एवं अपना आशीर्वाद देता हूँ।

Dr.R.S. JAISWAL
Prof. & Head Deptt. of Musicology &
Director U.G.C. Refresher Course Centre.

Date : 25/3/01

मैं आपका आभारी हूँ कि आपने मुझ जैसे छोटे सुरमुरीद, सुर के गुलाम को यहाँ बुलाया, मुझे इस लायक समझा, सम्मानित किया और खैरागढ़ बुलाया। मैं दिल से कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। इस व्यासपीठ पर उपस्थित परमश्रद्धेय आगरा घराने के तपस्वी एवं भाई-बहनों। आगरा घराने पर आयोजित इस सेमिनार में प्रत्येक कलाकार विद्वान व चिन्तक ने अपने-अपने विचार अपने-अपने नजरिये से प्रस्तुत किये। मेरा बड़ा ज्ञानवर्धन हुआ। बहुत कुछ सीखने को मिला। इस घराने के बुजुर्ग पं. हलदणकरजी एवं पं. मुखर्जी साहेब ने जो सुर एवं शब्द लय एवं भाषा से जो ज्ञान यहाँ बाँटा वह मेरे लिये बहुत बड़ा खजाना बन गया है। इस पर जो अल्टिमेट जो मुझे और अमूल्य चीज मिली है,वह पंडित कुमार दादा के रिकॉर्डिंग का संकलन है। यह तो भारत भर में घूमने पर भी नहीं मिलेगा, यहाँ सहज उपलब्ध हो गया, मानों गरीब याचक की झोली में हीरे पड़ गए हों।

इन सारे संकलनों को अमूल्य समझिये। यह हमारी धरोहर है, पूंजी है। इस पूंजी के माध्यम को हम सूत्रस्थ रूप में लेकर उसके माध्यम से विराट की ओर अभिमुख होकर उन्नत हो तो यह इस सेमिनार की फलश्रुति है ऐसा मैं मानता हूँ। आगे के समापन समारोह में और भी ज्ञानवर्धन मेरा होगा। आपको पुनः आभार व्यक्त करता हूँ। खैरागढ़ विश्वविद्यालय जैसी संगीत की तपोभूमि पर पुनः आने की मेरी इच्छा पूरी होगी यह आशा है। जैसा भी मैं हूँ-आप जब भी हुकुम देंगे मैं हाजिर रहूँगा, धन्यवाद।

बाला साहब होले

पत्रकार एवं कला समीक्षक,लोकमत,नागपुर

अन्तर्दृष्टि

आचार्य कामता प्रसाद त्रिपाठी 'पीयूष'
(प्रवाचक संस्कृत साहित्य), खैरागढ़

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली की दया से यत्र-तत्र-सर्वत्र परिसंवाद के सत्र आयोजित होते रहते हैं किन्तु उन आयोजनों में जिज्ञासु श्रोताओं की संख्या प्राय: क्षीण रहती है। कभी-कभी तो केवल आलेख पढ़ने की प्रतीक्षा में रत कतिपय विद्वज्जन ही बैठे हुए दृग्गोचर होते हैं। एक उबाउ और बोझिल माहौल में यथा-कथंचित औपचारिकतायें पूरी की जाती हैं और उसी में परिसंवाद के साथ ही उसके उद्देश्यों की भी इतिश्री हो जाती है।

समीक्ष्य परिसंवाद उक्त कटु यथार्थ का अद्भुत एवं अभीष्ट अपवाद सिद्ध हुआ। उद्घाटन से समापन पर्यंत जागरूक एवं गुणग्राही कलानुरागियों की अभीष्ट उपस्थिति में नवीन ज्ञान की स्वर्णिम रश्मि धारायें निष्यंदित होती रहीं। सारगर्भित आलेखों का वाचन हुआ। साकूत चर्चा हुई। तथ्य की पुष्टि में स्वर, लय, ताल से समन्वित आगरा घराने की रसमयी गायिकी के मनोरम नमूने प्रस्तुत किए गए। ज्ञान का गाम्भीर्य भी स्वरों की महिमा से रसमय हो उठा। ऐसा कम होता है।

ताजमहल के अनुकृति के अनुरूप रचित रूचिर मंच पर अपनी विविध विशेषताओं के साथ आगरा घराना बा खैरियत खैरागढ़ में साकार हो उठा। प्रारंभ से ही एक उदार दृष्टि की सृष्टि हुई। स्वनाम धन्य पं. हलदनकरजी एवं पं. कुमार मुखर्जी के सोदाहरण व्याख्यानों ने आगरा घराने के समग्र इतिहास को मूर्त रूप प्रदान किया। आमंत्रित मान्य मनीषियों ने गायकी के सूक्ष्म तत्वों की ओर संकेत किया। इस प्रकार सरस सुरीले वातावरण में परिसंवाद चरितार्थ हुआ। आशा है भविष्य में भी इस तरह के महिमामय, उद्देश्यपरक परिसंवाद आयोजित होते रहेंगे जिससे प्रगति के लिए उत्कंठित आगामी पीढ़ी अपने प्रेरणादायक अतीत पर गर्व कर सके। परिसंवाद एवं पुस्तकाकार प्रकाशन के लिए कुलपति एवं निदेशिका के प्रति बहुश: साधुवाद स्वयमेव अंतर्गुन्जित हैं।

सुस्वरा: संतु सर्वेपि ----

कामता प्रसाद त्रिपाठी

प्रचलित मान्यता के अनुसार ख्याल गायकी का आगरा घराना अब तक एक लय प्रधान गायकी के रूप में प्रसिद्ध रहा है। इस धारणा का खण्डन करने और आगरा घराने को उसके संपूर्ण रूप में देखने की दृष्टि से उक्त संगोष्ठी संगीत के जिज्ञासुओं के लिये विशेष उपलब्धि रही है। आगरा घराने के मूर्धन्य कलाकार, विद्वानों ने इस संगोष्ठी में अपने सोदाहरण व्याख्यानों के माध्यम से इस घराने को तात्विक रूप में समझाने का सफल प्रयास किया है। संगोष्ठी में कलाकारों की विद्वत्ता और विद्वानों की कलासाधना एक-दूसरे पर हावी होने का प्रयास करती रही।

आगरा घराने की ऐतिहासिकता पर विचार करते समय प्रेक्षकों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया कि मौलिक परंपरा से ज्ञात किंवदंतियों और अतिरंजनपूर्ण वृत्तान्तों में से प्रामाणिकता और सुसंगति के आधार पर ही तथ्यों को ग्रहण किया जाना चाहिये। अन्यथा इतिहास नहीं, अपितु इतिहास के आभास का निर्माण होगा। ख्याल-गायकी के रूप में आगरा घराने को स्वयं खयाल शैली से अधिक प्राचीन मानना युक्तिसंगत नहीं हो सकता। आगरा घराने की गायकी को सामान्यतया लोग आज उ. फैयाज़ खाँ की गायकी के माध्यम से जानते हैं। इस संबंध में हमें यह ध्यान रखना होगा कि उस्ताद फैयाज खाँ को आज के ज्यादातर लोगों ने रिकार्डिंग के माध्यम से सुना है, प्रत्यक्ष रूप से नहीं। यह रिकार्डिंग भी उन दिनों की है, जब रिकार्डिंग की तकनीक आज की तरह विकसित नहीं हुई थी। संगोष्ठी में उपस्थित जिन वयोवृद्ध कलाकारों ने उ. फैयाज़ खाँ को प्रत्यक्ष रूप से सुना था, उनके मतानुसार उ. फैयाज़ खाँ की वास्तविक गायकी उससे कहीं अधिक प्रभावशाली थी, जैसी वह रिकार्डिंग के माध्यम से परिलक्षित होती है।

उ. विलायत हुसैन खाँ की बंदिशों में उपज अंग को उदाहरणों के द्वारा स्पष्ट करने का समुचित प्रयास किया गया। पं. बबन हल्दनकरजी ने उदाहरण देते हुए वजनदारी, संक्षिप्तता, अमूर्तत्व, सहजता, राग की शुद्धता और राग की प्रकृति जैसे तत्वों को ख्याल गायकी के मानदण्डों के रूप में स्थापित किया। ये तत्व किसी भी गायकी को भली प्रकार समझने के लिये उपयोगी कारक सिद्ध हो सकते हैं। पं. कुमार मुखर्जी ने प्रकृति के अनुसार राग के उच्चार भेदों को स्पष्ट किया।

पं. रामाराव नाईक के गायन की जो रिकार्डिंग संगोष्ठी में बजाई गई उससे आगरा घराने पर ध्रुपद के प्रभाव को भली भांति स्पष्ट किया जा सका। पं. कुमार मुखर्जी की उदारतापूर्ण घोषणा का लाभ उठाते हुए विश्वविद्यालय को इस दिशा में प्रयास करना चाहिए कि उनके पास संग्रहित दुर्लभ रिकार्डिंग्स की डबिंग यथाशीघ्र विश्वविद्यालय में मँगवाई जा सके। सामान्य रूप से ख्याल गायकी और विशेष रूप से आगरा घराने को समझने की दृष्टि से इन रिकार्डिंग्स का शैक्षणिक महत्व है तथा ये संगीत की भावी पीढ़ियों के लिए भी उपयोगी हो सकता है।

शैक्षणिक क्षेत्र में संगोष्ठी के कुछ स्थापित मानदण्ड हैं। इन मानदण्डों की दृष्टि

से आगरा घराने पर आयोजित उक्त संगोष्ठी में कुछ प्रसंगों में शिथिलता अवश्य प्रतीत हुई तथापि उपलब्धियों को देखते हुए यह कमी नगण्य रही। वैसे भी संगोष्ठी के मानदण्डों को संगीत के क्षेत्र में ज्यों का त्यों लागू करने की स्थिति अभी बन नहीं सकी है। किसी हद तक व्यवहारिक बने रह कर ही संगोष्ठियों से ज्यादा लाभ उठाया जा सकता है। संगीत के विद्वान कलाकारों के समागम और विचारों का लाभ उठाने के लिये ख्याल के अन्य घरानों तथा संगीत की अन्य विधाओं में भी इस तरह की संगोष्ठियाँ पुनः-पुनः आयोजित की जानी चाहिये। राष्ट्रीय स्तर पर इस कर्त्तव्य का निर्वाह करना इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय का दायित्व है और यह पुण्य कार्य करने के लिये खैरागढ़ एक उपयुक्त स्थल है। सभी आयोजक साधुवाद के पात्र हैं।

डॉ. अनिल ब्यौहार
विभागाध्यक्ष, संगीत शास्त्र

मैं एक संगीत रसिका भी हूं। इस कारण संगीत का इतना ही अभ्यास, घर परिवार देखते हुए, कर पाई हूं कि जिससे राग ताल एवं गायकी का आनंद उठा सकूं। आगे पढ़ने की इच्छा के साथ सौ. वीणाजी के पास गई थी। उन्होंने मुझे संयोगवश उसी समय सम्पन्न होने जा रहे आगरा घराना- सेमीनार के लिए कुछ महत्वपूर्ण कार्य सौंपे। मुझे बहुत खुशी हुई कि घराने के सर्वश्रेष्ठ चार गायक मेरे घर रूकने आये। इस निमित्त उनका सत्तसंग, चर्चा, श्रवण एवं आर्शीवाद का मुझे लाभ मिला। मैंने दो दिनों तक सेमिनार ध्यान से देखा, मुझे जो बातें समझ में आई वह एक सामान्य श्रोता, रसिक और दर्शक के रूप में दे रही हूं :-

1. घराने के इतने बड़े दिग्गज प्रतिनिधि होते हुए भी पं. हलदनकर पंडित मुखर्जी आदि सभी कितने नम्र, सीधे-सीधे और बिना किसी लालसा के थे। 2. परंतु जब मंच पर बोलना और गाना शुरू करते थे तो सारी सभा को एक सेकंड में शान्त करके अपनी बात धारा प्रवाह कहते थे। उनके विचारो में कही कोई शंका नहीं थी। 3. विषय विशेषज्ञ अपने क्षेत्र का कितना अध्ययन कर चुके हैं कितना दीर्घ अनुभव उन्हें हैं और वे अपने घराने, संगीत और ग्रंथो को छोड़कर दूसरी कोई बात न घर में करते हैं, न बाहर, न मंच पर। मैंने सबसे व्यक्तिगत मिलने पर यह पाया। 4. विषय विशेषज्ञ आज की पीढ़ी के युवासंगीत विद्यार्थियों को सही मार्ग व सच्चा ज्ञान मिले इसलिये बहुत व्याकुल, उदास व कार्यरत दिखें। इन्हें सुनकर देखकर शिक्षा मिली कि मैं कुछ करूं और मैंने और डॉ. विश्वरूप ने खादिम हुसैन खाँ के ग्रंथ का अनुवाद प्रकाशन का संकल्प किया हैं। आगरा घराने में इतनी महान परंपरा है यह किसी को पूरी तरह समझ में ही नहीं आता, यदि आगरा घराना सेमिनार न होता। ईश्वर को लाख-लाख धन्यवाद कि उसने यह सेमिनार करवाया और मुझे उससे इतना ज्ञान प्राप्त करने का इतनी प्रेरणा पाने का सुअवसर दिया। सेमिनार के आयोजक एवं आगरा घराने के विशेषज्ञ सभी को मेरा हार्दिक धन्यवाद!

सौ. शैला गोवर्धन B.Sc., L.L.B. संगीत विशारद, विद

आज तक की मेरी संगीत यात्रा में मैंने जितने गायकों के साथ तबला बजाया, उनमें मुझे लगता है अधिकांश आगरा घराने के हैं। अड़तालीस मात्रा वाला ठेका पकड़ाकर हमें सुलाने वाले गायक वादकों की अपेक्षा चैलेंजिंग ठेका बजवाने वाले आगरा घराने के गायकों के साथ भीड़कर बजाने में मजा आता है। पं. बबनराव हलदनकर, पं. गजानन राव जोशी, पं. सी.आर.व्यास, पं. के.जी. गिन्डे, उ. युनुस हुसैन इत्यादि सभी के साथ बजाना अच्छा लगा। कलकत्ता में मैंने फरूखाबाद घराने के महान वादक उ. करामतुल्ला खाँ साहब से तबला सीखा, संगति करने का ढंग सीखा। इसका प्रदर्शन गायक के लय ताल के पक्केपन पर ही निर्भर करता है। केवल मिठास भरा ठेका कब तक चल सकता है ? हर घराने में सुर-ताल है, आगरा में भी है पर आगरा में उसका सामंजस्य तबला वादक और श्रोता को विशेष आनंद देता है। आगरा गायकी को सुनने से लगता है कि यह ध्रुपद शैली से प्रेरित और करीब है। मैं 1971 से खैरागढ़ में हूँ। मैंने सुना था कि प्रथम कुलपति पं. श्रीकृष्ण रातंजनकर के समय यहाँ भातखण्डे समारोह में सात दिनों तक अखण्ड रूप से तानपुरा चलता और गाना-बजाना होता था। मेरे सामने कुलपति पाण्डेयजी के समय भी खूब एक्टिविटीज़ हुआ करती थी। पं. चिंचोरेजी ने भी सीमित साधनों में खूब कार्यक्रम करवाये। अब का आगरा घराना सेमीनार कुछ अच्छे सार्थक कार्यक्रमों में से एक रहा। मैंने पं. हलदनकरजी के साथ बजाया। बहुत मजा आया। वे ताल-सुर-लय के पक्के कलाकार हैं। उनकी उपज इतनी उत्स्फूर्त और अकल्पनीय है कि तिहाई का अंदाजा लगाना कठिन होता है। अक्सर गायक ग्रीनरूम में ही तबला वादक को कह देते हैं ''भैया जरा सम्हाल लेना'' यह सुनकर आधा मूड तो वहीं चला जाता है। पर आगरे वाले कहते हैं -''जरा जमके'' तो कुछ मूड बनता है। तबला संगतकार ठुमरी के साथ बजाना पसंद करते हैं क्योंकि लग्गी लगाने का मौका मिलता है। परंतु ठुमरी गायक यदि लय छोड़ दे तो उसे ही सम पकड़वानी पड़ती है। ठुमरी गायकों के बाद आगरा के उस्तादों के साथ बजाना अच्छा लगता है। जरा होनी चाहिए दो-दो हाथ लड़ंत-भिड़ंत। बाकी लोगों की वाहवाही मिलने से आनंद तो होता ही है, पर पं. हलदनकर जी से आशीर्वाद स्वरूप एक वाक्य कि-''आज मुझे रामनाथजी गवा रहे हैं'' सुनकर गदगद हो गया। लगा जैसे तपस्या सफल हुई। उनके जैसे विद्वान सज्जनों से जब सेमीनार को आशीर्वाद मिल रहे हैं तो निःसंदेह सब अच्छा ही होगा।

पं. रामनाथ सिंह

हर एक दृष्टिकोण से यह आगरा घराना परिसंवाद अपने लक्ष्य में सफल रहा और अत्यंत उपलब्धि कारक भी। एक शैक्षणिक संस्थान में ऐसे आयोजन का महत्व और भी कई गुना बढ़ जाता है। संस्थानों में ऐसे दिशा दर्शक और सारगर्भित परिसंवादों का आयोजन किया जाना

नि:संदेह एक महती आवश्यकता है। इस परिसंवाद में हुए चर्चा सत्रों के दौरान सभी जिज्ञासुओं को अपनी शंकाओं के निवारण का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। घराने के महानतम संगीतविदों द्वारा किए गए इन शंका समाधानों से दर्शकों से दर्शकों और श्रोताओं सभी की मानसिक अवधारणाओं को सही दिशा निर्देश प्राप्त हुए, यह परिसंवाद बगैर किसी शको-शुबह के एक अत्यंत मज़बूत कड़ी साबित हुआ है या कहें कि एक मील का पत्थर बन पड़ा है।

नमन दत्त

मैं स्वयं ग्वालियर का हूँ। इस कारण गायन से सदैव सम्पर्क में रहा हूँ। अनेक गायकों की तबला संगति के कारण गाना कानों में गूँजता रहता है। आगरा घराना सेमिनार में जब उस शैली का गायन सुना तो उसकी अलग स्टाईल बहुत ही अच्छी लगी। खास करके पं. हलदनकरजी की। बोलों को जिस प्रकार मीठे से,होले से गाकर तपाक् से सम पकड़ते थे,तो एकदम लगता था जैसे बिजली कौंध गई। अप्रत्याशित विकट तिहाईयाँ,लयकारी ही क्या, पर जब वे बिना ताल की नोम् तोम् भी गाते थे तो उसमें भी लय ही लय भरी रहती थी। जब मुझे सेमिनार में मालूम पड़ा कि आगरा को बनने में ग्वालियर गायन का भी योगदान है,तो लगा कि ग्वालियर गायकी रूपी संगमरमर को लेकर आगरा वालों ने ताजमहल बना दिया। डॉ. वीणाजी का उत्साह ऐसा ही बना रहे। हम उनके सहयोग के लिए तत्पर हैं और ऐसा ही सेमिनार और ग्रन्थ वे बनाती रहें,ऐसी मेरी ईश्वर से प्रार्थना है।

प्रदीप मोघे

आगरा घराने पर हुआ परिसंवाद एक ऐतिहासिक परिसंवाद था, क्योंकि जिन महान अधिकारी कलाकारों ने शिरकत की उससे 'आगरा घराने ' की गायकी के समग्र पक्षों पर बड़ी गहराई से समझने का व चिन्तन करने का मार्ग प्रशस्त हुआ है। यह राष्ट्रीय परिसंवाद मेरे लिए एक यादगार क्षण रहेगा क्योंकि इतने बड़े कलाकारों के साथ तबला संगत का सौभाग्य मिला। इस संपूर्ण आयोज़न की सफ़लता के लिए मैं डॉ.वीणा विश्वरूप को बहुत बधाई देता हूँ जिनके अथक परिश्रम से यह राष्ट्रीय परिसंवाद पूर्णत: सफल रहा।

आगरा घराना लयताल पर प्रभुत्व देने वाला घराना कहलाता है।इनके कलाकारों के साथ संगत करते समय मुझे अनुभव हुआ कि उनका सम्पूर्ण गायन लय-ताल से ओत-प्रोत रहता है। नई-नई कल्पनाओं -विचारों का अविष्कार वे पूर्णत: लय-ताल के साथ करते हैं जिससे ठेका लगाने का आनन्द कई गुना बढ़ जाता है।

प्रवीण उद्धव

आगरा घराना सेमिनार –जैसा मैंने पाया.

डॉ. महेश मिश्रा, एम.डी.,चिकित्सक

संगीत नगरी में दीर्घ निवास के कारण सुर-लय , सुर-लय के साधक और सुर-लय की साधना स्थली संगीत विश्वविद्यालय से मेरा निकट सम्पर्क रहा। चिकित्सा क्षेत्र से जुड़ा रहने के कारण संगीत और विज्ञान / चिकित्सा का भी मन्थन होता रहा। आगरा घराने पर सेमीनार की सूचना के साथ मुझे मेरी छोटी बहन डॉ. वीणा ने जब निवेदन किया कि सेमीनार में 70 वर्षों से ऊपर के बुजुर्ग पधार रहे हैं तो उनके निवासकाल के दौरान मेरी एक चिकित्सक एवं एक रसिक के रूप में उपस्थिति प्रार्थनीय है , तो मैं इस सुन्दर आग्रह को टाल न सका। सेमीनार में पधारे पं. कुमार मुखर्जी साहब से मेरी लंबी बातचीत हुई। सेमीनार के सत्रों में उनका प्रभावपूर्ण व्याख्यान तथा पं. हलदनकर साहेब का गायन सुनकर लगा कि यह सब औरों से भिन्न है। पुराने जमाने की शैली का सुन्दर क्रमिक विकास होते-होते आज तक पहुंचा है। उसमें गायको की वैज्ञानिक दृष्टि का प्रभावोत्पादकता को दीर्घ एवं गहरा बनाने के लिए निश्चित रूप से उपयोग हुआ और आज भी हो रहा है। किसी विशिष्ट स्टाईल को सीखकर उसकी छाप श्रोताओं पर जमाना,उन्हें उसका अनुभव कराना एक चमात्कारिक,मनोरंजक,बड़ी रोचक बात है। खास कर संगीत के रसिक के लिए तो बहुत ही सोचने के लिए सामग्री देने वाली बात है। भारतीय संगीत की अपनी परंपरा है,वह अपने आप में पूरा विज्ञान है, मनुष्य के विकास क्रम में अनेकों विज्ञान स्फुरित हुए। विकास क्रम में अपनी विशेषताएं एवं विज्ञान के साथ मात्र प्रकृति का ही साथ नहीं अपितु बदलती परिस्थितियों में मनुष्य या जीव-जन्तुओं के शारीरिक एवं मानसिक संतुलन को अनुकूलित करना ही विज्ञान है। भारतीय रागों में संगीत के सुर ताल की व्यवस्था में आनन्द एवं भक्ति /समर्पण या तन्मयता /एकाग्रता यह पक्ष जितना मनुष्य को प्रकृति के साथ समरस होने या उसकी विषमताओं में शरीर के रख- रखाव पर अनुकूलन दिखाता है , वह अभी भी दूसरे संगीत में उतना प्रचलित नहीं मिल रहा है। मिशीगन विश्वविद्यालय के चिकित्सा विज्ञान विभाग में अपने प्रकाशित अध्ययनों से यह सिद्ध किया है कि भारतीय एवं पाश्चात्य लोक संगीत में मनुष्य के शरीर में होने वाले हार्मोन एवं उनकी उत्प्रेरक (केटेलिक)क्रियाओं में धनात्मक सुधार मिला है।

इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय में आयोजित परिचर्चा एवं कार्यशालाओं में उन मूर्धन्य विद्धानों का साथ मिला तथा विशेष रूप से कोलकता से आये श्री कुमार मुखर्जी साहब से लंबी बातचीत में संगीत की इन बारीकियों का विश्लेषण एवं तालमेल देखा वह अद्‌भुत है।

हमें चाहिये कि हमारी धरोहर की इस मूल्यवान बातों को सहेजने में अपनी सहभागिता दें एवं इन विद्वानों के साथ अपनी जीवन मूल्यों को श्रेष्ठ बनाने की इस विधि को प्रचलित एवं लोकोपयोगी बनाने में सहभागी बनें।

डॉ. महेश मिश्रा

आगरा घराने के बारे में बहुत कुछ सुना था। मेरे दादाजी पं. ठाकुर जसदेव सिंह जी जिन्हें विश्वविद्यालय ने मानद् डिलिट् की उपाधि भी दी है, आगरा घराने के उ. फ़ैयाजखाँ के बहुत प्रशंसक थे। पं. भातखण्डेजी का भी उन्हें बहुत समय तक सान्निध्य प्राप्त हुआ था। पं. भातखण्डेजी के कारण ठाकुर साहब को इस घराने की अनेक महत्वपूर्ण जानकारियाँ मिलती थी। विद्यार्थियों को कोर्स के अनुसार आगरा घराने का वर्णन करके पढ़ाया जाता है परंतु सही-सही जानकारी सेमिनार के कारण ही मिली। आगरे के दो महान कलाकार पं. हलदनकर व पं. मुखर्जी का प्रत्यक्ष गायन और पुराने उन लोगों का गायन सेमिनार में सुनने को मिला, जो शायद कहीं नहीं मिलता। सेमिनार में देखने-सुनने का लाभ मिलने के अतिरिक्त उसकी तैयारी करने में प्रत्यक्ष कार्यों से जुड़े होने के कारण सेमिनार अपना-अपना सा लगा। ऐसे सेमिनार होते रहने चाहिए। सभी को उसमें बहुत फायदे होते हैं। हमारे गायन विभाग में सबसे ज्यादा विद्यार्थी पढ़ते हैं। ध्रुपद, ठुमरी, ख्याल सब विधायें हैं। इन्हें आगरा व अन्य घराने कैसे गाते हैं, यह सेमिनार से ही पता चलेगा। हमेशा ऐसे सेमिनार डॉ. वीणाजी करवाएँ और अब की तरह उसे ग्रन्थ रूप भी दें। ऐसी मेरी उनसे अपील है। सफल सेमिनार और ग्रन्थ के लिए मेरी ओर से हार्दिक बधाई।

उदय सिंह

आगरा घराने पर सेमिनार के वो 48 घण्टे मैं कभी भूल नहीं सकता। इन दो दिनों मै जो कुछ पाया वह वर्णनातीत हैं। शुरूवात में ही मुखर्जी साहब का भाषण, पं. हलदरकर जी का गायन सुनकर मेरे रोंगटे खड़े हो गए। आगरा गायकी को नजदीक से जानने समझने का अवसर मिला। आगरा घराने का चार्ट पढ़कर लगा कि यह घराना कोई अभी-अभी बुलबुले की तरह तुरंत बना हुआ या मशरूम की तरह उगा हुआ या काई की तरह जमा हुआ नहीं हैं। इसमें दीर्घ काल के विचार और गहरी सोच की बैठक हैं। सेमिनार के तुरंत बाद मैंने निश्चय किया कि इस गायकी का अंगीकार करूंगा। इसके लिए पं. हलदनकर साहब ने मुझे स्वीकृति देकर उपकृत किया है। सेमिनार में पं. मुखर्जी द्वारा लाई हुई रेकॉर्डिंग सुनक र लगा कि लय कितनी महत्वपूर्ण है। पंडित बबनराव, पंडित तैलंग, पंडित कशालकर सभी का गायन मुझे बहुत अच्छा लगा। ऐसा सेमिनार फिर से ज्यादा दिनों का होना चाहिये । मुझे कुछ कहने लिखने का अवसर मिला यह मेरा सौभाग्य है। सेमिनार समिति और वीणा दीदी को इसके लिए धन्यवाद !

सतीश इंदूरकर

आगरा घराना-141

उ.खादिम हुसैन खाँ पद्मभूषण सम्मान राष्ट्रपति द्वारा ग्रहण करते हुए

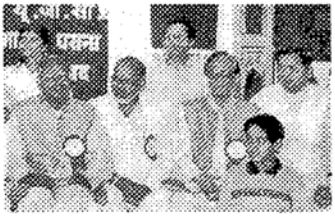

सर्वश्री दास, होले, बबनराव, त्रिपाठीजी, मानस

शराफत हुसैन खाँ

खादिम हुसैन
एवं मोघुबाई

विलायत हुसैन खाँ

आगरा घराना सेमीनार के लिए हमने मंच पर ताजमहल और उस्तादों के तैल चित्र बनाकर गौरव का अनुभव किया -
सुजीत प्रियदर्शन, हरेराम दास

''उस्ताद फैयाज खाँ साहब के रिकॉर्डों एवं कैसेटों की सूची''

(1) मोरे मंदिर अब लो नहीं आए -	जयजयवंती(तीनताल)		HH1
मैं कर आई	- पूरिया		
(2) झन-झन-झन-झन पायल बाजे	- नटबिहाग		H335
बनाओ बतियाँ चलो काहे को झूठी	- भैरवी(दादरा)		
(3) बन्दे नंदकुमारम्	- काफी		H793
फुलबन की गेंद न मैका	- जौनपुरी		
(4) आलाप	- ललित		H861
तड़पत हूँ 4 जैसे जल बिन मीन	- ललित (तीनताल)		
(5) मोरे जोबना पे आई बहार	- मिश्र तिलक कामोद(दादरा)		H1093G
नैनन से देखो एक झलक	- सुधरई(तीनताल)		
(6) आलाप	- दरबारी कान्हड़ा		H1156
सहेलरिया आई	- दरबारी (तीनताल)		
(7) पवन चलत सन-सन	- छायानट		H1331
मथुरा ना जाओ मोरे कान्हा	- पूर्वी		
(1) आलाप	- रामकली		N36050
उन संग लागी अंखियाँ	- रामकली		
(2) एरी मेरो नाहीं	- देसी धमार		N36614
बाजूबंद खुल-खुल जाए	- भैरवीं ठुमरी(पंजाबी ठेका)		

Lopo Records

राग भंखार, राग देस, राग शुद्ध कल्याण एवं राग जयजवंती।

H.M.V. Cassettes

(1) A. राग जयजयवंती -
विलंबित एकताल-'तिहार जिया की ये बात'
द्रुत ख्याल तीनताल-'नादान अंखियाँ लागी' 1988 HMV-STCO4 B7352

B. राग भूप - विलंबित एकताल' ए री सुन-सुन पिया का बात'
राग तिलक कामोद - 'परदेस न जइयो'-दादरा
1988 HMV-STCO4 B7352

(2) A. राग तोड़ी - आलाप एवं ध्रुवपद (चौताल)

B. राग बरवा - तीनताल-'बाजे मोरी पायलिया'
राग जौनपुरी - तीनताल-'मोरे कान भनकवा'
राग मारुबिहाग - तीनताल-'पड़ी मझधार'
1999 HMV-HC75 M 50028

आगरा एवं अतरौली घराने के कुछ प्रमुख गायकों के नाम, जन्म एवं देहावसान की तिथियाँ

क्र.	गायक का नाम	जन्म-मृत्यु	स्थान
(1)	घग्घे खुदाबख्श खाँ	(1790-1880)	आगरा
(2)	गुलाम अब्बास खाँ	(1825-1934)	--"--
(3)	कल्लन खाँ	(1835-1925)	--"--
(4)	तसदुक हुसैन खाँ	(1879-1946)	--"--
(5)	फैयाज खाँ	(1881-1950)	--"--
(6)	जंघू खाँ	(1781-1852)	--"--
(7)	शेर खाँ	(1805-1862)	--"--
(8)	नत्थन खाँ	(1840-1901)	--"--
(9)	विलायत हुसैन खाँ	(1892-1962)	--"--
(10)	बशीर खाँ	(1903-1960)	--"--
(11)	अनवर हुसैन खाँ	(1910-1966)	--"--
(12)	महबूब खाँ 'दरसपिया'	(1845-1922)	अतरौली
(13)	अता हुसैन खाँ	(1899-1980)	--"--

उस्ताद फैयाज हुसैन खाँ के कुछ प्रमुख शिष्यों के नाम एवं उनका जीवनकाल

(1)	पं. श्रीकृष्ण नारायण रातंजनकर	(1900-1974)	बंबई
(2)	पं. दिलीप चंद्र वेदी	(1901-1991)	दिल्ली
(3)	उ. अता हुसैन खाँ	(1897-1980)	कलकत्ता
(4)	उ. खादिम हुसैन खाँ	(1908-9 वें दशक में)	बंबई
(5)	उ. लताफत हुसैन खाँ	(1920-1980)	कलकत्ता
(6)	उ. शराफत हुसैन खाँ	(1930-1985)	दिल्ली
(7)	उ. अजमत हुसैन खाँ	(1913-1975)	बंबई
(8)	उ. गुलाम रसूल खाँ	जन्म तिथि अज्ञात मृत्यु-1986 ई.	बड़ौदा
(9)	श्री सुनील बोस	1914-1983	दिल्ली
(10)	उ. मौजूद हुसैन खाँ	1922-1992	पटना

संदर्भ ग्रंथों की सूची

1. संगीतकारों के संस्मरण-लेखक विलायत हुसैन खाँ, संगीत नाटक अकादमी नई दिल्ली,1959
2. Ustad Faiyaz Khan-Dipali Nag, Sangeet Natak Academi, New Delhim1985
3. Musicians I have met-S.K.Choubey, Lucknow
4. कुदरत रंग-बिरंगी धारावाहिक लेख(बंगला)-'देश' बंगला पत्रिका-लेखक कुमार प्रसाद मुखर्जी, कलकत्ता

आगरा घराना–शुद्धि पत्रक

पृ.क्र.	पंक्ति क्र.	अशुद्ध	शुद्ध
29	22	तरक्तार	तातार
29	30	क्राफ्ट	ग्राफ्ट
30	1	असुजुद्दोला	आसिफुद्दोला
37	36	find	fine
39	13	maand	meend
39	35	it	if
39	42	tonal...	...structure of theBandish.This way of rendering has two distinct merits -
40	4	structural	structures
40	40	norma	norms
41	36	through	thorough
45	2	Dhang is	Dhang in
45	2	words of	words or
48	32	तराने अल्हैया	तराना अल्हैया
59	32	सुनके यह	यह सुनकर
79	17	उन्होंने यहाँ	उन्होंने कहा यहाँ
79	23	उसी	उस
79	23	बांधो	बाद में
79	24	बाप्रवन्द	बाजुबन्द
79	24	रोमांच हुआ।	रोमांच हुआ। उनकी
79	25	और आवाज कसाव	आवाज का कसाव
79	25	सुर का जबरदस्त	सुर का लगाव जबरदस्त
79	26	व्यक्तित्व का	व्यक्तित्व भी
80	2	उनकी	उनके
80	4	ठककुर	ठाकुर
80	10	आर पाने	पार पाने,
80	12	जितना हमारे	जितना खिलवाड़ हमारे
81	24	मतलब यह वह	मतलब यह कि
82	21	लगाइये	लगाइये।
91	10	Characters	Character ?

पृ.क्र.	पंक्ति क्र.	अशुद्ध	शुद्ध
93	10	'घोड'	'धोंडू'
93	15	4.लवंश दास	4. लवंग दास
94	14	निलबिंत	विलंबित
95	4	इस बात की	इस देश की
95	11	चाहते है	चाहते थे
95	11	रांतजनकर	रातंजनकर
95	17	हो युकि थी	हो चुकी थी
95	18	उरूताद	उस्ताद
95	22	रायपुर	रामपुर
95	24	घराने के	घराने,
96	1	संगीत विधा से	संगीत विधा को
96	14	लायबांट	लयबांट
108	10	चालीस	पर चालीस
112	4	प्रस्तुतिकरण	प्रस्तुतीकरण
112	24	प्रज्जवलित	प्रज्वलित
126	8	god fortune	good fortune
126	43	'no-tom'	'nom-tom'
127	1	Boldbat	Bolbat
127	44	three	thiee
129	2	Hit	His
129	32	rage ragas	rare ragas
129	34	Wizardm	wizard,
129	34	Table	Tabla
130	22	atrain on	strain on
130	31	often ustad	often used
131	27	आगरा की है	आगरा की
132	8	अंवस्था में रेकार्ड की	अवस्था में की
132	29	महान।	महान है।
137	26	उदास	उदार
138	5	भीडकर	भिड़कर
142	3	खादिम हुसैन खाँ मोघूबाई	उ.खादिम हुसैन खाँ , गान तपस्विनी मोगूबाई

आगरा घराना वंश

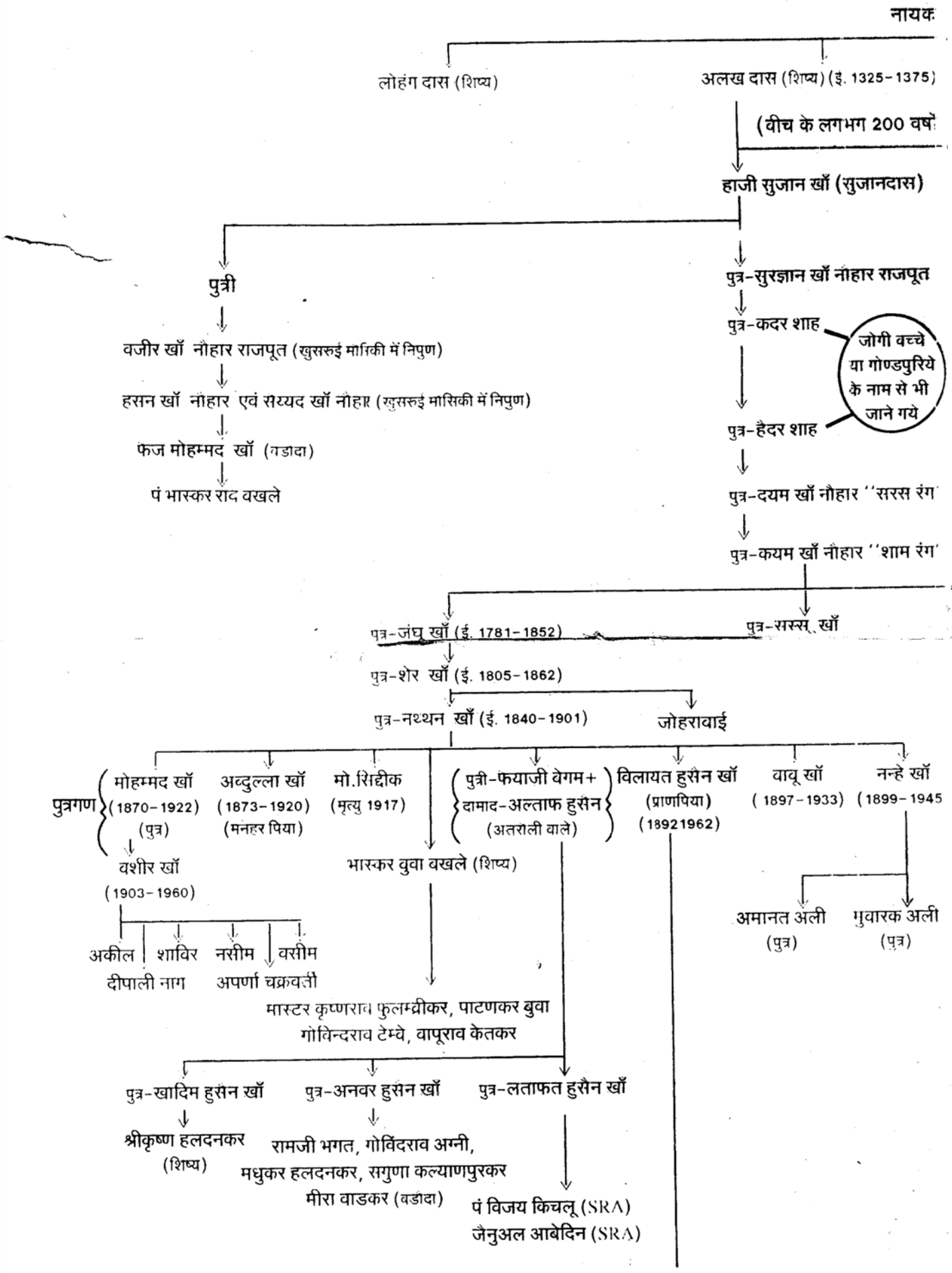
नायक
लोहंग दास (शिष्य)
अलख दास (शिष्य) (इ. 1325-1375)
(बीच के लगभग 200 वर्ष
हाजी सुजान खाँ (सुजानदास)
पुत्री
वजीर खाँ नौहार राजपूत (खुसरुई मासिकी में निपुण)
हसन खाँ नौहार एवं सय्यद खाँ नौहार (खुसरुई मासिकी में निपुण)
फज मोहम्मद खाँ (बडोदा)
पं भास्कर राव बखले
पुत्र-सुरज्ञान खाँ नौहार राजपूत
पुत्र-कदर शाह
जोगी बच्चे या गोण्डपुरिये के नाम से भी जाने गये
पुत्र-हैदर शाह
पुत्र-दयम खाँ नौहार "सरस रंग"
पुत्र-कयम खाँ नौहार "शाम रंग"
पुत्र-जंघू खाँ (इ. 1781-1852)
पुत्र-सस्सू खाँ
पुत्र-शेर खाँ (इ. 1805-1862)
पुत्र-नत्थन खाँ (इ. 1840-1901)
जोहरावाई
पुत्रगण
मोहम्मद खाँ (1870-1922) (पुत्र)
अब्दुल्ला खाँ (1873-1920) (मनहर पिया)
मो. सिद्दीक (मृत्यु 1917)
पुत्री-फयाजी बेगम+ दामाद-अल्ताफ हुसैन (अतरौली वाले)
विलायत हुसैन खाँ (प्राणपिया) (18921962)
बाबू खाँ (1897-1933)
नन्हे खाँ (1899-1945
वशीर खाँ (1903-1960)
भास्कर बुवा बखले (शिष्य)
अमानत अली (पुत्र)
मुबारक अली (पुत्र)
अकील
शाविर
नसीम
वसीम
दीपाली नाग
अपर्णा चक्रवर्ती
मास्टर कृष्णराव फुलम्ब्रीकर, पाटणकर बुवा
गोविन्दराव टेम्बे, बापूराव केतकर
पुत्र-खादिम हुसैन खाँ
पुत्र-अनवर हुसैन खाँ
पुत्र-लताफत हुसैन खाँ
श्रीकृष्ण हलदनकर (शिष्य)
रामजी भगत, गोविंदराव अग्नी,
मधुकर हलदनकर, सगुणा कल्याणपुरकर
मीरा वाडकर (बडोदा)
पं विजय किचलू (SRA)
जैनुअल आबेदिन (SRA)

एवं शिष्य परंपरा

गोपाल (अमीर खुसरो के समकालीन, अलाउद्दीन खिलजी का समय ई. 1296-1316)

- सनक दास (शिष्य)
- मलूख दास (शिष्य) - (सभी शिष्य जटाधारी गोसाई थे)

का इतिहास उपलब्ध नहीं है।)

- विचित्र खाँ नोहार राजपूत (मियाँ तानसेन के समकालीन अकबरी दरबार के कलाकार)
  (ई. 1556 से 1605)

(अकबरी दरबार के कलाकार)

जहाँगीर का काल ई. 1605-1627)

शाहजहाँ का काल ई. 1627-1658)

औरंगजेब का काल ई. 1660-1710)

मोहम्मद शाह रंगीले का काल ई. 1720-1750)

- पुत्र-गुलाब खाँ
- पुत्र-घग्घे खुदाबख्श (ई. 1790-1880)(हुसैन गवैय्या के नाम से भी प्रसिद्ध थे)
  - पुत्र-गुलाम अब्बास खाँ (ई. 1825-1934)
    - पुत्री-अब्बासी बेगम + दामाद-सफदर हुसैन (सिकंदराबाद वाले)
      - पुत्र-फयाज़ खाँ 'प्रेमपिया' (ई. 1881-1950)
    - पुत्री-कादरी बेगम + दामाद-कालेखाँ 'सरसपिया' (मथुरा वाले)
      - गुलाम रसूल (पुत्र)
        - (पुत्रगण) गुलाम अहमद, शमीन अहमद (सितार), सईद अहमद
          - (पुत्रगण) मोहसिन अहमद, एहसान अहमद (खादिम हुसैन खाँ के नाती), मुजीब अहमद
      - गुलाम नबी (पुत्र)
        - नन्हे खाँ, तालीब खाँ, नसीर खाँ
  - शिष्य-पं. विशम्भर दीन ''विश्वनाथ''
  - पुत्र-कल्लन ख़ाँ (ई. 1835-1925) → जोहराबा
    - पुत्र-तसद्दुक हुसैन खाँ+ 'विनोद पिया' (1879-1946)
      - पुत्र-असद अली खाँ
      - शिष्य-दीपाली नाग
    - ख़ादिम हुसैन ख़ाँ+ 'सजन पिया' (नाती व शिष्य)
      - शिष्य-पं. श्रीकृष्ण हलदनकर 'रस पिया'
      - शिष्य-श्रीमती ललित राव
      - शिष्य-गोविन्द राव अग्नि
      - शिष्य-मोहनराव चिक्करमाने
      - शिष्या-कृष्णा उदयावरकर
      - शिष्या-वत्सला कुमठेकर
      - शिष्या-नीलिमा किलाचन्द
      - शिष्या-ज्योत्स्नाबाई भोले
      - शिष्या-पद्मजा पुण्डे
      - भाई - लताफत हुसैन खाँ
    - अनवर हुसैन खाँ (नाती व शिष्य)
      - पं. कुमार मुखर्जी
    - विलायत हुसैन खाँ
    - फैयाज खाँ

दत्तूबवा,इचलकरंजीकर,वालक्कर,राममराठे,मुकुन्दराव घातेकर,ए.बी.अभ्यंकर , पं. रत्नकांत रामनाथकर,पं. गजाननबुवाजोशी, पं. जगन्नाथबुवा पुरोहित, पं. सीतारामफातरपेकर, पं. काणेबुवा, श्रीमती बाई नार्वेकर,सरस्वती बाई फातरपेकर, मोगुबाई कुर्डीकर, पं.वि.रा. आठवले,शिरीन डॉक्टर,कौमी लकडावाला,गुलूबाई टाटा,हीरा मिस्त्री,इंदिरावाडकर,वत्सला पर्वतकर,अंजनीबाई जांभोलीकर,श्यामला मझगांवकर,रागिनी फडकें,सुशीला वरदराजा,मालती पाण्डेय,सुशीला गानू,वासन्ती शिरोडकर,मेनका शिरोडकर,कश्मीर नरेश कर्णसिंह ,डॉ.सुमति मुटाटकर

जगन्नाथ बुवा पुरोहित के शिष्य :-

वसंतराव कुलकर्णी, रामभाऊ मराठे, माणिक वर्मा, काणे बुवा, जितेन्द्र अभिषेकी, सी.आर व्यास, यशवंत बुवा जोशी, सुरेश हलदनकर, प्रभुदेव सरदार

रत्नकान्त रामनाथकर के शिष्य :-

मीनाक्षी मुडबेद्री, वन्दना बखले, रंजना कश्यप, कमलाकर नाईक

गोविन्दराव अग्नि के शिष्य :-

प्रसाद सावकार, अंजनीबाई लोयलेकर

मोहनराव चिक्करमाने के शिष्य

अरुणाराव, सुमन वरेरकर

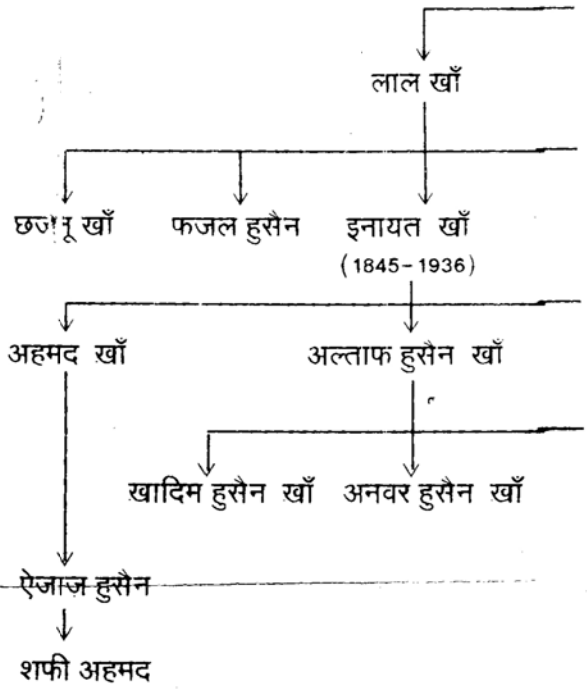

श्रीकृष्ण(बबनराव)हलदनकर के शिष्य :-

डॉ. अरुण कशालकर, शुभदा पराडकर, देवकी पंडित, राम देशपाण्डे, वृन्दा मुण्डकुर, मंजिरी आलेगाँवकर, समिधा यार्दी, पूर्णिमा धुमाले, कविता खरवंदीकर, शेखर महाजन, चन्द्रकान्त वेरणेकर, सुमेधा देसाई, कमलाकर नाईक, डॉ. वीणा विश्वरूप,

डॉ. हिमांशु विश्वरूप (वायलिन)

बन्दे हुसैन खाँ, गुलाम रसूल, अब्दुल कादर खाँ, हामिद हुसैन, गुलाम हुसैन (कथक), खुशीद खाँ (कलकत्ता), भीष्मदेव चटर्जी, पं. श्रीकृष्ण रातांजनकर, सोहन सिंग, अताहुसैन, डॉ. सुशील कुमार चौबे, शराफत खाँ, लताफत खाँ, दिलीप चन्द्र वेदी, असद अली बशीर खाँ, मलिका जान, ज्ञान गोस्वामी, मैजूद, अफजल हुसैन, डी.टी.जोशी, नरेन्द्रनाथ शुक्ला, स्वामी वल्लभदास, मोहनलाल दत्तात्रेय, जोशी मधुकर, काशीनाथ दत्रातर केण्डे (हैदराबाद), पाठक श्रीपाद शास्त्री धुलिया, लच्छू महाराज (कथक) श्रीमती डॉ.चंद्रचूड, मलकाबाई.

पं. श्रीकृष्ण रातांजनकर के शिष्य :- के.जीगिण्डे, एस.सी.भट, सुमति मुटाटकर, प्र.ना. चिंचोरे, दिनकर कैंकिणी प्रो. वी.जी.जोग(वायलिन), पं.के.आर. सुग्गे (वायलिन), प्रो.वी.सी.रानाडे(वायलिन), प्रो.ए.सी. चौबे

अतरौली घराना

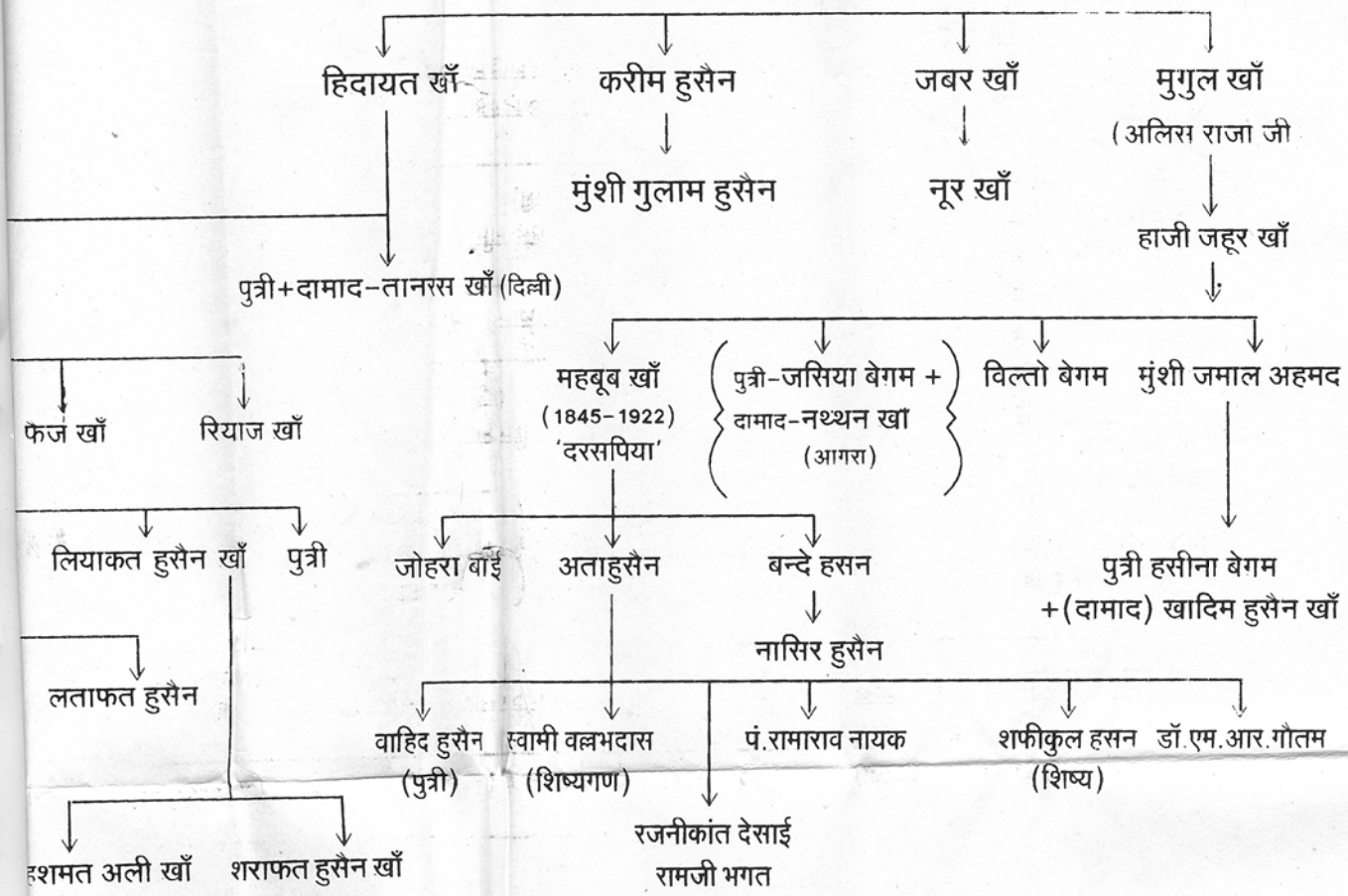

आधार :-

(1) Sajan Piya-A biography of Ustad Khadim Hussain Khan by Jayavanth Rao

(2) Ustad Faiyaaz Khan-by Dipali Nag

(3) संगीतज्ञों के संस्मरण-by उ.विलायत खाँ

(4) हिन्दुस्तानी संगीत के घरानों की चर्चा By Dr. S.K. Choubey

(5) हमारे संगीत रत्न-संगीत कार्यालय हथरस

(6) पं. बबनराव हलदनकर लिखित-जुह्राणहरे दोन तम्बोरे एवं मौखिक चर्चा, जानकारी

इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छत्तीसगढ़)
फोन+फैक्स : (07820) 34534, 34108